टिळक महाराष्ट्र विद्यापीठ

गुलटेकडी, पुणे-४११०३७

दूरशिक्षण विद्याशाखा

एम. ए. हिंदी

प्रश्नपत्र – १

आधुनिक गद्य

(H-101)

प्रस्तावना

दूरशिक्षा की व्याप्ती असीम है । इसने उन लोगों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिए हैं, जिन्हे उच्च शिक्षा का मौका नकारा गया । आज जब कि ग्यान का लगातार बढना समय के साथ रहेने के लिए अनिवार्य है, दूर शिक्षा तेजी से होते तकनिकी विकास की सहायता से सभी सीमाएं लांघ रही है। छात्र भले ही दुरी पर हों हमारें विद्वान प्राध्यापकों द्वारा रचित अध्ययन साहित्य उनको शिक्षा का एक परिपूर्ण अनुभव देगा।

एम.ए. हिंदी भाग १ का अध्ययन साहित्य आपको सौंपते हुए हमे बहुत खुशी हो रही है। इस वर्ष आप कुछ चुनिंदा लेखक और कविओं की रचनाओं की सहायता से आधुनिक गद्य तथा प्राचीन काव्य की झलकियों का अध्ययन करेंगे। विशेष साहित्यकार की भूमिका में आप उपन्यासकार प्रेमचंद की कुछ रचनाओं की जानकारी लेंगे। इसी के साथ आपको भारतीय एवं पाश्चात्त्य साहित्यशास्त्र से तथा आलोचना के तांत्रिक अंगों से भी परिचित किया जाएगा।

हमें पुरा विश्वास है कि यह अध्ययन साहित्य आपके अध्ययन में आपकी सहायता करेगा तथा परीक्षा में आपका सही मार्गदर्शन करेगा। हमे यह भी आशा है कि इस साहित्य के कारण आपमें प्राचीन काल के काव्य, आधुनिक गद्य तथा प्रेमचंदजी की अन्य साहित्य कृतियों के प्रति रुचि उत्पन्न होगी। साहित्यशास्त्र और आलोचना का अध्ययन आपमें साहित्य का परीक्षण करने की क्षमता को जागृत करेगा ।

हम विद्यापीठ के मा. कुलगुरू डॉ. दीपक तिलक, दूरशिक्षण विद्या शाखा के अधिष्ठाता श्री. रत्नाकर चांदेकर तथा कुलसचिव डॉ. उमेश केसकर इनके आभारी हैं जिन्होने हर कदम पर हमें प्रोत्साहित किया तथा हमारा मार्गदर्शन किया ।

अपनी व्यस्तता से समय निकालकर इस अध्ययन साहित्य को तय्यार करनेवाले डॉ. रजनी रणपिसे के प्रति भी हम बहुत आभारी हैं ।

आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएँ ।

प्रा. नीलिमा मेहता

विभागप्रमुख, दूरशिक्षण विद्याशाखा

शीर्षक

क्रम संख्या	शीर्षक	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	उपन्यास	विपात्र	(लेखक मुक्तिबोध)	1-25
2.	कहानी	आधुनिक हिंदी कहानी	(संपादक डॉ. दिनेश्वर प्रसाद)	26-43
3.	नाटक	ध्रुवस्वामिनी	(लेखक जय शंकर प्रसाद)	44-61
4.	निबंध	प्रिया निलकंठी	(लेखक कुबेरनाथ राय)	62-77
5.	रेखाचित्र/संस्मरण	अतीत के चलचित्र	(लेखिका महादेवी वर्मा)	78-90
		प्रश्नमंजुषा १ से ५ पुस्तकों की क्रमानुसार		91-110

१. उपन्यास

विपात्र
लेखक -मुक्तिबोध

उपन्यासकार मुक्तिबोध का जीवन

गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म जिला मुरैना में 13 नवम्बर 1917 की रात को दो बजे कुलकर्णी ब्राहमण माधवराज जी के घर हुआ ।

ऋग्वेदी कुलकर्णी ब्राह्मणों में किसी पूर्वज ने 'मुग्धबोध' या 'मुक्तिबोध' नाम का (दासबोध की तरह का) कोई आध्यात्मिक ग्रंथ संभवतः खिलजी काल में लिखा था। कालांतर में उसी पर वंश का नाम चल पड़ा ।

उनके पिता माधव पूजा-पाठी, न्यायनिष्ठ मगर बहुत दबंग और निर्भीक, कर्तव्य -कठोर और पाबंद राजभक्त थे । खासी धाक थी, रिश्वत नहीं ली, न पैसा कमाया, न जमा किया। अपनी आन पर जिए, मुक्तिबोध में जो अक्खड़ता थी वह पिता से उन्हें संस्कार रूप में मिली थी। उनकी माता-बुंदेलखंड की, ईसा गढ़ के किसान परिवार की थी।

मुक्तिबोध के परिवार मराठी का जो वंशवृक्ष बनता है वह निम्नलिखित है-
श्री वासुदेव ⇨ श्री गोपाल राव वासुदेव ⇨श्री माधवराव मुक्तिबोध ⇨श्रीमती अत्ताबाई ⇨सर्वश्री गजानन माधव मुक्तिबोध, शरच्चंद माधव मुक्तिबोध, वसंत माधव मुक्तिबोध, चंद्रकांत माधव मुक्तिबोध ।
शिक्षा- मुक्तिबोध ने जिस क्रम से शिक्षा प्राप्त की उसका विवरण निम्नलिखित है:-

1. उज्जैन, विदिशा, ममझरा, सरदारपुरा आदि-स्थानों पर प्रारंभिक शिक्षा।
2. सन् 1930, उज्जैन के माधव कॉलेज से ग्वालियर बोर्ड की मिडिल परीक्षा में असफल।
3. सन् 1931 में मिडिल परीक्षा में सफल।
4. सन् 1935 में माधव कॉलेज से इंटरमीडिएट।
5. इंदौर के होलकर कॉलेज से बी.ए. में असफल।
6. सन् 1938 बी.ए. परीक्षा में उत्तीर्ण।
7. सन् 1953 नागपुर विश्वविद्यालय से एम.ए.हिंदी।

नौकरी- मुक्तिबोध पूरा जीवन आर्थिक संकट से जूझते रहे और नौकरी के आत्मघाती चक्र में पिस-पिस कर आर्थिक आत्मनिर्भरता के मोह में इधर से उधर मारे-मारे फिरते रहे।
जुलाई, 1938-मिडिल स्कूल, वडणर।
नवम्बर 1938-शारदा शिक्षा सदन, सुजालपुर।

अगस्त 1939-दौलत गंज मिडिल स्कूल, उज्जैन ।
1942 मध्य उज्जैन में प्रगतिशील संघ की स्थापना ।
1943 मई-जून-विश्वबंधु, कलकत्ता।
1944 के अंत में इंदौर में राहुल जी की अध्यक्षता में फासिस्ट विरोधी लेखक कॉन्फ्रेन्स का आयोजन।
1945 के मध्य में वायुसेना में भर्ती के लिए बंगलौर सितंबर, 1945-'हंस' के संपादक मंडल में वारणसी नवंबर।
1946-डी.एन. जैन हाईस्कूल, जबलपुर 'जयहिंद' में दो माह महाकौशल गर्ल्स कॉलेज में हिंदी की कक्षाएँ।
अक्तूबर1948-सूचना तथा प्रकाशन विभाग, नागपुर
अक्तूबर1954-आकाशवाणी नागपुर-1 ।
मई 1955 से मासिक कॉन्ट्रेक्ट पर ।
अक्तूबर, 1956 'नया खून' का संपादन और 'सारथि' में भी कार्य ।
जुलाई 1958- दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांद गांव

उक्त विवरण से मुक्तिबोध के निरंतर चलते रहने वाले संघर्ष की झाँकी सांकेतिक रूप से मिलती है। स्पष्ट है कि आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए वह आजीवन भटकते रहे। उनके जीवन में आर्थिक कठिनाइयाँ हमेशा रहीं। स्वाभिमान एवं जीवन संघर्ष ऐसे दो तत्वों पर उनका व्यक्तित्व टकराता रहा ।

मुक्तिबोध के व्यक्तिगत एवं रचनाओं में दृष्टव्य बिन्दु-

मुक्तिबोध के व्यक्तित्व में जो तत्व थे, वे ही-उनकी रचनाओं में प्रतिबिंबित दिखाई देते हैं। वे बिन्दु-निम्नलिखित हैं-

(1) जुझारू प्रकृति- जीवन के संघर्षों से जूझते हुए, जीवन के अभावों से जूझते हुए, जीवन की विषमताओं, विसंगतियों से जूझते हुए भी मुक्तिबोध इतना विशद सृजन कर सके यह एक सुखद आश्चर्य है। जीवन मुक्तिबोध के लिए युद्ध ही था शायद गुरिल्ला युद्ध जिसे वे छापामार स्टाइल में लड़ भी लिया करते थे।

मुक्तिबोध आज के महाभारत के सात्यकि तथा संजय दोनों हैं और उनकी कविताएँ इस युद्ध को विभिन्न कोणों तथा स्थितियों से दिखाने वाले प्रत्यक्षदर्शी ब्यौरे हैं। मुक्तिबोध की कविताओं की थीम एक ही है संघर्ष- व्यक्तिगत तथा विराट स्तरों पर।

अपने छटपटाते हुए व्यक्तित्व को लेकर वे अकेले ही युग-जीवन की अंधेरी गुफाओं में, सघन जंगलों में घुस गए थे। पेचीदा, चक्करदार धूलिम तहखानों में गुजरते हुए, उनके हाथों से मानव प्रेम की दीप शिखा कभी नहीं बुझी।

(2) विद्रोही मानसिकता- मुक्तिबोध की मानसिकता का विद्रोह, समाज के वर्ग भेद के प्रति खेद प्रकट करने के माध्यम से सर्वाधिक हुआ है। जीवन में विविध अभावों के पुँज ने उनको विद्रोही बना दिया। यह अभाव स्नेह सहानुभूति का भी था और जीवन की संगतियों का भी था।

मुक्तिबोध बंधनों को तोड़कर जिए, उन सारे बंधनों को जो आम आदमी को पेट पालने के लिए स्वीकार करने पड़ते हैं। वे उनमें से नहीं थे जो सुखद-समझौते कर लेते हैं। उन्होंने अपने व्यक्तित्व की निजता एवं विशिष्टता के लिए सीमाओं को तोड़ा था। यह मात्र उनकी रूचि नहीं थी अपितु उनकी विवशता थी। कभी-कभी कवि अत्यंत कठोर निष्ठुर, निर्मम लगते थे, यह विद्रोह का ही रूप है।

(3) **वाम पंथी वैचारिकता एवं मार्क्सवादी चेतना**-वामपंथी साहित्यकार स्वयं को 'विशुद्ध मार्क्सवादी' चेतना से संपृक्त मानते हैं। इनके साहित्य में 'अतिवाद' तथा 'प्रतिक्रियावाद' भी समाहित हैं। सच तो यह है कि मुक्तिबोध ही अपने युग में मार्क्सवादी विश्व दृष्टि को समीचीन रूप में सांस्कृतिक तथा साहित्यिक स्तर पर प्रतिबिंबित कर सके। अन्यत्र 'कम्युनिस्ट आंदोलन' के अंतर्गत प्रविष्ट अतिवादी भटकावों और अलगावों से भी मुक्त रहे। इसलिए कि उन्हें अपेक्षित सर्वहारा वर्ग के मित्रवर्ग एवं शत्रु-वर्गों की सही पहचान थी। वे साहित्य व राजनीति पर होने वाले आक्रमणों, आधातों का चुटीला, पैना और करारा जबाव देते थे तथा 'सर्व समर्थ उच्च वर्ग' की शोषणबद्ध चालों का पर्दाफाश करके उनकी पोल भी खोलते थे। मुक्तिबोध की धारणा है कि समाज का प्रमुख क्रांतिकारी वर्ग, सर्वहारा है।

मुक्तिबोध ने मार्क्सवाद से यह सीखा कि पूँजीवादी समाज-व्यवस्था को बदले बिना क्या निम्नवर्ग, मध्य वर्ग और क्या श्रमिक वर्ग इनकी मूल समस्याओं का समाधान संभव नहीं। समाज को बदलने के लिए संघर्ष आवश्यक है। इस संघर्ष को चलाने के लिए क्रांतिकारी पार्टी का संगठन आवश्यक है यह बात स्पष्ट नहीं हो पायी ।

मुक्तिबोध के विचारानुसार मजदूर वर्ग एक स्वस्थ वर्ग है जिसमें मानसिक और शारीरिक दोनों प्रकार की शांति है।

(4) हताशा और आस्था का द्वंद्व- मुक्तिबोध के जीवन में आशाओं का विघटन पूर्वक समापन भी प्राप्य है तथा आस्थाओं का सम्यक उद्‌भावन भी ग्राह्य है। दो विरोधी भावों का पारस्परिक संघर्ष द्वंद्व का निर्धारक है। मुक्तिबोध के जीवन में ऐसे द्वंद्व की आत्मसाती प्रवृत्ति अत्यंत सशक्त रूप में पाई गई जिसने उनकी सृजन प्रवृति को भी प्रभावित किया। उनकी रचनाओं में द्वंद्व से उबरने की सतत चेष्ठा दिखाई देती है। यह द्वंद्व क्यों उत्पन्न होता है और कब उत्पन्न होता है, यह भी रचनाकार की रचनात्मक स्थिति से जुड़े हुए प्रश्न हैं।

मुक्तिबोध के जीवन में हताशा और आस्था का द्वंद्व सामाजिक और आर्थिक कारण से हूआ है। जिसके परिणामस्वरूप उनके सृजन क्षण कभी-कभी असामाजिक स्वप्न देखते हैं। उन्हें तनिक सा दु:ख भी असहनीय हो जाता है। मुक्तिबोध ने समाज के छोटे-छोटे दुखों एवं असुविधाओं का तीव्र निषेध अपनी रचनाओं में किया है।

उनकी प्रसिद्ध रचनाएं:-

गद्य

1) चाँद का मुँह टेढ़ा,
2) काठ का सपना,
3) सतह से उठता आदमी,
4) एक साहित्यिक की डायरी,
5) विपात्र

गद्य-निबंध लेख एवं समीक्षाएँ

1) 'कामायनी' एक पुनर्विचार,
2) भारत का इतिहास और संस्कृति,
3) सौंदर्य शास्त्र नए साहित्य का,
4) कविता का आत्मसंघर्ष ।

उनका सम्पूर्ण साहित्य 'मुक्तिबोध-रचनावली' के नाम से छः खंडों में प्रकाशित हैं।

मुक्तिबोध की रचनाओं में अभिव्यक्त विचार

मुक्तिबोध एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने जीवन के अंगों एवं आयामों पर चिंतन किया है। स्वयं वे निरंतर नई-नई विचार धाराओं के साथ जुड़े रहते थे। वे भारतीय पाश्चात्य दोनों प्रकार की साहित्य धाराओं के साथ परिचित थे। उनके पूरे व्यक्तित्व में चिंतक का रूप है। वैसे उन्हें 'मार्क्सवादी चिंतक' कहा जाता है। उनके काव्य में बार-बार'मार्क्सवादी' धारा के दर्शन होते हैं। उनकी रचनाओं को समझने के लिए मार्क्सवादी विचारों को समझना आवश्यक है। मुक्तिबोध जीवन में आए हुए व्यंग्य एवं विरूपता के लिए पूँजीवाद को जिम्मेदार मानते हैं। उनकी हर रचना शोषण के खिलाफ है। वे पूरी समाज व्यवस्था के साथ अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं। गलत व्यवस्था के प्रति रचनाओं में विद्रोह के भाव तो उनके अपने आप आ जाते हैं। उनकी दृष्टि से वर्तमान युग में मध्यवर्गीय जीव दयनीय होता जा रहा है। वह सुख सुविधाओं के लिए जीवन में झुकता है। मध्यवर्गीय मनुष्य स्थितियों के घेरे में फँसकर अपने जीवन में लाचार होकर सत्य की हत्या करता है। ये वो रचनाकार है जो सामाजिक अव्यवस्था, शोषण अत्याचार, षड़यंत्र, आतंक आदि के कारण क्रोधित एवं विचलित है। उनकी रचनाएं इसी मानक कथा से उपजी हैं। परन्तु जीवन की विरूपता भयानक चित्रण आएं तो भी हम उन्हें निराशावादी एवं पराजित मनोवृत्ति का नहीं मानते। कहीं पर तो उनके मन में विश्वास है, क्रांति एवं परिवर्तन पर उन्हें भरोसा है। यह आस्था सभ्य, शहरी लोगों पर आधारित नहीं है। वे क्रांति की आशा सर्वहारा वर्ग तथा किसान वर्ग पर आधारित हैं। उनकी रचनाएं विचारों के ठोस धरातल पर खड़ी हैं।

ये भावुक कवि नहीं हैं, न ही भावुक गद्य-रचनाकार हैं। आस-पास के कटु सत्य को जानकर विषम स्थितियों के बीच आत्मा,मूल्य, सत्य आदि को बचाने के लिए संघर्षरत रचनाकार हैं। पीड़ितों के प्रति उनके मन में करूणा, प्रेम हैं। शायद यही करूणा कवि की प्रतिभा भी है। आस-पास की कटु स्थिति को जानते हुए भी रचनाकार होने के बावजूद उनमें सरसता का अभाव नहीं हैं। उनकी रचनाओं मे प्रेम कविता भी मिलती है। कुछ सुन्दर दृश्य भी दिखाई देते हैं, जहां अलौकिक एवं अकलंकित सौंदर्य है, वहां उनकी लेखनीमृदु हो जाती है। जीवन के जटिल अर्थ को स्पष्ट करने की क्षमता मुक्तिबोध जी में है। उनके काव्य लेखन पर साहित्य धाराओं का प्रभाव परिलक्षित होता है। कहीं-कहीं पर उनकी रचनाओं में असंगत,परस्पर विरोधी चित्र गूढ़ रूप में प्रस्तुत होते हैं।

उपन्यास का शीर्षक
'विपात्र' (शीर्षक की सार्थकता)

किसी भी साहित्यिक कृति की पहचान उसके शीर्षक से हो जाती है। शरीर या देह में जो स्थान मस्तक का है, वही स्थान किसी रचना के शीर्षक का हुआ करता है। शीर्षक विशिष्ट रचना का नाम होता है।

नाम के बगैर चाहे वस्तु, व्यक्ति या विषय हो उनकी पहचान अधूरी रह जाती है। शीर्षक कलाकृति की पहचान है। साहित्य के क्षेत्र में रचनाओं के शीर्षक के बारे में कुछ मानदंड हैं, जैसे कि किसी भी रचना का शीर्षक योग्य, उचित और समर्पक हो। वह कथावस्तु के अनुरूप हो।

शीर्षक के बारे में यह कहा गया है कि शीर्षक यथा संभव संक्षिप्त या छोटा हो। कथा वस्तु के साथ पूरी तरह जुड़ा हो, अर्थात् कथा के अंत तक शीर्षक विषय वस्तु के संदर्भ में चलता हो।

शीर्षक की एक विशेषता यह भी है कि संक्षिप्तता के साथ शीर्षक में कौतूहल का एक गुण भी होना चाहिए। शीर्षक को पढ़कर रचना को पढ़ने की उत्सुकता, कौतुहल और उत्कंठा निर्माण होनी चाहिए। शीर्षक अगम्य, दुर्बोध या नितांत अपरिचित न हो। परन्तु बहुत बार ऐसा देखा गया है कि शीर्षक अपनी दुर्बोधता एवं अगम्यता के कारण कौतूहल का विषय बने हैं।

शीर्षक कथा वस्तु की छोटी-सी झलक दिखाने वाला हो, शीर्षक में कथा वस्तु का सूक्ष्म सा अंग झलकना चाहिए।

शीर्षक यदि लंबा भी है तो भी वह तब प्रभावकारी बन जाएगा जब वह सम्पूर्ण कथा-वस्तु के साथ जुड़कर अपने को मार्मिकता से व्यक्त करें ।

सर्व साधारण रूप से शीर्षक के इस प्रकार के गुण माने जाते हैं। लंबे, उबाऊ अर्थहीन, विसंगत शीर्षक बहुत बार रचनाओं को बाधा पहुँचाते हैं। कुछ मात्रा में रचना की सफलता

उपर्युक्त मुख्य विशेषताएं मुक्तिबोध के साहित्य में प्रतिबिंबित दिखाई देती हैं। इसके अतिरिक्त मुक्तिबोध की आंतरिक विशेषताओं पर दृष्टि डालना आवश्यक है।

मुक्तिबोध का आंतरिक व्यक्तित्व

मुक्तिबोध जितने मृदु, भावुक तथा उदार स्वभाव के थे, उतने ही आत्मकेंन्द्रित थे। प्रत्येक छोटी बात पर अटल रहकर जिद्दी स्वभाव के बने हुए थे। मानव जीवन के प्रति उनकी भावना करूण थी, उन्होंने कुंठा, जुगुप्सा, अभाव आदि को स्वयं जीवन भर भोगा था। वे विद्रोही व्यक्ति थे इसलिए किसी सामाजिक चीज से समझौता करने के पक्ष में नहीं थे। श्री के. पार्थ सारथी उनक सदंर्भ में कहते हैं "वह मात्र एक मनुष्य ही नहीं थे, वरन विद्वानों के बीच विद्वान, राजनीतिज्ञों में राजनीतिज्ञ, शिक्षकों में शिक्षक और अपने एकांत में भी और कार्य करते हुए भी पीड़ित मानव की समग्रता के रूप थे।"

मुक्तिबोध में विरोधी वृत्तियों के संकलन थे। उनके पास जीवन का गहन दर्शन था लेकिन जो स्वयं को जीने के किसी भी दर्शन के अनुकूल नहीं बना सके। वह निरंतर सोचते रहे कि दुख:दैन्य जैसी विषम परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास कैसे हो? फिर भी समाज में रहना उन्हें प्रीतिकर लगता था। वे इतने व्यक्तिवादी थे कि किसी पार्टी अथवा दल में सम्मिलित नहीं हुए। उनका व्यक्तिवाद ऐसा था जो स्वयं में सारे विश्व को समाए रखता है।

पाश्चात्य विचारक एवं चिंतकों तथा दर्शनिकों का गहरा अध्ययन मुक्तिबोध ने किया था। 1939 में उनका विवाह हो गया। घर की स्थितियों के कारण उन्हें उम्र के 29 वें साल में ही अध्यापक की नौकरी करनी पड़ी। उनका जीवन बाद में उलझ सा गया। पारिवारिक जीवन में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इन कठिनाइयों के साथ ही उनका साहित्यिक जीवन भी चलता रहा।

1943 में प्रकाशित 'तार सप्तक' में वे अपनी 16-कविताओं के साथ शामिल किए गए।

1945 में बनारस से प्रकाशित 'हंस' पत्रिका में भी कार्य किया।

मुक्तिबोध का जीवन एवं उनकी प्रतिभा को देखते हुए हम यह कह सकते हैं कि उन्हें जीवन की कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और कठिनाइयों के बीच रहकर भी उन्होंने अपनी तेजस्विता को कायम रखा। वे न केवल कवि थे अपितु अच्छे गद्यकार भी थे। गद्य की कई विधाओं में मुक्तिबोध ने अपनी प्रतिभा की झलक दिखाई है। काव्य और गद्य में वे निरंतर लिखते रहे थे। उन्होंने कई निबंध समीक्षाएँ लेख तथा उपन्यास लिखे हैं।

शीर्षक पर अवलंबित होती है। कथा वस्तु सुंदर और शीर्षक भी समर्पक है तो किसी भी रचना में चार-चाँद लग जाते हैं।

मुक्तिबोध का 'विपात्र' उपन्यास शीर्षक की दृष्टि से देखा जाए तो विचार करने योग्य है। यह 'विपात्र' शीर्षक आकार की दृष्टि से छोटा, संक्षिप्त और स्मरण में रहने वाला शीर्षक है। यद्यपि 'विपात्र' शब्द अधिक प्रचलित नहीं है तो भी यह शीर्षक नितांत अपरिचित भी नहीं है।

'विपात्र' जिससे दो अर्थ झलकते हैं-

1) पात्र -अर्थात् योग्यता
2) पात्रता अर्थात् योग्यता को नकारने का भाव अर्थात् अपात्र।

एक और अर्थ इस शीर्षक से प्रतीत होता है वह पात्र अथवा चरित्र। लेकिन ऐसे पात्र, ऐसे चरित्र जो सम्पूर्ण परिवेश में एक दूसरे के साथ विसंगत हैं। पात्रों की विसंगति को चित्रित करना पर्याय से सामाजिक विषमता को रेखांकित करना भी इस उपन्यास का उद्देश्य है। उस दृष्टि से यह शीर्षक उचित माना जाएगा ।

वर्तमान समाज में विषमताएँ विसंगतियाँ दिखाई देती हैं। समाज में अनेक भेद हैं, ऐसी विषम स्थितियों में आधुनिक युग का मानव जी रहा है। उसके जीने का धरातल एक दूसरे से भिन्न हैं। उसकी वैचारिक भूमि अन्य व्यक्तियों से अलग है। हर एक के जीवन की अपनी-अपनी विसंगतियां हैं लेकिन जीना तो सबको है। विसंगत पात्रों के बीच विसंगत स्थितियों में जीना 'विपात्र 'शीर्षक इसी भाव को अभिव्यक्ति देता है।

जो मनुष्य अपने ऊंचे विचार, ज्ञान, बुद्धि अनुभव इन सबको लेकर समाज में उतरता है वह महसूस करता है कि वह इस समाज में पात्र होने के बाद भी अपात्र या विपात्र है क्योंकि सामाजिक मानदंड बदल गए हैं, बहुत कड़ा आंतरिक एवं बाह्य संघर्ष करने के बाद भी पात्र तथा योग्य मनुष्य अपने आपको समाज में 'विपात्र' अनुभव करता है।

मनुष्य अकेलेपन का और विपात्र (Misfit) होने का दुखः निरंतर भोगता रहता है। यही 'विपात्र' उपन्यास की कथावस्तु है। इसलिए 'विपात्र' शीर्षक कथावस्तु के साथ पूरी तरह से जुड़ा हुआ है।

'विपात्र' कौतूहल निर्माण करने वाला शीर्षक है। कथा वस्तु की हल्की सी झलक इससे प्राप्त होती है। कुछ तो विसंगत है, असंगत है यह तो ज्ञात होता है। पाठक इसे पढ़ने के लिए प्रेरित हो जाता है।

'विपात्र' शीर्षक कथावस्तु, भाषा, संक्षिप्तता, उद्देश्य आदि सभी बातों के संदर्भ में एक उचित समपर्क, योग्य, प्रभावकारी, मार्मिक और साहित्यिक सुंदरता अभिव्यक्त करने वाला शीर्षक है।

'विपात्र' की मध्यवर्ति कल्पना- गजानन माधव मुक्तिबोध आधुनिक काल के रचनाकार हैं। इनका 'विपात्र' उपन्यास आधुनिककालीन उपन्यास है। इसमें आधुनिक उपन्यासों की विशेषताएँ दिखाई देती हैं। उपन्यासों की पुरानी परंपराओं पर यह उपन्यास चलता नहीं हैं। 'विपात्र' परम्परा से हटकर लिखा गया उपन्यास है। मुक्तिबोध मूल रूप से कवि हैं। उनकी कविताओं में अस्तित्ववाद का प्रभाव दिखाई देता है। इस उपन्यास में जो चित्रण आया है वह व्यक्ति संघर्ष का चित्रण है। वर्तमान युग यंत्रों का युग है। हर जगह यांत्रिकीकरण का प्रभाव दिखाई देता है। बड़े-बड़े महानगरों में रहने वाले मनुष्यों के जीवन की समस्याएँ अनंत हो गई हैं। यह मान भी लिया कि पहले काल से वर्तमान काल का जीवन अधिक सुखमय, सुविधामय हो गया है तो यह भी मानना पड़ेगा कि जीवन की जटिलता, समस्याएँ चिंताएँ, उलझनें उतनी ही बढ़ गई हैं। साधन संपत्ति समाज में बहुत हैं लेकिन मनुष्य का जीवन व्यस्त बन गया है। यह व्यस्तता सार्थक नहीं है। उसकी भागदौड़, उसके कष्ट, उसकी व्यस्तता कहीं पर निरर्थकता का भाव व्यक्त करती है। मनुष्य जीवन से सुखशांति जाती रही है। पुराने मानवीय मूल्य टूट कर बिखर रहे हैं। वर्तमान समाज में दया, प्रेम, सहानुभूति आदि भावों का अभाव दिखाई दे रहा है। मनुष्य अधिक से अधिक स्वार्थी बन रहा है। वह किसी को कुछ देना नहीं चाहता और दूसरों से प्रेम की अपेक्षा करता है।

इस उपन्यास में इसी विसंगति के दर्शन होते हैं। हर कोई प्रेम का भूखा है परन्तु दूसरों को प्रेम देना नहीं चाहता, हर मनुष्य लोगों की भीड़ में रहता है और अपने आपको अकेला पाता है। एक ही परिवार में, एक ही समाज में परस्पर के प्रति पराए पन का भाव है। एक अजनबीयत है, मनुष्य अपनी स्वतंत्रता का दावा करता है,परन्तु उसकी स्वतंत्रता मिथ्या है। समाज में हर कोई अपने कोश में रहता है । अपनी बुराइयों को ढँकना चाहता है। इन विषय स्थितियों में मनुष्य का मन भयभीत है, वह अपने आप को बचाकर दूसरों का सहारा खोजता है। समाज का प्रत्येक वर्ग अपने ही प्रश्नों में उलझा हुआ है। उसका ज्ञान, विचार, बुद्धि, अनुभव किसी न किसी प्रकार से बद्ध हो गए हैं और जिनके पास मुक्त ज्ञान है वे दुनिया में अपने आप को विपात्र महसूस कर रहे हैं। हर एक की अपनी समस्या है। कोई भी दूसरों पर विश्वास करना नहीं चाहता है।

समाज में एक विशिष्ट प्रकार की लाचारी के दर्शन होते हैं और वह लाचारी आर्थिक पक्ष के साथ जुड़ी हुई है। समाज की बुराइयों से मनुष्य लाख बचना चाहे परन्तु वह इसके घेरे में आ ही जाता है। मनुष्य करे तो क्या करे? चारों ओर उसके विषम और विपरीत परिस्थितियाँ हैं। मनुष्य अपने सुखों-उपभोगों के बीच भी पीड़ित है। वह त्रस्त है, बेचैन है एवं निराश भी है।

निराशा मनुष्य को हर स्तर पर तोड़ देती है। तो क्या हमारें सामाजिक जीवन में इतनी भयानकता है? इतनी अकृत्रिमता है, इतनी निरर्थकता है? स्वतंत्रता नाम की कोई चीज है या नहीं? है तो किस रूप में, नहीं है तो क्यों नहीं है? व्यक्ति के जीवन में इस तरह का संघर्ष

क्यों है? छलावा क्या है? कला का दिखावा क्यों होता है? क्यों ज्ञानी और ईमानदार मनुष्य का मूल्य इस समाज में नहीं है? विद्या और ज्ञान के अर्थ इतने विपरीत क्यों हो गए हैं?

मुक्तिबोध ने अपने परिवेश में इन्हीं प्रश्नों को उठा-उठाकर इनके बारे में अपने विचार मंथन को व्यक्त किया है। इन्हीं प्रश्नों के संदर्भ में पक्ष-विपक्ष में चर्चा की है।

अंततः उनके विचारों का निष्कर्ष यही है कि चाहे जितनी विषम स्थितियाँ हों मनुष्य को थक-हारकर बैठना नहीं चाहिए। अपनी समस्त शक्तियों को क्रियाशील, क्रियारत बनाए रखने में ही मनुष्य की श्रेष्ठता है। भेद और विषमता समाज में रहेगी ही। निराशा भी घेर लेगी परन्तु मनुष्य का परम कर्तव्य है कि वह निरतंर कुछ निर्माण करें, सृजन करें क्योंकि सृजन ही कला का मुख्य ध्येय है।

'विपात्र' उपन्यास में यही केन्द्रीय कल्पना है। इस उपन्यास का मूल भाव यही है।

'विपात्र' उपन्यास की कथा वस्तु

'विपात्र' उपन्यास का कथानक यद्यपि, अपने आप में महत्वपूर्ण हैं तो भी यह कथानक सुसंगत, सुसूत्र और परिपूर्ण लगता नहीं। कथावस्तु या कथानक के नाम पर इस उपन्यास में कोई एक प्रवाहपूर्ण कहानी नहीं है। कोई समग्र कथा नहीं है। इस उपन्यास के कथानक में परम्परागत उपन्यासों जैसा कोई कथानक नहीं है। इसकी कथावस्तु पर परम्परागत उपन्यासों से हटकर थोड़ी अलग शैली में प्रस्तुत की गई है। विपात्र का कथानक, बहुत से पात्र-उनके संवाद और विचारों के इर्द-गिर्द घूमता रहता है। कहानी जैसी कोई कहानी इसमें नहीं है।

एक विद्या या संस्कृति का केन्द्र है, जहां पर ज्ञान दान की बातें चलती हैं । इस उपन्यास का निवेदक (लेखक) इसी केन्द्र के साथ जुड़ा हुआ है। यहां निवेदक स्वयं के बारे में अपने मित्रों के बारे में, अपने अधिकारी तथा बॉस के बारे में और आस-पास के समाज के बारे में अपने विचार व्यक्त करता है।

'विपात्र' उपन्यास में मुक्तिबोध ने नई टेकनिक तथा शिल्प का प्रयोग करते हुए कथावस्तु को ढाला है। वैसे देखा जाए तो परम्परा से जो उपन्यास चले आ रहे हैं, उनके जैसा यह उपन्यास नहीं है। कथावस्तु की दृष्टि से कोई सूक्ष्म या क्रमबद्ध कथानक नहीं है। लेखक ने उसके आसपास का परिवेश, अपने मित्र और स्वयं को उपन्यास का विषय बनाया है। उसमें भनावत, जगत, बॉस आदि का व्यक्ति चित्रण हैं। विद्या केन्द्र का बगीचा, घर, उनके आस-पास की बस्तियाँ, वहां रहने वाले लोगों का वर्णन आदि बाहरी परिवेश है।

इस उपन्यास में कथा वस्तु नहीं है, परन्तु लेखक का विवरणात्मक लंबे-लंबे परिच्छेदों में चलने वाला विचार चक्र है। उसमें भी क्रमबद्धता नहीं है। लेखक स्वयं पर बहुत देर तक टिप्पणी करते रहते हैं। स्वयं वे, उनका घर, नौकरी, आर्थिक दशा बीमारियाँ, उनका जीवन आदि का वर्णन इस उपन्यास में है। इसके साथ लेखक की अध्ययनशीलता, उनके साहित्यिक

विचार, सामाजिक विचार, उनके मन में चलने वाले गुप्त चिंतन, जैसे व्यथा, वेदना क्या है? वासना क्या है? मनुष्य की स्वतंत्रता क्या है? आदि विचार इस उपन्यास में अभिव्यक्त हुए हैं।

लेखक स्वयं ही इस उपन्यास के कथानक को प्रस्तुत कर रहे हैं। वह निवेदक की भूमिका में है। आत्मनिवेदन के साथ अपने आसपास के व्यक्तियों के बारे में, परिस्थिति के बारे में भी लेखक ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। उनके इन विचारों में समाज के साथ, समाज में मनुष्य का स्थान, घर परिवार तथा मनुष्य का स्थान, मनुष्य का परस्पर संबंध। इन सबके बीच मनुष्य का सब होते हुए भी दिखाई देने वाला अजनबीपन, अकेलापन, निस्संगता और परायापन दिखाई देता है। लेखक मनुष्य के दो व्यक्तित्व के संबंध में बताते हैं। उनकी ओर संकेत करते हैं। स्वयं लेखक का भी अंतमुखी जगत है। एक बाह्य विश्व है। परन्तु लेखक विशेष रूप में अंतर्मुखी है। हर समय वे अपने मन के साथ बात करते रहते हैं। और मुख्य विषय पर आत्म मंथन चलता रहता है। बहुत ही सरलता से लेखक व्यक्ति और समाज के व्यवहार पर व्यंग्य करते हैं। 'विपात्र' एक प्रकार से लेखक का आत्म मंथन है। बहुत बड़ी निराशा, खिन्नता के बावजूद विपरीत परिस्थिति में रहते हुए भी उपन्यास के अंत में लेखक को अपने जीवन के प्रति आस्था दिखाई देती है। चाहे कितनी कठिन स्थितियाँ हो पर यह जीवन व्यर्थ न हो। यह एक आशादायी संदेश एवं विचार उपन्यास के अंत में व्यक्त किया गया है।

'विपात्र' उपन्यास की समस्याएँ

कोई भी रचना अपने किसी उद्देश्य को लेकर चलती है, चाहे वह कोई कहानी, उपन्यास या फिर कोई नाटक हो। कुल उपन्यासों का उद्देश्य केवल समस्याओं को अभिव्यक्त करना होता है। समस्याओं को व्यक्त करके वे समाज के लिए एक सूत्र का निर्माण करते हैं। समस्याओं को जानकर, देखकर, समाज उन पर सोचने लगता है, विचार करने लगता है, अर्थात् समस्याओं को उपन्यास द्वारा प्रस्तुत करना समाज जागृति का ही कार्य है। बहुत से उपन्यास समस्याओं को दिखाकर या व्यक्त करके चुप हो जाते हैं जिनके द्वारा कोई दिशा या मार्ग नहीं दिखाया जाता है। इस तरह के उपन्यासों को समस्या मूलक उपन्यास कहते हैं।

'विपात्र' एक सामाजिक और समस्या मूलक उपन्यास है। इसमें जो समस्याएं चित्रित हैं वे वर्तमान जीवन के साथ संबंधित हैं। यह समस्याएं आधुनिक काल की समस्याएँ हैं। महानगरीय जीवन से अपनायी गई समस्याएं हैं। वैसे देखा जाएँ तो 'विपात्र' उपन्यास की मूल समस्या है व्यक्ति का अकेलापन, समाज में व्यक्ति का परायापन, अकेलेपन की भावना या दुखःदायी निस्संगता। अकेलापन वर्तमान युग की जटिल से जटिल तर समस्या बन रही है। व्यक्ति समूह में रहता है, भीड़ में रहता है, धूमता है, अपने आसपास जानबूझकर लोगों की भीड़ एकत्रित करता है तो भी वह अपने आपको नितांत अकेला महसूस करता है। मनुष्य के मन में विश्वास एवं सुरक्षा का अभाव है। हर एक व्यक्ति के मन में निरंतर असुरक्षा की भावना, डर या भय समाया हुआ है। ऐसा क्यों है? इस बारे में लेखक अपने विचार-तरह-तरह के उदाहरण देकर प्रस्तुत कर रहे हैं कि मूल बात यह है कि व्यक्ति अपने आपको पहचाने में असमर्थ है।

वर्तमान समाज में व्यक्ति का जीवन इतना उलझा हुआ, इतना जटिल और विकृत है कि व्यक्ति अपने आपको जानने की पहचानने की कोशिश भी करता है तो वह अपने दुर्गुणों पर पर्दा डालना चाहता है। हम अपने व्यक्तित्व को दूसरों से छिपाए रखते हैं तो दूसरों के लिए हमारा व्यक्तित्व एक रहस्य ही बन जाएगा, शायद यही कारण है कि व्यक्ति-व्यक्ति के बीच फासले हैं, वर्ग भेद हैं, विषमता है और अनदेखी दीवारें हैं यही स्थितियां हमारे मन में अकेलापन, या सूनापन भर देती हैं।

जीवन में इतनी भयानकता या विकृतियाँ क्यों हैं? इसका उत्तर शायद यह है कि यह जो समाज है उसमें स्वार्थ, अनीति, भ्रष्टाचार,दुराचार भर गया है। कोई भी मनुष्य अपने दोष देखकर उन पर सोचना नहीं चाहता। एक तरह से बुरी बातों के लिए समाज का समर्थन मिल रहा है, शायद यह सांस्कृतिक पतन है। मनुष्य अपने उद्देश्यपूर्ति के लिए स्वार्थी, मौकापरस्त, अवसरवादी बन गया है। यह समाज के लिए हानिकारक बात है। यही अवसरवाद मनुष्य को खुदगर्ज बना रहा है। स्वार्थी मुनष्य दूसरों को साथ लेकर चलना नहीं चाहता। या तो दूसरे लोग भी स्वार्थी मनुष्य का साथ देना नहीं चाहते। यह एक कारण है। मनुष्य मनुष्य के बीच दुराव आ गया है। वह अकेलेपन का दुखः भोग रहा है।

मनुष्य इतना स्वार्थी और खुदगर्ज क्यों है? इसका एक कारण है मनुष्य की पिपासा बढ़ रही है। लालसा बढ़ रही है। निरंतर अतृप्ति का भाव उसके अंदर है। यह अतृप्ति उसे चुप बैठने नहीं देती। वह सब कुछ पाना चाहता है जबकि मानव जीवन के लिए कुछ पाना है तो उसकी भी मर्यादाएँ भी हैं। जब यह मर्यादाएँ रूकावट बनती हैं तो व्यक्ति और भी दुःखी बनता है। जीवन का अधूरापन उसे अंदर ही अंदर खोखला करने लगता है। अधूरेपन का दुःख अपूर्णता का आभास वर्तमान जीवन की एक समस्या है।

कहीं न कहीं रिक्त होने का भाव मानव मन को अस्थिर बना देता है। उसे अपने मार्ग से हटा देता है। उसे दुःखी बना देता है। मनुष्य के दुःख के कारण क्या हैं? वह इतना दुःखी क्यों है? उसके जीवन में व्यथा, वेदना, निराशा क्यों है? कभी-कभी मनुष्य स्वयं ही अपने दुःख का कारण बन जाता है। अपने ही गलत विचार, धारणाएँ, गलत कृतियाँ, गलत व्यवहार इनके कारण वह दुःखी बनता है तो दूसरी ओर सामाजिक व्यवस्था कुछ ऐसी है कि मनुष्य का मन दुःखी बन जाता है। सामाजिक व्यवस्था में वर्ग भेद हैं, विषमता है, ऊंच नीच भावना है। समाज में एक वर्ग दूसरे वर्ग को निरंतर घृणा की दृष्टि से देखता रहता है। इसी के फलस्वरूप सामाजिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश का भाव निर्माण होता है। एक संघर्ष या युद्ध छिड़ जाता है और मनुष्य धीरे-धीरे अदृश्य युद्ध में शामिल हो जाता है। कभी-कभी यह युद्ध अपनी मर्जी के खिलाफ लड़ता है और बहुत बार इस क्षेत्र में उसकी हार होती है। मनुष्य की पराजित मनोवृत्ति महानगरीय जीवन की देन है।

मनुष्य अपने आपको हारा और पराजित क्यों अनुभव करता है? उसके जीवन के साथ इतनी विफलताएँ एवं असफलताएँ क्यों लगी हैं? शायद व्यक्ति स्थितियों के सामने अपात्र या विपात्र है। कभी कभी मनुष्य अपनी पात्रता का विचार करता नहीं, अपने अस्तित्व को खोजता नहीं। वह स्वार्थवश चीजों को बटोरने और जोड़ने में लग जाता है। या तो समाज की रचना

ही कुछ ऐसी है कि गुणों के होते हुए भी व्यक्ति समाज में विपात्र बन जाता है। उसकी गलती न होने के बावजूद वह विसंगतियों के बीच घिर जाता है। न चाहते हुए भी उसके चेहरे पर असफलता की राख लग जाती है। अर्थात् यहां भी समाज का विकृत ढांचा कभी-कभी मनुष्य को असफलता के मार्ग पर ले जाता है।

समाज में कृत्रिमता इतनी आ गई है कि चारों तरफ दूर तक हर चीज में एक ढोंग, आडंबर या मिथ्याचार आ गया है, कहीं भी उसमें अर्थ नहीं है। एक विचित्र-संस्कृति के बहाव में बहने के लिए मनुष्य बाध्य है। एक दूसरे से अलगाव, अलिप्तता उसे बंद दरवाजे की संस्कृति तक ले आया है। मनुष्य ने दूसरों के लिए केवल घरों के ही नहीं बल्कि हृदय के दरवाजे भी बंद कर लिए हैं । मनुष्य ने अपने आपको समाज में रहकर भी समाज से काट लिया हे। धीरे-धीरे वह अपने विचित्र कोश में बंद हो रहा है और जब वह समाज में आता है तो अपने विचारों के अनुकूल कुछ नहीं पाता है तो अपने आप को समाज में असंगत अनुभव करता है। यह असंगति ही उसके जीवन का दु:ख बन जाती है।

वर्तमान समाज में मनुष्य इतना अकेला क्यों जी रहा है? इसका कारण ढूँढ़ने पर पता चलता है कि सब के मूल में स्वार्थ है। इसके लिए कोई एक व्यक्ति एक तत्व जिम्मेदार नहीं, हमारा समाज ही कुछ ऐसा है जिसके कारण समाज अनियंत्रित हो गया है। की कुछ ऐसा प्रगति और विकास का वेग बढ़ने लगा, इस गति में जैसी-जैसी तेज़ी आती गई, समाज के मूल्य टूटने लगे, विघटन और अलगाव का एक दौर आ गया, मूल्यों की टूटन और विघटन विपात्र की प्रमुख समस्याओं में से एक समस्या है। समाज की ओर देखने से पता चलता है, समाज में पहले से अधिक सुविधाएं सुख एवं समृद्धि है, फिर भी मनुष्य इतना दु:खी और चिंतित क्यों है? इसका एक कारण है भौतिक समृद्धि तो बढ़ गई पर मानवीय गुणों का पतन होने लगा व्यक्ति अधिक से अधिक सुख की कामना करने लगा। समाज का जो विकास हुआ वह अनियंत्रित रूप में होने लगा। भौतिक सुखों की अधिकता ही मनुष्य को दु:ख दे रही है।

आज समाज में कोई भी व्यक्ति सुखी नहीं है। अज़ीब तरह के चिंता, अवसाद तथा खिन्नता के भाव, व्यर्थता का बोध मनुष्य को हो रहा है, इसी कारण समाज मं निराशा से अपनाये हुए विनाशकारी विचारों का रूप भी दिखाई देता है। इसी वैराग्य की भावना से शिक्षा,दीक्षा भौतिक साधन सामग्री, सुविधाएँ इन में विषमता है। इसलिए मनुष्य निरंतर संघर्ष में व्यस्त है और यही संघर्ष अच्छे बुरे का फर्क भुला देता है। समाज में हर एक बात के मानदंड बदल रहे हैं। व्यक्ति समाज में दोहरी जिदंगी जी रहा है, जैसे उसके खाने के दॉत अलग और दिखाने के अलग।

इस कृत्रिमता के बीच मनुष्य न तो स्वयं को पहचान पा रहा है और न हीं दूसरों के व्यक्तित्व की परख कर सका है, जैसे समाज का प्रत्येक व्यक्ति लेखक को खोखला और भूसा भरे पशु जैसा लगता है।

समाज में जो विषमताएँ हैं, उसका वर्णन 'विपात्र' उपन्यास में है। समाज में एक तनाव और घुटन निरंतर है। लेखक ने जीवन संघर्ष के कई आयाम और दृष्टिकोण स्पष्ट किए हैं।

लेखक व्यक्तियों के जीवन के अंतर्विरोध को स्पष्ट कर रहा है। लेखक ने मानव जीवन की जटिलताएँ, कृत्रिमताएँ,कुरूपताएँ, उसकी स्वार्थ लोलुपता, धनलिप्सा, उसके जीवन की व्यर्थता पर प्रकाश डाला है।

तात्पर्य यह है कि वर्तमान मशीनरी युग या महानगरीय जीवन या अनियंत्रित भौतिक विकास के युग में जीने वाले हर मनुष्य की पीड़ा व्यथा और समस्याओं को व्यक्त किया है। आज का मानव चारों ओर से समस्याओं के बीच घिर गया है वह हर दिशा में हर तरह से संघर्ष की स्थिति में है वह हारा हुआ है, खिन्न है, लगभग हथियार डालने की स्थिति में है।

यह सामाजिक उपन्यास समस्या मूलक है। इसमें वर्तमान युग की समस्या है। मनुष्य स्वार्थी बन गया है। समाज के मानदंड भी बदल गए हैं, हमारे दुःख के लिए हम ही जिम्मेदार हैं। कभी-कभी समाज विषमतापूर्ण, स्वार्थी बनता है, शायद इसलिए कि समाज का यांत्रिकीकरण हो गया है, जहां भावना के लिए कोई स्थान नहीं। इस स्थिति में समाज में शिक्षा, पात्रता का कोई उपयोग नहीं। परन्तु भौतिक साधन सामग्री बढ़ गई है।

'विपात्र' उपन्यास में लेखक का आत्मनिवेदन

कुछ उपन्यास वर्णनात्मक होते हैं तो कुछ उपन्यासों में संवाद शैली के सुंदर दर्शन हुआ करते हैं। कुछ आत्म चरित्रात्मक उपन्यास होते हैं। उपन्यास की श्रृंखला में 'विपात्र' उपन्यास आत्म निवेदनात्मक उपन्यास है। यद्यपि यह उपन्यास आत्मकथा नहीं है। इस उपन्यास में स्वयं उपन्यासकार, रचनाकार या लेखक, निवेदक की भूमिका में है। इस उपन्यास का विषय, इस उपन्यास की समस्याएँ सब का परिचय लेखक निवेदक के रूप में दे रहे हैं। यह उपन्यास आरंभ से अंत तक निवेदन पर आधारित है। लेखक यहाँ निवेदक की दो भूमिकाएँ प्रस्तुत कर रहा है एक तो वह अपने निवेदन द्वारा व्यक्तियों का परीक्षण, निरीक्षण, समाज समस्याएँ, परिवेश इन पर अपने मनके भाव व्यक्त कर रहा है तो दूसरी ओर स्वतंत्रता व्यवस्था, वेदना,पीड़ा,वासना इनके बारे में आत्मनिवेदनात्मक शैली में विचार प्रस्तुत कर रहा है। इस उपन्यास में बहुत से स्थान ऐसे हैं जहाँ पर लेखक ने अपने आप पर बहुत विचार करके अपने मत प्रस्तुत किए हैं और बाद में उसे अन्य संदर्भों के साथ जोड़ दिया है। लेखक अपने अंतर्मन की बातें अपनी सृजन-शक्ति और विपरित स्थितियों में संघर्ष करने की क्षमता इनके बारे में अत्यंत प्रभावशाली विचार व्यक्त करते हैं। यह उपन्यास पारंपरिक उपन्यास शैली से हटकर एक नई और आधुनिकतम रचना बनी है, यह केवल इसलिए है कि इसका आत्मनिवेदन एक ही व्यक्ति द्वारा विविध विषयों को लेकर चलता है। जिसमें बड़ी खूबी के साथ समाज की कई प्रकार की समस्याएँ उठायी गई हैं और मानवीय कमजोरी तथा क्षमताओं का विश्लेषण बड़े ही सुंदर ढंग से हो गया है।

विविध व्यक्तियों के स्वभाव और उनकी स्थितियों के बारे में अपने निवेदन में अपना मत व्यक्त करके लेखक ने समाज का एक रूप ही हमारे सामने खड़ा कर दिया है। किसी के साथ कलाकार की विविध भावनाएँ, विचार, व्यक्ति का संघर्ष, उसका अकेलापन इसके बारे में भावपूर्ण निवेदन किया है। लेखक स्वयं कवि है, इसलिए उनका निवेदन अत्यंत गहरा,

मर्मस्पर्शी और सरस बन पड़ा है, प्रत्येक बात में चिंतन और विचारों की गहराई दिखाई देती है। अपने उपन्यास के लक्ष्य को पूरा करने में लेखक पूरी तरह से सफल हो गए हैं।

उनकी निवेदन क्षमता, निवेदन-दृष्टि इस उपन्यास का एक सबल तत्व है। यह निवेदन कहीं-कहीं पर लंबा हो गया है। एक ही विचार कई परिच्छेदों में चलता है, तो भी आत्मकथनात्मक न होते हुए भी एक ही व्यक्ति के निवेदन पर आधारित 'विपात्र' उपन्यास इसी निवेदन शैली के बल पर ही अपने उद्देश्य में सफल हो गया है।

उपन्यास की शैली

वर्णनात्मक, विवरणात्मक, संवादात्मक, आत्मनिवेदनात्मक आदि उपन्यासों की शैलियाँ मानी गई हैं। विपात्र उपन्यास भी निवेदनात्मक शैली में चलने वाला उपन्यास है, इस में आत्मनिवेदन अवश्य है परन्तु यह आत्म चरित्रात्मक (आत्मकथानत्मक) उपन्यास नहीं है।

एक व्यक्ति जो सर्वसाधारण पढ़े-लिखे काबिल मनुष्य का प्रतिनिधित्व करता है ऐसा लेखक या निवेदक है।

यहाँ निवेदक की भूमिका स्वयं लेखक निभा रहे हैं। अपनी निवेदन की शैली में लेखक ने वर्तमान युग, आस पास की परिस्थितियाँ, व्यक्ति की समस्याएँ उसकी विविध भावनाएँ, उसके व्यवहार, उसकी लाचारी, मजबूरी, त्रुटियाँ आदि का जीवंत चित्रण अपने निवेदन के द्वारा शक्तिशाली कर दिया है। यह उपन्यास निवेदन की शैली में लिखा होने के कारण, जिसमें आत्म-योजना का भाव भी दिखाई देता है, केवल निवेदन के द्वारा स्थितियों को पाठकों के सम्मुख साक्षात् करने की निवेदक की शैली अपने ढंग की तथा अनूठी है।

कहीं-कहीं निवेदन लंबा चलता है, इसलिए प्रवाह एक-रस हो जाता है तो भी लेखक इस शैली द्वारा पात्रों की स्थितियों को, समस्याओं को सजीव बनाने में सफल हो गए हैं। आधुनिक काल का निवेदन-शैली पर आधारित 'विपात्र' उपन्यास अपनी शैली और विचारों के लिए महत्वपूर्ण बन गया है।

'विपात्र' की भाषा शैली

भाषा शैली के बारे में देखा जाए तो किसी भी उपन्यास की सफलता भाषा के स्तर, भाषा की शैली, भाषा की संप्रेषणीयता पर अवलंबित होती है।

'विपात्र' उपन्यास की भाषा शैली को देखा जाए तो सबसे पहली विशेषता यह है कि शुद्ध तथा साहित्यिक हिंदी है। दूसरी बात यह है कि शब्दों में काव्यात्मकता, रसमयता है, विषय को आगे ले जाने वाला एक प्रवाह है, किसी भी व्यक्ति, चरित्र, स्थान, समस्या को पूर्णरूप से अभिव्यक्त करने की क्षमता लेखक के शब्दों में है।

लेखक का अपने स्वयं के बारे में विचार, अपने सहयोगियों या अधिकारियों के बारे में विचार, आस-पास की स्थितियाँ आदि बातें इस उपन्यास में **उत्तम शब्द चयन** के कारण ही स्पष्ट तथा सजीव हो उठी हैं।

लेखक स्वयं कवि ह्दय के रचनाकार हैं, इस दृष्टि से उनकी भाषा का प्रवाह कविता जैसा है। समय-समय पर उसकी सुंदरता, मधुरता, रूपक, व्यंग्य, आदि बातें भी इस उपन्यास में बहुत सुंदर तथा उच्च स्तर पर व्यक्त की गई हैं।

लेखक स्वयं कवि हैं, वे भारतीय परंपरा एवं दर्शन शास्त्र के जानकार हैं। हिन्दी साहित्य की विविध धाराओं के साथ वे परिचित हैं, इसलिए उनके जीवन में विचार तथा चिंतन में गहराई पायी जाती है। लेखक स्वयं एक अच्छे समीक्षक हैं। देश-विदेश की साहित्यिक धाराओं से परिचित हैं। लेखक ने पाश्चात्य विचारक, तत्व तथा रचनाकारों की रचनाएँ पढ़ी हैं। उस दृष्टि से 'विपात्र' उपन्यास में स्थान-स्थान पर अंग्रेजी काव्य की पंक्तियाँ, विचारकों के विचार दिखाई देते हैं- कहीं-कहीं अत्यंत उचित रूप में गालिब जैसे शायरों की कुछ पंक्तियाँ उदाहरण के तौर पर दी गई हैं। कहीं-कहीं पर भारतीय दर्शन का प्रभाव दिखाई देता है। लेखक की विचार-धारा इतनी अटूट है कि लंबे-लंबे परिच्छेदों तक उनके विचार चलते रहते हैं, इसलिए जहाँ पर विचारों की गहराई है, वहाँ उनके वाक्य बड़े दिखाई देते हैं और जहाँ पर भावों की प्रबलता है, वहाँ वाक्य छोटे आकार धारण कर लेते हैं।

यह तो निश्चित है कि 'विपात्र' की भाषा उच्च साहित्यिक स्तर की भाषा है। इसमें संस्कृत के शब्द भी प्रचुर मात्रा में दिखाई देते हैं। तत्सम तथा तद्भव शब्द प्रसंग के अनुरूप चलती भाषा में आ गए हैं, अरबी, उर्दू, फारसी के शब्द भी कहीं-कहीं दिखाई देते हैं और अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अपने स्वाभाविक रूप में आ गया है एक दो स्थानों पर कुछ शब्द अटपटे या अप्रचलित से लगते हैं, लेकिन विषय के साथ वे बेमेल नहीं लगते ।

भाषा के बारे में संक्षेप में कहना हो तो मुक्तिबोध जी की भाषा अपने भाव, विचार एवं संवेदनाओं को व्यक्त करने में पूरी तरह सफल हो गई है, काव्यात्मक भाषा जिसके कारण गद्य और पद्य का एक अनोखा रूप दिखाई देता है। बीच-बीच में अंग्रेजी काव्य पंक्तियाँ, उर्दू के शायरों के शेर, भारतीय तथा पाश्चात्य प्राचीन और आधुनिक साहित्य के विविध संदर्भ उचित भाषा में अभिव्यक्ति दी गई है। कहीं-कहीं पर प्रतीक, रूपक, उपमाएँ आदि के दर्शन होते हैं। रसमयता तथा प्रवाह इसमें अवश्य है। कहीं-कहीं पर चिंतन की अधिकता दिखाई देती है। वाक्य छोटे हैं परंतु विचार कई परिच्छेदों तक चलते हैं।

उनके उपन्यास में कई प्रकार के शब्द हैं:-

(1) संस्कृत - गंभीर, स्त्री, सज्जन, भाग्यवान, आत्महत्या, स्तब्ध, उपलब्धि, जीवन, स्वप्न ग्रस्त, सभ्यता, ज्योति, शिशु, यद्यपि, चरित्र, विचार, प्रसन्न, आश्चर्य, विचित्र, चैतन्य, अभिवादन, ज्ञान संपन्न ।

(2) तत्सम:- उच्चतर, वृक्ष, दृष्टि, रक्षा, जीवन प्रणाली, शिक्षित, कृपाशील, आदि ।

(3) तद्भवः- हाथ, सौभाग्य, शक्कर आदि ।

(4) अंग्रेजी शब्दः- बोटॉनिकल गार्डन, जिऑलॉजिस्ट, कोब्रा, आफिस, मेमर, टिकट, युनवर्सिटी, रेस्टॉरेंट, बिल्डिंग, कॉरीडॉर, कॉलेज, ब्रिज, पार्टी, अनसोशल, ॲटर्नी, सेंटर, असिस्टेंट, मैनेजर, रिटायर्ड, फिट, सोशल, टेलीफोन, फोरमैन, मशीन, सेमिनार, कॉफी हाऊस आदि ।

(5) अरबी, उर्दू, फारसी :- हरियाली, प्यार, बागवानी, खूबसूरत, नौजवान, सरगर्मी, अखबार, खून, जरूरत, तावबाज, बेवकूफ, कमरा, दरवाजा, तकलीफ, बौना, गाली, बदसूरत, एहसास, धुएँदार, दरबार आदि।

(6) बोली भाषा के शब्दः- मैली कुचैली, पगडंडी, भरी-भूरी आदि ।
मुहावरेः-नकल उतारना, टाँग खींचना, चेहरा बाग-बाग हो जाना, थाली परोसना, असफलता की धूल-लगना, कीचड़ उछालना, बाज आना, आँखों में तेजी आना आदि ।

'विपात्र' उपन्यास में दिखाई देनेवाला पाश्चात्य विचार-धारा का प्रभाव

'विपात्र' उपन्यास के लेखक मुक्तिबोध जी ने अपने जीवन-काल में काव्य तथा गद्य की जो भी रचनाएँ की हैं उनको पढ़ने के बाद पता चलता है कि उनके काव्य-तथा गद्य के मूल में गहरी चिंतन-धारा है।

लेखक का व्यक्तित्व अध्ययनशील था। अपने जीवन के पूर्ववर्ती लेखक, समकालीन लेखक, रचनाकार या परवर्ती लेखकों, अनुमान इन सबका मिश्रण मुक्तिबोध जी की रचनाओं में दिखाई देता है। 'विपात्र' उपन्यास भी एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें चिंतन धारा-चलती है, दार्शनिक विचार धारा चलती है । लेखक ने केवल भारतीय साहित्य का विचार तथा तत्व का अध्ययन नहीं किया, बल्कि उन्होंने अपने देश-विदेश के पाश्चात्य साहित्यकारों का और उनकी चिंतन धाराओं का भी अध्ययन किया है। इन सबका प्रभाव हम 'विपात्र' उपन्यास पर देख सकते हैं। लेखक ने प्राचीन संतों को पढ़ा है। उनके विचार के प्रवाह में कवि कबीरदास, चंडीदास आते हैं। गालिब जैसे शायर आते हैं। भारतीय धारा के ऐसे ही साहित्यकारों के आधार पर लेखक ने अपने मत स्वतंत्र रूप से व्यक्त किए हैं।

पाश्चात्य साहित्य के प्रति लेखक का आकर्षण-उपन्यास में स्थान-स्थान पर स्पष्ट होता है। वे बार-बार हेमिंग्वे, फांकनर का उदाहरण देते हैं। इसके साथ ही देश-विदेश के अखबार तथा पत्रिकाओं के उदाहरण भी देते हैं। 'सर्मन ऑफ दी माऊंट', 'से नो टू डेथ' आदि रचनाओं की चर्चा 'विपात्र' उपन्यास में है।

लेखक 'विपात्र' के लेखन में कई प्रकार की विचार धाराओं के प्रभाव को लेकर चलते हैं। एक दर्शन शास्त्री के माध्यम से वे समाज के बारे में दार्शनिक विचार भी प्रकट करते हैं।

लेखक का स्वतंत्रता, वेदना तथा वासना के बारे में जो विचार है वह भी भारतीय और पाश्चात्य विचार धारा को लेकर चलता है।'ए बिलार्ड' की कथा को लेखक ने एक विशेष अर्थ में लिया है।

कहीं पर पाश्चात्य सौंदर्यवाद का उल्लेख भी है। लेखक ने मार्क्सवादी विचारों को व्यक्त किया है। अपनी संस्कृति के बारे में लेखक के अलग-अलग विचार हैं। 'विपात्र' में जो तत्वज्ञान तर्क दिया गया है, वह भारतीय और पाश्चात्य दोनों विचार धाराओं का मेल है।

डोरोथी सैमसन (अमरिकन लेखिका) का उल्लेख भी 'मिले' के संबंध में इस उपन्यास में आ गया है। लेखक (Communism) समाजवाद आदि वादों का उल्लेख करते हैं। बर्नार्ड शॉ का ड्रामा 'आर्म्स अँड-द मॅन' का उल्लेख भी इस उपन्यास में मिलता है, यहाँ तक कि मुक्तिबोध ने इस उपन्यास का अंत मिले का उदाहरण देकर अंग्रेजी पंक्तियों के साथ किया है।

यह उपन्यास यद्यपि भारतीय और पाश्चात्य-विचार धाराओं को लेकर चलता है तो भी इसमें अधिकतर पाश्चात्य दर्शनशास्त्र और साहित्यिक विचार धाराओं का समावेश है ।

उपन्यास का क्षेत्र

वास्तव में प्रत्येक उपन्यास के लिए देश काल का बंधन होता है। अर्थात् उपन्यास जहाँ पर घटित होता है वहाँ पर उपन्यास का क्षेत्र होता है। कई बार उपन्यास के स्थान बदल जाते हैं, परन्तु उपन्यास किसी एक विशिष्ट क्षेत्र के साथ जुड़ा रहता है। 'विपात्र' उपन्यास जहाँ से शुरू होता है, वह स्थान नितांत रमणीय है, जहाँ लेखक के तथा अन्य पात्रों के कार्यकलाप चलते हैं। ऐसा एक विद्या केन्द्र तथा सांस्कृतिक केन्द्र है।

ज्ञात होता है कि इस स्थान पर धन की कमी नहीं है। इस केन्द्र तथा इसके परिवेश को बहुत सुन्दर ढंग से सजा और सँवार दिया है। तरह-तरह के पेड़ पौधे हैं, दूरतक हरियाली है।

बीच में तालाब है और अनेक रमणीय दृश्य हैं। लेखक ने स्पष्ट रूप में इस विद्या केन्द्र का निश्चित स्थान दर्ज नहीं किया है। तो भी लेखक की जीवनी, लेखक का कार्य क्षेत्र और उपन्यास का वर्णन इनके आधार पर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि यह मध्य प्रदेश, चंद्रपुर, नागपुर या महाराष्ट्र की सीमा रेखा पर स्थित कोई क्षेत्र होगा। यह ऐसा क्षेत्र है कि जहां साधारण जनता मूलरूप से किसान हैं,वे किसान भी निचली जातियों के हैं। राजस्थान के पश्चिम-उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश और महाराष्ट्र के लोगों ने यहाँ आकर व्यापार किया जमीन-जायदाद बनाई। बाद में बाहर से आने वाले लोगों से यहाँ का मध्य वर्ग बना दिया।

वहाँ ईसाई मिशनरी का प्रभाव दिखाई देता है। कबीर पंथीय लोग भी दिखाई देते हैं। कुछ सनातन धर्मी लोग हैं वे जनेऊँ पहनकर अपने-आपको ब्राह्मण सिद्ध करते हैं। यहाँ चुनाव का ऐसा हाल है कि नेता केवल मत माँगने के लिए आते हैं।

यहाँ कुछ लोगों की ऊँची हवेलियाँ हैं। कार्यालय, अस्पताल है। वहाँ प्रत्येक कोने से उठकर, दूर तक चली गई छलांग में दिखाई देने वाली गंदी बस्तियाँ भी हैं। वहीं पर उनके चाय घर चलतें हैं वहाँ मजदूर आकर बैठ जाते हैं।

विद्या केन्द्र के विपरीत गंदा परिवेश इन बस्तियों में है। परंतु इस बस्ती में रहने वाले लोग सभी के सभी बुरे नहीं होते वे विषमता के शिकार हो गए हैं। बाहर के प्रांतों से आए हुए व्यापारियों की ओर स कर्ज के तौर पर पैसे देकर इन लोगों का शोषण किया गया।

उपन्यास का क्षेत्र देखा जाए जो यहाँ उच्च विद्या-विभूषित व्यक्ति भी हैं और गरीब-दलित, शोषित मजदूर भी हैं।

उपन्यास का उद्देश्य

मुक्ति बोध का 'विपात्र' उपन्यास आधुनिक और सामाजिक उपन्यास है। यह उपन्यास बहुचर्चित है। महानगरीय जीवन से उपजी हुई समस्याओं को लेकर इस उपन्यास में लेखक ने व्यक्ति, समाज, जीवन आदि के बारे में विचार व्यक्त किए हैं। इस उपन्यास की समस्या विशेष रूप से व्यक्ति के साथ जुड़ी हुई है, व्यक्ति के जो विविध प्रकार की कमियों का शिकार है।

व्यक्ति जो दो प्रकार का जीवन जीने के लिए मजबूर है। समाज की इन्हीं बातों का चित्रण 'विपात्र' उपन्यास में है। व्यक्ति अनेक तनाव सहता है और अकेलेपन का दु:ख भोगता है, भीड़ में रहकर भी उसके जीवन में एक रिक्तता शून्यता है। यह बात स्पष्ट है कि मानव की इन-कमजोरियों का प्रभाव समाज पर पड़ेगा ही क्योंकि यह समाज तो एक मानव समूह ही है।

वर्तमान समाज में मनुष्य अधूरा त्रस्त, कई त्रुटियों से ग्रस्त एवं पीड़ित हैं। सांस्कृतिक पतन एवं मानवीय मूल्यों में गिरावट इतनी अधिक आ गई है कि समाज में कोई उपाय, समाधान, कोई आशा की किरण नहीं दिखाई देती।

इस उपन्यास में लेखक ने वर्तमान जीवन दर्शन प्रस्तुत किया है। इसका उद्देश्य क्या हो सकता है, निराश वातावरण का चित्रण करके लेखक लोगों के सामने कौन-सा आदर्श प्रस्तुत करना चाहते हैं ? ऐसे चित्रण द्वारा क्या वे समाज को हताश एवं निराश कर रहे हैं ? इसका उत्तर ये है कि वास्तव में ऐसा नहीं है, प्रत्येक कलाकृति का कोई न कोई उद्देश्य हुआ करता है। यह साहित्यिक परंपरा है कि साहित्य द्वारा प्रस्तुत कोई भी विचार आशादायक और समाज के हित में होता है।

'विपात्र' में निराशा, पतन, व्यथा, पीड़ा का चित्रण तो है, परंतु अंत में लेखक ने यह संकेत दिया है कि मानव में कमियाँ तो रहेंगी। समाज के आसपास की स्थितियाँ विपरीत हो सकती हैं। समाज में व्यक्ति के सामने समस्याएँ हैं, यह बातें तो होती ही रहेंगी, परंतु प्रत्येक व्यक्ति में कुछ तो ऐसा है जो अन्य व्यक्तियों से भिन्न एवं मौलिक है। इसी मौलिकता के सहारे समाज की बुराइयों के साथ लड़ना है। समाज में नए विचार प्रस्तुत करना है।

सभी कमजोरियों, त्रुटियों के बावजूद मनुष्य अपना अलग अस्तित्व सिद्ध कर सकता है। अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर सकता है। उपन्यास के अंत में प्रेरणादायी विचार है, एक आशादायी दृष्टि है। उद्देश्य की दृष्टि से देखा जाए तो वर्तमान समाज, आज का मानव और उसके साथ जुड़ी समस्याएँ और मनुष्य की वर्तमान स्थिति को चित्रित करना है और विपरीत स्थितियों में भी अपने व्यक्तित्व के संघर्ष को जारी रखना है । यह आशादायक उद्देश्य 'विपात्र' में निहित है।

'विपात्र' उपन्यास का अंत

भारतीय परंपरा की किसी भी कलाकृति के आरंभ और अंत का विशेष महत्व है। कुछ कलाकृतियों का अंत सुखांत होता है, तो कुछ कृतियों का अंत दुःखांत होता है। किसी कलाकृति का मूल्यांकन बहुत बार उसके आरंभ और अंत से आँका जाता है। जहाँ तक भारतीय साहित्य परंपरा का सवाल है भारतीय उपन्यास,नाटक आदि सुखांत होते हैं। पाश्चात्य परंपरा में अंत दुःखांत होता है।

उपन्यास के अंत में हम यह अनुभव नहीं करते कि उसका अंत आनंद का विचार लाता है और यह भी अनुभव नहीं करते कि यह दुःखांत उपन्यास है। इस उपन्यास के बारे में हम इतना ही कह सकते हैं कि यह उपन्यास सुखांत तो नहीं परंतु कहीं पर आशा की भावना जगाने वाला है और व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रति अस्तित्व के प्रति आस्था जगानेवाला उपन्यास है। इस उपन्यास का सुझाव सुखांत पक्ष की ओर ज्यादा है, इसलिए समाज तथा व्यक्ति की समस्याएँ निराशाजनक रूप में चित्रित होने के बावजूद इस उपन्यास का अंत दिलासा देने वाला, प्रेरक तथा आकर्षक लगता है।

विपात्र का मूल्यांकन

'विपात्र' उपन्यास में स्वयं लेखक इसकी कथावस्तु कह रहे हैं। अथ से इति तक लेखक के हाथों में उपन्यास का सूत्र है। निवेदक ने अपने हाथों में उपन्यास की डोर रखी है। लेखक के मन में निर्माण होनेवाले कई प्रश्न और उनके उत्तर इन सबके जरिए लेखक अपने आसपास के पात्रों, स्थितियों, इन समस्याओं का चित्रण करता है।

लेखक स्वयं उच्च विद्या विभूषित हैं। वह संस्कृत और अंग्रेजी पर समान अधिकार रखते हैं। भारतीय संत साहित्य तथा अन्य साहित्य धाराओं से वह भली-भाँति परिचित हैं।

इसके साथ ही उनकी विशेष रूचि पाश्चात्य विचारधारा और दर्शनशास्त्र में है। इन सबका यह प्रभाव है कि 'विपात्र' उपन्यास विविध पक्ष, विपक्ष के विचारों से परिपूर्ण एवं वैचारिक उपन्यास है। इस उपन्यास के द्वारा व्यक्ति, उसका अकेलापन, उसकी स्वतंत्रता, समाज की स्वतंत्रता के बारे में लेखक के विचार, वेदना और वासना में अंतर, वेदना और वासना का परस्पर संबंध आदि जैसे विचार 'विपात्र' उपन्यास में केन्द्रित हैं।

साहित्यिक दृष्टि से देखा जाए तो रचना के स्तर पर यह घोर वैचारिक उपन्यास है। यहाँ चरित्रों को इतना महत्व नहीं जितना कि विचारों को है। यह उपन्यास आधुनिक काल का उपन्यास है। पाश्चात्य धारा को लेकर चलने वाला उपन्यास है। इस उपन्यास में एक व्यक्ति का विचारजगत है। पुरानी कई परंपराओं को टालकर यह उपन्यास रचा गया है, इसमें बहुत सारे पात्रों का चित्रण है। तो भी इने गिने पात्र महत्वपूर्ण रूप से चलते हैं। इस उपन्यास के द्वारा उपन्यासकार ने उपन्यास-क्षेत्र को एक नया आयाम दिया है। परंपरा के मार्ग पर न चलते हुए भी उपन्यास विधा को कैसे यशस्वी किया जाता है इसका मूर्तिमान उदाहरण है। उच्च साहित्यिक स्तर की भाषा भारतीय या पाश्चात्य विचार धाराओं का प्रभाव, वास्तविक जीवन का चित्रण इन सब के कारण बहुत ही कम त्रुटियाँ उपन्यास में दिखाई देती हैं ।

मुक्तिबोध जी का यह बहुचर्चित और प्रसिद्ध उपन्यास है। इसमें शीर्षक से लेकर जीवन के साथ संबंधित विचार नए रूप में प्रस्तुत किए हैं। आधुनिक काल का यह दर्जेदार उपन्यास है। बुद्धिमान लोगों की भूख को संतुष्ट करने वाला उपन्यास है। साहित्यिक मूल्यांकन की दृष्टि से देखा जाए तो 'विपात्र' उपन्यास उपन्यास-विद्या में अनूठा उपन्यास है।

चरित्र-चित्रण

1) **लेखक (निवेदक)**:-'विपात्र' उपन्यास के लेखक स्वयं 'विपात्र' का कथन कर रहे हैं, अर्थात् एक प्रकार से लेखक निवेदक की जिम्मेदारी को निभा रहा है। 'विपात्र' उपन्यास के आरंभ से अंत तक लेखक मौजूद है। 'विपात्र' उपन्यास की कथावस्तु ही वही बता रहा है । निवेदक या लेखक इस उपन्यास का महत्वपूर्ण पात्र है। इसके विचार, इसका चिंतन, इसकी धारणाएँ संपूर्ण उपन्यास पर अपना प्रभाव डाले हुए हैं।

उपन्यास में स्थान-स्थान पर निवेदक ने स्वयं के बारे में जानकारी दी है, उसके आधार पर हम उनके चरित्र का अंकन या चित्रण कर सकते हैं। निवेदक स्वयं उच्च शिक्षित व्यक्ति है उपन्यास में चर्चित सांस्कृतिक विद्या केन्द्र के सदस्य हैं, इसी विचार केन्द्र में वह नौकरी करते हैं। भारतीय साहित्य धारा और पाश्चात्य धारा के साथ निवेदक की चिंतन शैलियाँ जुड़ी हुई है। मन को एकाग्र करके अपनी चिंतन धारा को गहराई तथा विस्तार देने का कार्य निवेदक करता है। छोटी-छोटी बात भी निवेदक की आँखों से छिपती नहीं इसलिए निवेदक द्वारा जिन-जिन बातों का वर्णन किया गया है वह सभी बातें ऑखों के सामने मूर्तिमान हो जाती हैं।

निवेदक स्वयं कवि प्रवृत्ति के हैं, अतः उनके विचार और चिंतन धाराओं में काव्यात्मकता दिखाई देती हैं। काव्य जैसे सुन्दर भाव उनकी शैली में भी दिखाई देते हैं। निवेदक उर्दू साहित्य पर भी अपना प्रभुत्व दिखाता है अपनी बात को, उर्दू शेरों को वह सुन्दर रूप से प्रकट करना चाहता है। इसके साथ ही कवियों की अंग्रेजी की सुन्दर पक्तियों को भी वह उद्घृत करता है। जीवन के कई पक्षों पर वह अपना स्पष्ट मत प्रकट करता है जैसे स्वतंत्रता, वासना, वेदना, अकेलापन आदि।

निवेदक युवा अवस्था पार करके प्रौढ़ावस्था में पहुँचा हुआ व्यक्तित्व है, जिसके जीवन का इतिहास यह कहता है कि पारिवारिक चिंताएँ, परेशानियाँ और कष्ट निरंतर उसके साथ लगे हैं। बड़े से परिवार का बोझ वह उम्र भर ढो रहा है, इस बोझ को वहन करते-करते वह स्वयं टूटने को आया है। उसके परिवार में कमाने वाला वह अकेला व्यक्ति है। लंबी बीमारियाँ बहुत बड़ा कर्ज़, गरीबी, दरिद्रता यह सभी बातें निवेदक के जीवन के साथ लगी हुई हैं। वह स्वयं अपने आपको असफल व्यक्तित्व मानता है। वह यह भी मानता है कि जगत और उसमें जमीन आसमान का अंतर है। अपने जीवन के रहस्य को बताते हुए निवेदक यही कहता है कि वह विशेष रूप से किसी से दोस्ती नहीं रखता। परंतु विशिष्ट स्थितियों में व्यक्ति ही उसके दोस्त बनते हैं। जगत् उन्हीं में से एक है। लगभग दो वर्षों के क्रमशः बढ़ने वाले परिचय के बाद जगत् से उसकी दोस्ती हो गई। निवेदक समूह में ज्यादा देर रहना पसंद नहीं करते क्योंकि वहाँ समय गँवाने के अतिरिक्त कुछ नहीं है, ऐसी उनकी धारणा है।

निवेदक एकांत में पढ़ता लिखता है। चिंतन के धागे बुनता है। बैठे-बैठे अपनी विचार धारा को बहुत दूर तक बढ़ा सकता है। निवेदक स्वयं जहाँ तक हो सके सही राह पर चलना चाहता है, फिर भी अपने दोषों को वह भूलना नहीं है। वह किसी के हाथ की कठपुतली बनकर नहीं रहना चाहता, परन्तु अपनी मजबूरी और विवशताओं को अच्छी तरह से जानता है। वह अपने पूर्व जीवन में कुछ नौकरियाँ छोड़ चुका है। परन्तु अब वह ऐसा विचार भी नहीं कर सकता, अपने बाल बच्चों और परिवार को जैसे-तैसे चलाते रहने में ही उसे धन्यता होती है। पूरी तरह से उदास तथा निराश ऐसा लेखक का व्यक्तित्व है। मध्यम वर्गीय परिवार का ऐसा व्यक्ति है जो किसी भी तरह अपनी जिम्मेदारियों को निभाना चाहता है। मजदूरों के गंदे होटलों में उसे संतोष और शांति मिलती है। निवेदक (लेखक) पूरी तरह जानता है कि उनके घर में सभी प्रकार के दुर्भाग्य मौजूद हैं। वे वर्ग के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए, यह कहते हैं कि अपने वर्ग से मुक्ति असंभव है ।

निवेदक फिर भी एक सच्चा लेखक और मनुष्य है। वह यूंही किसी की प्रशंसा के योग्य है, ऐसे गुणों की तारीफ किए बगैर नहीं रहता, इसलिए वह तटस्थ दृष्टि रखकर भगवान और जगत् के बीच के अंतर को समझ सकता है। आसपास की घोर निराशा, उत्पीड़न उन सबके बीच अपना संतुलन बनाए रखकर लेखक अपने-आपको कार्यमग्न रखना चाहते हैं। निवेदक का चरित्र 'विपात्र' उपन्यास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। निवेदक के साथ ही उपन्यास का कथानक जुड़ा हुआ है अपने जीवन की सारी विसंगतियाँ, जीवन की सारी पीड़ाएँ इनके साथ लेखक विपरीत स्थितियों के साथ संघर्ष करके यह स्पष्ट करना चाहता है कि वह चाहे जैसी स्थितियों के साथ लड़कर अपना अलग सा स्थान बना लेगा।

निवेदक ने अंत में आशा की एक किरण दिखाई है उसका निश्चय है कि वह स्थितियाँ तथा आस-पास के बुरे परिवेश के सामने हार नहीं मानेगा।

निश्चित रूप से लेखक का यह चरित्र मनुष्य के लिए प्रेरणाप्रद और आदर्श है।

2) **जगत** जगत अर्थात् जगत सिंह, 'विपात्र' के प्रमुख पात्रों में महत्वपूर्ण चरित्र है। यह लेखक तथा निवेदक का मित्र है। उसमें कई गुण हैं जिनके कारण वह निवेदक तथा लेखक को प्रिय है। जगत् पढ़ा-लिखा युवक है। यूनवर्सिटी की ऊँची उपाधियाँ उसने प्राप्त की हैं। उसकी उम्र अधिक नहीं है वह तेईस साल का नवयुवक है। संपन्न कुल में जन्म हुआ धनी बाप का एक मात्र पुत्र है, उसकी स्त्री एम.ए.पास नवयुवती है। संपन्न कुल में जन्म होने पर भी वह गरीबी को अच्छी तरह से जानता है। अपनी माता की ओर से गरीबी के संस्कार उसे मिले हैं। जगत् को भी अपने जीवन में धक्के खाने पड़े थे । परंतु लेखक की तुलना में उसने कम दुःख उठाए हैं। जगत की शिक्षा-दीक्षा कॉन्वेंट स्कूल में हो गई थी, इस कारण उसकी अंग्रेजी साफ, शुद्ध तथा फरटिदार हुआ करती थी। ईसाइयों के उत्तमोत्तम गुणों को जगत् ने आत्मसात कर लिया था इसलिए वह दोनों प्रकार के साहित्यों में रस लेता था 'सर्मन ऑफ द माऊँट' में उसे जितनी रूचि थी, उतनी ही रूचि उसे पृथ्वी सूक्त में भी थी। जगत् उत्तम रूप से संस्कृत बोल सकता था। उसका सामान्य ज्ञान बड़ा विस्तृत था। अमरिका, फ्रांस, इटली आदि विदेशों में चलने वाली अति आधुनिक विचार धाराओं के साथ उसका परिचय था। लेखक ने उसे सर्वज्ञ कहा है। अमरिकन साहित्य उसे विशेष प्रिय था। इतना सब होने के बाद भी कामयाबी जगत् से दूर ही थी। जगत् बड़ा एकांत प्रिय युवक था। कमरे में घंटों अकेले बैठकर वह विचार कर सकता था। घंटों बैठकर पढ़ाई कर सकता था। देश-विदेश के ग्रंथालयों से उसके पास कई पुस्तकें आया करती थीं । भारत की सर्वोच्च 'टीचर्स असोशिएशन' का वह सदस्य भी था। अमरिका के सेमीनार में उसने हिस्सा भी लिया था।

ज्ञान की हर एक बात के साथ जगत् को लगाव था। जगत् के स्वभाव में कुछ त्रुटियाँ भी थीं। जगत् बैठे-बैठे सपने देखा करता था। उसने 'ऑक्सफर्ड' से डिग्री प्राप्त की थी, परंतु वह अपना केरियर न बना सका। सामाजिक क्षेत्र में उतरकर अपने आपको सफल बनाने की क्षमता शायद जगत के पास नहीं थी। उसका एक कारण था, उसकी आयु कम थी। उम्र के हिसाब से उसके पास अनुभव कम थे। जगत् लेखक की दृष्टि से अभी बच्चा था। आज भी एकनिष्ठ रहकर ज्ञान की साधना कर सकता था। आज भी वह मनुष्यता पर सहज रूप से विश्वास करता था। लोग उसके भोलेपन पर हँसते थे। और जगत् को पता ही नहीं चलता कि वे उस पर क्यों हँस रहे हैं ?

धनी, ज्ञानी, युवा होने के बावजूद भी जगत् की ट्रैजेडी यह भी थी कि भरी जवानी में उसके चेहरे पर असफलता की राख लगी हुई थी ।

बाहर की दुनिया के साथ समझौता कर लेने की धूर्तता उसके पास नहीं थी। उसके मन में भी गरीबों के प्रति प्रेम, समाज के मक्कारों के प्रति घृणा थी। कुछ भी हो मनुष्यता पर

सहज विश्वास करने वाले इस युवक में सभी प्रकार के गुण मौजूद थे। इसलिए लेखक के साथ उसकी दोस्ती हो गई थी।

समाज की कई समस्याओं को उद्‌घााटित करने के लिए जगत्‌ का चरित्र अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

3) **बॉसः-** उपन्यास में जिनका बार-बार उल्लेख आता है, जिनके साथ उपन्यास की कई समस्याएँ जुड़ी हैं वह चरित्र है बॉस का। बॉस सांस्कृतिक विद्या केंद्र के संस्थापक हैं। सांस्कृतिक केंद्र की स्थापना एवं देखभाल में उन्होंने जीवन के कई क्षण लगा दिए हैं।

इस केंद्र के साथ जुड़े हुए सदस्यों से उनके संबंध अच्छे हैं। वे सदस्यों की देख-भाल और सहायता करते हैं । इस विद्या केंद्र से वे एक पैसा भी नहीं लेते हैं ।

बॉस के मन में केंद्र के सभी सदस्यों के प्रति प्रेम है। बॉस की हमेशा यह कोशिश रहती है कि विद्या केंद्र के सभी सदस्य अच्छे ढंग से जिएं। उनकी गिनती उच्च वर्ग में हो जाए। उनकी चाल ढाल उनके कपड़े उच्च दर्जे के हों शायद इसलिए हर सदस्य पर वह कड़ी नजर रखते हैं। बॉस का पूर्व जीवन विवादास्पद है। उसके पहले वह एक सूती मिल में काम किया करते थे। वे वहाँ असिस्टेंट मैनेजर थे। यह मिल एक प्रसिद्ध अंग्रेज कंपनी की थी। अग्रेजों ने देश की स्वाधीनता के बाद इस मिल को हिंदुस्तानियों के हाथों बेच दिया। जाते-जाते अंग्रेजों ने अपनी प्यारी नौकरानियों के नाम बड़ी जायदादें खड़ी कर दी । यह नौकरानियाँ अंग्रेजों की प्रेमिकाएँ थीं। लोगों क़ा कहना है कि संभवतः बॉस की भी ऐसी प्रेमिकाएँ रही होंगी।

लोग कई कारणों से बॉस का तिरस्कार किया किया करते थे। एक कारण यह था कि वह स्थानीय नरेश के ॲटर्नी थे । नरेश के यहाँ उनका आना-जाना था । उसी की सहायता से बॉस ने विद्या केंद्र खोल दिया था। बॉस बड़ी-सी जमीन के मालिक थे। कई प्रकार के छोटे बड़े धंधों में उन्होंने पूँजी लगायी थी। उनके आस-पास के बहुत से सेठ साहूकारों पर उन्होंने उपकार किया था। बॉस दूसरों को प्रेम करना जानते थे। अपने एहसान तले दूसरों को दबाना जानते थे। किसी पर भी उपकार करके उसे अपने अधिकार में कर लेना बॉस का प्रिय खेल था। अपने प्रेम के ऐवज में वे दूसरों से बहुत कुछ वसूलना जानते थे। वे कायदे के पाबंद थे। कानून के अनुसार कोई भी कार्य करने से हिचकिचाते नहीं थे। अपने समय में अंग्रेजों के वह वफादार नौकर थे। अंग्रेजों के बाद भी कुछ दिनों तक वह मिल में असिस्टेंट रहे थे। बाद में स्थानीय मारवाड़ियों के साथ न पटने कारण बॉस ने इस्तीफा दिया था। भूतपूर्व मुख्यमंत्री से उनकी खूब पटती थी, इसलिए अधिकारी वर्ग पर उनका खास प्रभाव था। इस शहर के वे प्रभावशाली और शक्तिशाली व्यक्ति थे। सामाजिक संदर्भ देखते हुए लोगों की धारणा उनके प्रति अच्छी नहीं थीं। अभी बॉस अकेले पड़ गए हैं । उनकी पत्नी जल्दी मर गई थी। उनके दोनों बेटे बड़े हो गए थे। बॉस अधिकतर समय विद्या केंद्र में बिताते थे। बहुत ज्यादा अकेले होने के कारण समय कैसे काटे यह एक समस्या उनके लिए थी। विद्या केंद्र के कर्मचारियों का उनके यहाँ रोज दरबार लगा करता था। जो उनके दरबार में नहीं जाता, वह निरंतर अपने

बारे में शंकित रहता। बॉस का स्वभाव बहुत तेज था। बाद में उनके स्वभाव में एक अजीब प्रकार का दयालूपन आ गया था। पहले वे जिद्दी और न्यायप्रिय थे। अब एक अजीब नरमी उनके स्वमाव में दिखाई देने लगी थी। बॉस ठिंगने कद के, चौरस, चिकनी पीठ के व्यक्ति थे। गोल चहरे में एक अजीब तिकोनापन था। छोटी सी ठुड्डी पर संवेदनशील नाक थी। एक क्षण भर में क्रोधित होते थे और दूसरे क्षण शांत होकर मजेदार किस्से सुनाया करते थे। उनके स्वभाव में संवेदनशील मनुष्यता थी। वह अपने साथियों की सहायता के लिए दौड़ पड़ते थे। उनका स्वभाव ऐसा विचित्र था कि जिस पर प्रेम करते उस पर प्रेम का अधिकार चलाते। प्रेम की तानाशाही उनमें थी। प्रेम के अधिकार का प्रयोग वे निःस्वार्थ भाव से किया करते थे। मजदूरों के साथ उनकी विशेष रूप से नहीं पटती थी।

बॉस यद्यपि जगत्, लेखक के अधिकारी हैं यद्यपि वह दूसरों पर उपकार करते हैं, तो भी बॉस और उनका दरबार लगाना किसी को अच्छा नहीं लगता था। लेखक की दृष्टि से बॉस अपनी जगह सही है क्योंकि अपना अकेलापन काटने के लिए वह जो भी कुछ करते हैं, उचित ही करते हैं, परन्तु दूसरी ओर लोगों की स्थितियों और उनकी स्थिति में अंतर है। लोगों की आयु और उनकी आयु में अंतर है। लोग अपनी मर्जी के अनुसार जीवन जीना चाहते हैं। और कहीं अप्रत्यक्ष प्रेम के अधिकार को अस्वीकार करते हैं।

'विपात्र' उपन्यास के बॉस का चरित्र जगत् एवं लेखक जितना ही महत्वपूर्ण है।

4) भनावतः- लेखक और जगत् का यह दोस्त है । परंतु भनावत लेखक और जगत् के स्वभाव से मेल नहीं खाता । यह एक अलग प्रकार का चरित्र है जो उपन्यास की समस्या को स्पष्ट करने में सहायक बनता है। यह गोरा चिट्टा और सुनहरे व्यक्तित्व वाला व्यक्ति है। एक प्रकार से यह समाजशास्त्री और राजनीति शास्त्री माना जाता है। लेखक की दृष्टि से मिस्टर भनावत एक अजीब सी शख्सियत है, यह बड़ा मजेदार आदमी है । समाज और व्यक्तियों के बारे में इसके विचार स्पष्ट हैं। वह अपने आपको मारवाड़ी का बच्चा कहता है। यहाँ और बीकानेर में उसके कई मकान हैं। भनावत अपने बाप के बारे में भी अच्छे बुरे विचार व्यक्त करता है। उसके पिता जी एक दूकान पर मुनीम थे। वह अपने लड़के के हाथ में तराजू पकड़वाना चाहते थे। व्यापार और तिजारत के सब गुण उन्होंने भनावत को सिखा दिए थे। पर उसने अपने पिताजी की बात नहीं मानी । वह बगावत कर शिक्षा के क्षेत्र में उतर गया। इस समय वह लेखक के साथ विद्या केंद्र में अध्यापक के रूप में है।

भनावत पर बॉस के कई उपकार हैं, लेकिन भनावत हर समय बॉस की निंदा करता रहता है । बॉस के स्वाभाव की निर्दयता, बॉस की धूर्तता पर भनावत समय-समय पर ताने कसता रहता है। गरीबों के बारे में भनावत के ह्दय में दया है । वह यह स्वीकार करता है कि उन्हीं के पूर्वजों ने और पिताजी ने गरीबों को कर्जा दे-देकर उनका शोषण किया है। भनावत मजदूरों के साथ उनकी बोली में बात करता है। मजदूरों के चाय की होटलों में बैठकर चाय पीने में उसे मजा आता है। भनावत बॉस को भी शैतान मानता है। वह उनके शैतानी ढाँचे में बैठने से इन्कार करता है। अब तक भनावत की पंद्रह नौकरियाँ हो चुकी है। इसलिए वह अपनी नौकरी सँभालकर ही बॉस के साथ अपने ताल्लुक रखना चाहता है ।

वह नहीं चाहता है कि नौकरी भी उसके हाथ से निकल जाए । भनावत की निरीक्षण शक्ति अद्भुत है वह यहाँ के लोगों के साथ घुलमिल गया है। भनावत वहाँ की जनता को भली प्रकार से जानता है। एक समाजशास्त्री होने के नाते वह समाज की बुराइयाँ बारीकी से देखता है। उसका कहना है कि कोई हम पर कितना भी उपकार क्यों न करें। उसकी बुराइयाँ को बुरा कहने में क्या हर्ज है ? इसलिए हर किसी की बुराई को स्पष्ट रूप से कहता है। निंदा करते हुए वह डरता नहीं । बॉस में जो बुराइयाँ है, उनको बताकर अपने समय बिताने का साधन मानता है। उसके बारे में एक बुरी बात यह थी कि वह दूसरों की बुराइयाँ उसके मन बहलाव की चीजें बन जाती थीं ।

भनावत अपने दुर्गुणों, गुणों और ऐबों के साथ इस मतलबी संसार में रहने योग्य इन्सान था। हवा का रूख देखकर बात करना वह खूब जानता था।

*****

२.कहानी

आधुनिक हिंदी कहानी
संपादक डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

आधुनिक हिंदी कहानी : परिचय

यह आधुनिक हिन्दी कथा एवं कहानियों का संग्रह है। इसके अंतर्गत स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रकाशित हिंदी कहानियों का समावेश है। स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय जन जीवन में अलग-अलग स्तरों पर तेजी से बदलाव आता गया। अच्छे-बुरे परिणाम सामने आये। हर एक का जीवन स्तर अलग-अलग रूपों में बदल गया इस बदलते हुए भारत के जन जीवन को स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी ने नजदीक से चित्रित किया है।

स्वतंत्रता के पूर्व समाज एक संघ था, उसके सामने आजादी के लिए लड़ने की ललक थी। सब की आँखों में आजाद भारत की तस्वीर थी। अपना स्वार्थ त्याग कर लोग एक ध्येय के लिए प्रतिबद्ध हुए थे। परिणामस्वरूप भारत को स्वतंत्रता मिली। लोगों का एक सपना तो पूरा हुआ परन्तु स्वतंत्रता के बाद समाज में तेजी से बदलाव आ गए। भारतीय परिदृश्य बदलते गए राम-राज्य, ग्राम राज्य, आर्थिक समानता, सब को रोजगार ऐसे जो सपने थे उनका नामोनिशान कहीं पर नहीं था। स्वतंत्रता तो मिल गई लेकिन साधारण मनुष्य जिसे आम-आदमी कहते हैं उसका जीवन वैसा कि वैसा रहा। सन् 1952 के बाद तो समाज खोखला होता हुआ नज़र आया। आम मनुष्य के जीवन में जो बुनियादी और कल्याणकारी परिवर्तन होने की चाह लोगों के दिलों में थी, वह परिवर्तन न हो पाया। समाज के आम लोग गरीब से गरीब, विवश से विवश होते गए। जो स्वतंत्रता प्राप्त हुई उसका भी उपभोग उचित रूप में न ले सके।

हर बार आम चुनाव आते हैं, वोट माँगे जाते हैं, आम आदमी हर बार कुछ न कुछ उम्मीद लगाकर वोट देता है, लेकिन जो भी सरकार आती है वह पहली सरकार के समान ही होती है। पहले आशा-आकांक्षा के सपने, फिर सुख की प्रतीक्षा, फिर सपनों का टूटना या मोहभंग, आक्रोश और विद्रोह के स्वर-ये सारी स्थितियाँ स्वातंम्योत्तर हिन्दी साहित्य में चित्रित हुई हैं।

इस चित्रण के अंतर्गत साधारण मनुष्य, मध्यमवर्गीय जीवन जीनेवाला मनुष्य, रोजी रोटी के लिए जी तोड़ मेहनत करने वाला मनुष्य ये सारी बातें आती हैं। मनुष्य जीवन के साथ जुडे अनेक क्षेत्र उनमें फैला हुआ भ्रष्टाचार, राजनीतिक क्षेत्र की भ्रष्ट नीति, नेताओं का दोगला व्यवहार, अवसर वादिता-प्रशासनिक भ्रष्टाचार-आदि सभी विषय कहानी में चित्रित होने लगे। ये सभी विषय लेखकीय चिंता के केन्द्र में आते हैं।

जैसे ही देश स्वतंत्र हुआ समाज में औद्योगिकरण की धूम मच गई । किसान और प्रौद्योगिकी का क्षेत्र विकसित होने लगा । कृषि के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग होने लगे। देश की

आत्मनिर्भरता बढ़ने लगी। देश के विकास के साथ हर एक क्षेत्र में, नई-नई समस्याएँ भी निर्माण हुईं। नगरीकरण, विस्थापन ग्रामांचलों की संस्कृति को धक्का आदि से संबंधित समस्याएँ निर्माण हुईं । इनके कई प्रकार के परिणाम सामने आए। मध्यवर्ग का गुणात्मक विकास हुआ, पूँजीपतियों एवं धनिकों का एक नया वर्ग उदित होने लगा। अनेक प्रकार से मजदूरी एवं परिश्रम करने वाले श्रमिकों की संख्या भी बढ़ गई।

इस कालखंड में मध्य वर्ग उभरकर आया अर्थात् कहानी लेखकों की कहानियों में बड़ी मात्रा में मध्य वर्ग का चित्रण होने लगा। यह एक वर्ग जिसको बहुत ही प्रछन्नता के साथ परिवर्तनों के साथ मुकाबला करना पड़ा। औद्योगिकीकरण ओर बढ़ता आर्थिक दबाव इस कारण इस परिवार के मूल्यों का विघटन हुआ है। जीवन की अपेक्षाएँ और वास्तविकताएँ इनके द्वंद में वह कुंठित हो गया, पारिवारिक संबंधों की मान मर्यादा टूटने लगी। व्यक्तिवाद उसकी पहचान बन गई। यह वर्ग सजग है वह खरे खोटे की पहचान करके ही स्वीकृति-अस्वीकृति निश्चित करता है। यह वर्ग व्यक्ति के रूप में समाज से अलग है और व्यक्तित्व के विघटन को भोग रहा है। ऐसे मध्यवर्ग की कई प्रतिच्छाबियाँ आधुनिक अर्थात् स्वातंत्र्योत्तर कहानी में अंकित है।

मजदूरों का जीवन एवं उनका संघर्ष और विवशताओं का चित्रण भी कहानियों में आया है। गाँवों और वनांचलों के जीवन पर भी आधारित कथा लेखन हुआ जिसे आँचलिक लेखन कहा जाता है। इस प्रकार हिन्दी लेखक भौगोलिक, सामाजिक, मनौवैज्ञानिक क्षेत्र तक भी अपनी दृष्टि डालता है।

नारी मुक्ति के भाव एवं स्त्री पुरुष संबंधों के प्रसंग में गैर-रोमैंटिक, वस्तुनिष्ठ और किसी सीमा तक उन्मुक्त दृष्टि का भी विकास हुआ है। मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोवती आदि की कहानियाँ नारी जीवन के विषय में ही नहीं तो नारी जाति से सहानुभूति रखने वाले पुरुष रचनाकारों की कहानियाँ कहती है।

स्वतंत्रता के बाद कहानी जगत में 'नयी कहानी' की अवधारणा आयी। इसका आरंभ 1950 के आस-पास से ही हुआ। इसका तटस्थ चित्रण पर बल है। परम्परागत रूप में आई कहानी के ढाँचे इस काल में टूट रहे हैं। शिल्प का गठन भी अलग है। विषय एवं शिल्प की दृष्टि से विविधता उत्पन्न हो गई है। मध्य वर्गीय एवं महानगरीय जीवन के चित्र इसमें हैं।

इस दौर के पूर्व के लेखकों में मोहन, राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव आदि का नाम आता है तो नई काहनी के अंतर्गत फणीश्वर नाथ रेणु, शिव प्रसाद सिंह, शैलेश मटियानी आदि लेखक आँचलिक कथा लेखन के महत्पूर्ण रचनाकार हैं।

नई कहानी के बाद सचेतन कहानी, अकहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी और प्रगतिवादी जनवादी कहानी ऐसे आंदोलन निर्माण हुए।

कहानियों का परिचय

(१) रस प्रिया -फणीश्वर नाथ 'रेणु'

फणीश्वर नाथ 'रेणु' आँचलिक कहानीकार के रूप में जाने जाते हैं। 1954 में उन्होंने 'मैला आँचल' उपन्यास लिखा और वे इसके साथ प्रसिद्व हुए। आँचलिक शब्द स्वयं रेणु के द्वारा प्रयुक्त शब्द है ।

वे बहुत अच्छे कहानीकार हैं। उनके कहानी संग्रह हैं- आदिम,रात्रि की महक, अगिनखोर, श्रावणी दोपहरी की धूप और अच्छा आदमी। नई कहानीकार के अंतर्गत आते हुए भी उनकी रचनाओं की संवेदना भिन्न है। उनकी कहानियों का प्रमुख क्षेत्र स्वतंत्रता के बाद का भारतीय ग्राम जीवन है।

रेणु के शब्द परिवेश और पात्र की एक-एक भंगिमा और ध्वनि के व्यंजक हैं। पात्र और परिवेश को वे अद्‌भुत रूप में जीवंत कर देते हैं।

इसके अतिरिक्त -मैला आँचल, परती परिकथा, दीर्घतया, जुलूस, कितने चौराहे और पल्टू बाबू रोड-उनके प्रसिद्व उपन्यास हैं।

'रसप्रिया' आँचलिक कहानियों में सचमुच प्रति-निधि कहानी है। रेणु जी की यह बहुचर्चित कहानी है।

इस कहानी के मध्य में मैथिली भाषा के कवि विद्यापति की रचना 'रस प्रिया' की चर्चा है। 'रसप्रिया' से कुछ पद लेकर गाँव में गायक एवं वादक मंडली विद्यापति नाच करते थे। अपभ्रंश की भाषा में, रसप्रिया, मिरदंगिया ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ है। दस बारह साल तक रसप्रिया के पद गा-गाकर एवं मृदंग बजाकर पंचकौडी ने बहुत नाम कमाया था। वह मिरदंगिया और नर्तक भी था । वह अपने जीवन काल में 'विदापत -नाच' के द्वारा गायन-नर्तन-वादन करके बडे लोगों के घर मनोरंजन किया करता था। उसी से कुछ कमाता था। पंचकौड़ी के पास आज वह विद्या तो है लेकिन वह ऊँगली टेढ़ी हो जाने के कारण ठीक से मृदुंग बजा नहीं पाता और अतिरिक्त गाँजा-भाँग के सेवन से उसका गला भी बिगड़ गया है, अतः उसके जीवन में उसे जिस कला ने आधार दिया थ्ा वह उतनी निपुणता से गाता बजाता नहीं। आज उसकी यह स्थिति है कि वह गले में ढ़ोल लटकाकर 'धा ति धा तिंग' इतना ही बजा पाता है। गाँव के लोग उसे कहते हैं रसप्रिया गा रहे हो या ठेठरी कर रहे हो? इस बात की पीड़ा उसके मन में है।

दो साल बाद वह इस होम में आया है। आजकल विदापत की चर्चा ही उठ गई है। यहाँ कुछ लोग तो है जो पदों की कुछ कद्र करते हैं। 'मिरदंगिया' अर्थात् मृदंग बजाने वाला पंचकौडी एक बालक के चेहरे की सुदंरता देख कर रीझ जाता है। जब उसने अपनी मंडली बनायी थी तो वह मंडली में नाचने वाले, लड़की मुँह लडके की खोज करता। आज भ्ी मोहना

को देखकर उसे ऐसा ही लगा कि वह उसे नाच सिखाएगा और यह कला फिर से जीवित होगी। परनतु वह जानता है मोहना बीमार है, उसके पेट में तिल्ली है। वह एक अच्छा वैद्य भी है। लेखक कहते हैं एक झुंड बच्चों का बाप एक पारिवारिक डॉक्टर की योग्यता हासिल करता है ।

बाद में पंचकौड़ी को धीरे-धीरे पता चला कि मोहना की माँ उसके पूर्व जीवन में आयी उसकी एक बाल विधवा प्रेमिका है, जिसके साथ उसने केवल प्रेम का नाटक किया था। रमपतिया के पिता जोधन गुरू जी के यहाँ वह जात छिपाकर आया था, वह मूल गैनी पाने, मुख्य गायकी सीखने आया था परन्तु गुरू जी ने उसका हुनर देखकर उसके हाथ में मृदंग थमा दिया था ।

जब गुरूजी ने रमपतिया के साथ विवाह करने की बात चलाई तो वह भाग गया था । तब गुलाब बाग मेले में रमपतिया उसे मिलने आई थी, पर उसने उस पर लांछन लगाया था। भगवान को साक्षी मानकर रमपतिया ने उसे दसदुवारा द्वारा कहा था। उसी रात उसकी ऊँगली टेढ़ी हो गई थी। उसके मन में गत जीवन के बारे में अपराध बोध है।

वह जान लेता है यह रमपतिया को बेटा है तो उसे इलाज के लिए पैसे देता है और मोहना से कहता है तुझ जैसा बेटा पाकर तेरी माँ तो महारानी है, लोग सच ही कहते हैं मैं दस द्वार घूमने वाला याचक हूँ-----

यह कहानी बहुत ही सधे हुए शिल्प में रची गई है। बिहार क्षेत्र का ग्रामांचल एवं उसके चरित्र इसमें साक्षात् रूप में जी उठे हैं।

(२) कस्बे का आदमी: कमलेश्वर

कमलेश्वर जी को आधुनिक हिंदी कहानी एवं उपन्यास जगत् के शलाका पुरुष के रूप में जाना जाता है। उन्होंने संपादन का कार्य किया 'संकेत,' 'इंगित', 'कहानी' 'नई काहानियाँ' और 'सारिका' के संपादक के रूप में कार्य किया। 'सारा आकाश' 'आँधी' और मौसम, फिल्मों के पटकथा और संवाद लेखक तथ्ा 'अमानुष' फिल्म के संवाद लेखक के रूप में उन्हें बहुत प्रसिद्दि मिली ।

वे बहुमुखी कर्तृत्व के धनी हैं। उनके कहानी संग्रह हैं, राजा निरबंसिया, कस्बे का आदमी, खोई हुई दिशाएँ आदि।

उनके उपन्यास हैं 'एक सडक सतावन गतिलयाँ' 'डाक बंगला', 'तीसरा आदमी', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'काली आँधी', 'आगामी अतीत', 'समुद्र में खोया आदमी', 'सुबह दोपहर शाम', इस दशक में उनका एक सुप्रसिद्ध एवं बहुचर्चित उपन्यास है- 'और कितने पाकिस्तान'।

कमलेश्वर जी ने राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है। 'कस्बे का आदमी' उनकी प्रसिद्ध कहानी है। नई कहानी के अंतर्गत यह महत्वपूर्ण कहानी है।

यह कहानी छोटे महाराज नाम के एक आम आदमी की कहानी है। वे जाति के वैश्य थे। परन्तु कर्म के अनुसार लोग उन्हें महाराज कहकर पुकारने लगे। छोटे महाराज के बापदादा सोने-चाँदी का काम करते थे परन्तु जब वे अनाथ बने तो उनकी चाची, उनकी देखभाल करने लगी घर में एक दिन बड़ी चोरी हुई तो घर ही लूट गया। फिर यहाँ-वहाँ घूमते फिर अपने गाँव के पुराने मकान में आकर रहने लगे। मुख्तार ने औने-पौने में मकान झाड लिया। फिर चाची ने जनाना अस्पताल में नौकरी पकड़ी, छोटे महाराज ने तब से लोगों को पानी पिलाने का काम किया, एक डॉक्टर के यहाँ काम किया, बिस्कुटों का ठेला लगाया। लोगों के घरों में पानी के डोल पहुँचाए। जहाँ पानी पिलाने के लिए बैठते वहाँ इमली के पेड़ पर छत्ता लगा था, उसे एक कंजर द्वारा तोड़कर शहद निकाला इस सौदे के कंजर के पास आधे पैसे बाकी थे, बहुत दिन हुए तो उसकी झोपड़ी पर तगादा लगाने गए, जब पैसे दिए नहीं तो तोता उठाकर ले आए और उसे पालने लगे। उन्होंने तोते को 'सीता-राम' कहना सिखाने का प्रयास किया परन्तु तोता उन शब्दों को सीख ना पाया। तोते का नाम रखा संतू संतू छोटे महाराज के एकाकी जीवन का सहारा था, वे उसे हमेशा अपने साथ चिपकाए फिरते थे। वे गाड़ी में आकर उनके गली में रहने वाले शिवराज के पास बैठे। वे रेल गाडी से कही ब्याह में गए थे, साथ स्टेशन पर तोते को भी ले गए थे। तब शिव राज ने उन्हें पहचाना और डिब्बे में बुला लिया ।

शिवराज ने देखा छोटे महाराज दुबले हो गए हैं, बूढ़े और असहाय हो गए हैं। उन दोनों ने एक स्टेशन पर मिठाई खाई। स्टेशन आने पर उतरे ताँगे में बैठे, तोते का पिंजरा साथ में था। तांगे से उतरते समय विवाह के समारोह में मिला सिल्क का कपड़ा उसने शिवराज को दिया।

दूसरे दिन वे बीमार पड़े शिवराज दिखाई दिया तो अपने प्राणप्रिय तोते को विश्वास के साथ पालने के लिए दिया । दो तीन दिन के बाद उनको संतू के बिना कुछ अच्छा नहीं लगा, फिर कल दोपहर संतू यानि उनके तोते की करूण पुकार उन्हें सुनाई दी थी। जब कोई दिखाई नहीं दिया तो अंत में स्वयं शिवराज के यहाँ गए, देखा तो दुःखी हो गए तोते की पूँछ के लंबे-लबे पंख बच्चे खेलने के लिए नोंच ले गए थे। तोते को घर लाने के बाद उन्होंने पिंज़ड़े पर कपड़ा डाला ताकि बिल्ली देख न ले और वह सुरक्षित रहे, परन्तु दूसरे दिन शिवराज ने देखा छोटे महाराज के प्राण-पेखेरू उड़ गए थे और पिंजरा खाली था ।

उपर्युक्त कहानी में एक गरीब, संघर्ष शील आम आदमी की कथा है, जो अंत तक तोते के मुँह से सीताराम सुनने के लिए तरसता रहा और इसी इच्छा को लेकर दुनिया से चल बसा।

को देखकर उसे ऐसा ही लगा कि वह उसे नाच सिखाएगा और यह कला फिर से जीवित होगी। परनतु वह जानता है मोहना बीमार है, उसके पेट में तिल्ली है। वह एक अच्छा वैद्य भी है। लेखक कहते हैं एक झुंड बच्चों का बाप एक पारिवारिक डॉक्टर की योग्यता हासिल करता है ।

बाद में पंचकौड़ी को धीरे-धीरे पता चला कि मोहना की माँ उसके पूर्व जीवन में आयी उसकी एक बाल विधवा प्रेमिका है, जिसके साथ उसने केवल प्रेम का नाटक किया था। रमपतिया के पिता जोधन गुरू जी के यहाँ वह जात छिपाकर आया था, वह मूल गैनी पाने, मुख्य गायकी सीखने आया था परन्तु गुरू जी ने उसका हुनर देखकर उसके हाथ में मृदंग थमा दिया था ।

जब गुरूजी ने रमपतिया के साथ विवाह करने की बात चलाई तो वह भाग गया था । तब गुलाब बाग मेले में रमपतिया उसे मिलने आई थी, पर उसने उस पर लांछन लगाया था। भगवान को साक्षी मानकर रमपतिया ने उसे दसदुवारा द्वारा कहा था। उसी रात उसकी ऊँगली टेढ़ी हो गई थी। उसके मन में गत जीवन के बारे में अपराध बोध है।

वह जान लेता है यह रमपतिया को बेटा है तो उसे इलाज के लिए पैसे देता है और मोहना से कहता है तुझ जैसा बेटा पाकर तेरी माँ तो महारानी है, लोग सच ही कहते हैं मैं दस द्‌वार घूमने वाला याचक हूँ-----

यह कहानी बहुत ही सधे हुए शिल्प में रची गई है। बिहार क्षेत्र का ग्रामांचल एवं उसके चरित्र इसमें साक्षात् रूप में जी उठे हैं।

(२) कस्बे का आदमी: कमलेश्वर

कमलेश्वर जी को आधुनिक हिंदी कहानी एवं उपन्यास जगत् के शलाका पुरुष के रूप में जाना जाता है। उन्होंने संपादन का कार्य किया 'संकेत,' 'इंगित', 'कहानी' 'नई काहानियाँ' और 'सारिका' के संपादक के रूप में कार्य किया। 'सारा आकाश' 'आँधी' और मौसम, फिल्मों के पटकथा और संवाद लेखक तथ्ा 'अमानुष' फिल्म के संवाद लेखक के रूप में उन्हें बहुत प्रसिद्वि मिली ।

वे बहुमुखी कर्तृत्व के धनी हैं। उनके कहानी संग्रह हैं, राजा निरबंसिया, कस्बे का आदमी, खोई हुई दिशाएँ आदि।

उनके उपन्यास हैं 'एक सडक सतावन गतिलयाँ' 'डाक बंगला', 'तीसरा आदमी', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'काली आँधी', 'आगामी अतीत', 'समुद्र में खोया आदमी', 'सुबह दोपहर शाम', इस दशक में उनका एक सुप्रसिद्ध एवं बहुचर्चित उपन्यास है- 'और कितने पाकिस्तान'।

कमलेश्वर जी ने राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है। 'कस्बे का आदमी' उनकी प्रसिद्ध कहानी है। नई कहानी के अंतर्गत यह महत्वपूर्ण कहानी है।

यह कहानी छोटे महाराज नाम के एक आम आदमी की कहानी है। वे जाति के वैश्य थे। परन्तु कर्म के अनुसार लोग उन्हें महाराज कहकर पुकारने लगे। छोटे महाराज के बापदादा सोने-चाँदी का काम करते थे परन्तु जब वे अनाथ बने तो उनकी चाची, उनकी देखभाल करने लगी घर में एक दिन बड़ी चोरी हुई तो घर ही लूट गया। फिर यहाँ-वहाँ घूमते फिर अपने गाँव के पुराने मकान में आकर रहने लगे। मुख्तार ने औने-पौने में मकान झाड लिया। फिर चाची ने जनाना अस्पताल में नौकरी पकड़ी, छोटे महाराज ने तब से लोगों को पानी पिलाने का काम किया, एक डॉक्टर के यहाँ काम किया, बिस्कुटों का ठेला लगाया। लोगों के घरों में पानी के डोल पहुँचाए। जहाँ पानी पिलाने के लिए बैठते वहाँ इमली के पेड़ पर छत्ता लगा था, उसे एक कंजर द्वारा तोड़कर शहद निकाला इस सौदे के कंजर के पास आधे पैसे बाकी थे, बहुत दिन हुए तो उसकी झोपड़ी पर तगादा लगाने गए, जब पैसे दिए नहीं तो तोता उठाकर ले आए और उसे पालने लगे। उन्होंने तोते को 'सीता-राम' कहना सिखाने का प्रयास किया परन्तु तोता उन शब्दों को सीख ना पाया। तोते का नाम रखा संतू संतू छोटे महाराज के एकाकी जीवन का सहारा था, वे उसे हमेशा अपने साथ चिपकाए फिरते थे। वे गाड़ी में आकर उनके गली में रहने वाले शिवराज के पास बैठे। वे रेल गाडी से कही ब्याह में गए थे, साथ स्टेशन पर तोते को भी ले गए थे। तब शिव राज ने उन्हें पहचाना और डिब्बे में बुला लिया ।

शिवराज ने देखा छोटे महाराज दुबले हो गए हैं, बूढ़े और असहाय हो गए हैं। उन दोनों ने एक स्टेशन पर मिठाई खाई। स्टेशन आने पर उतरे ताँगे में बैठे, तोते का पिंजरा साथ में था। तांगे से उतरते समय विवाह के समारोह में मिला सिल्क का कपड़ा उसने शिवराज को दिया।

दूसरे दिन वे बीमार पड़े शिवराज दिखाई दिया तो अपने प्राणप्रिय तोते को विश्वास के साथ पालने के लिए दिया । दो तीन दिन के बाद उनको संतू के बिना कुछ अच्छा नहीं लगा, फिर कल दोपहर संतू यानि उनके तोते की करूण पुकार उन्हें सुनाई दी थी। जब कोई दिखाई नहीं दिया तो अंत में स्वयं शिवराज के यहाँ गए, देखा तो दु:खी हो गए तोते की पूँछ के लंबे-लबे पंख बच्चे खेलने के लिए नोंच ले गए थे। तोते को घर लाने के बाद उन्होंने पिंज़ड़े पर कपड़ा डाला ताकि बिल्ली देख न ले और वह सुरक्षित रहे, परन्तु दूसरे दिन शिवराज ने देखा छोटे महाराज के प्राण-पेखेरू उड़ गए थे और पिंजरा खाली था ।

उपर्युक्त कहानी में एक गरीब, संघर्ष शील आम आदमी की कथा है, जो अंत तक तोते के मुँह से सीताराम सुनने के लिए तरसता रहा और इसी इच्छा को लेकर दुनिया से चल बसा।

३) एक शुरूआत : निर्मल वर्मा

निर्मल वर्मा, अन्य कहानी लेखकों में कुछ अलग से लगने वाले कहानीकार हैं। निर्मल वर्मा स्वातंत्र्योत्तर काल के एक सशक्त एवं समर्थ कहानीकार हैं।

भाषा, संवेदना और विषय वस्तु की दृष्टि से निर्मल वर्मा की कहानियाँ हिंदी जगत में अनूठी है। इनकी कहानियाँ केवल भारतीय जीवन के साथ सीमित नहीं हैं। उनकी कहानियों में यूरोप की संस्कृति और परिवेश चित्रित हैं।

निर्मल वर्मा के कहानी संग्रह हैं- परिंदे, जलती झाड़ी, पिछली गर्मियों में, बीच बहस में कौवें और काला पानी। इनके उपन्यास हैं- वे दिन, लाल टीन की छत, एक चीथड़ा सुख ।

'चीड़ों पर चाँदनी' इनका लोकप्रिय यात्रा वर्णन है। 'एक शुरूवात' एक यात्रा वर्णन है। यह वर्णन स्थानों का नहीं, स्टीमर में बैठकर समुद्र यात्रा करते समय आस-पास का परिवेश और व्यक्तियों के साथ- बातें करते हुए लेखक को अंतर्मन में जो अनुभव हुआ उसका सूक्ष्म चित्रण है।

इस कहानी की कोई विशिष्ट पारंपारिक कथा नहीं है। लेखक एक लंबी रात और पूरा दिन लंदन से प्राग गए थे, प्राग से फिर लंदन जा रहे हैं। उनके सामने कोई युवती है शायद- बहुत देर से एक दूसरे के सामने चुपचाप बैठे हैं, वह कहती है- सागर एक डबडबाता स्वप्न है। स्टीमर के सभी यात्री डेक की कुरसियों पर चुपचाप से बैठे हैं, सब गुमसुम हैं। स्टीमर पर टेबुल पर ग्लास पड़े थे, अखबार के पन्ने फड़फडा रहे थे, तब लेखक को लगा जब पिछली बार इसी मार्ग से लेखक आए थे तब का और अब का वातावरण कितना भिन्न है?

तीन घंटे में वे स्टैंड पहुँचेंगे। लेखक के मन में आता है यह भी अनुभव है, यहाँ से फिर जीवन की घडियों की अनुभव की नई शुरूवात है।

उनके साथ एक यात्री है, जो अनमने हैं, उनकी नजर समुद्र पर टिकी है वे दोनों आपस में संक्षिप्त सी बातें करते हैं। लेखक को उनके चेहरे से उनकी उम्र का पता नहीं चलता क्योंकि कुछ झुर्रियाँ हैं, परन्तु उनके कोमल हाथों से उनके कम उम्र होने का पता चलता है। उसने भारत का उल्लेख स्ट्रेंज लँड 'इंडिया' ऐसा किया। लेखक कहते हैं उस दिन स्टीमर पर शाम की भीगी, उजली धूप में वह शब्द मेरे लिए कितना अजनबी बना था। वह यात्री उद्‌भ्रांत होकर बोला क्या तुम्हें सभी, आस-पास की हवा में मृत्यु है ऐसा नहीं लगता। उसके मत से जो बीत गया है उसे देखने लोग आते हैं। इसके मत से यूरोप का एक चेहरा ऐसा भी है जो अकेला है, और धीरे-धीरे मर रहा है।

लेखक देखता है, स्टैंड पास आने लगा है- उसके मन में आता है, मैं अपने देश से हजारों मील दूर यहाँ क्यों आया हूँ ? केवल पलायन या बचाव? उसे पिछले दिन याद आ गए भूखा-प्यासा वियना की सडकों पर भटकते रहने के बाद होटल के कमरे में उन्हें ऐसा लगा कि

इस स्थिति में डर भी है और मृत्यु भी इस मृत्यु में डर और मुक्ति की मिली जुली भावनाएँ हैं। लेखक का स्टैंड नजदीक आता है तो उतरने की तैयारी में सोचते हैं, मैं फिर से यूरोप आया हूँ चलो यह भी एक शुरूआत ही है।

४) दायराः राजेन्द्र यादव

राजेन्द्र यादव की विशिष्ट पहचान उनकी कहानियों के कारण बनी है। वे 'हंस' पत्रिका के संपादक हैं।

राजेन्द्र यादव के कहानी संग्रह इस प्रकार हैं-

देवताओं की मूर्तियाँ, खेल खिलौने, जहाँ लक्ष्मी कैद हैं। अभिमन्यु की आत्मछाया, छोटे-छोटे ताजमहल, किनारे से किनारे तक, टूटना, ढोल और अपने पार । उनके उपन्यास हैं- सारा आकाश, उखड़े हुए लोग, शह और मात, अनजाने अनदेखे पुल, मंत्रविध तथा मन्नू भंडारी के साथ लिखित 'एक इंच मुस्कान' उनका बहुचर्चित उपन्यास है।

स्वतंत्रता के बाद जो मध्य वर्ग उभर कर आया है उसकी सभी विशेषताओं को गैर रूमानी तरीके से राजेन्द्र यादव ने चित्रित किया है।

'दायरा' यह शीर्षक बहुत ही प्रतीकात्मक है। इस कहानी में एक ऐसा दायरा चित्रित किया गया है जिसमें मध्य वर्गीय परिवार एवं उसके सदस्य घूमते रहते हैं।

उनके जीवन की एक सीमा है, जिनके बाहर वे नहीं जा सकते उन पर परिस्थितियाँ एवं आर्थिक दबाव हावी हैं। उनके कार्यकलाप इसी दायरे के भीतर चलते हैं।

हरि एक मध्य वर्गीय परिवार का व्यक्ति है। उसके घर में बाल बच्चे हैं। पत्नी दिन रात रसोई घर में काम करती रहती है। परिवार का खर्चा बहुत है। जितना मिलता है उसमें ही घर के खर्चे देखने पड़ते हैं। कुछ बचता नहीं। इन सारी स्थितियों में वह सिनेमा देखना, कहीं पर सैर करना आदि बातें भी थोड़ी-सी राहत पाने के लिए कभी कभार पैसों का बड़ा हिसाब लगाकर करते हैं। कुछ पत्नी के लिए कुछ बच्चों के लिए ।

एक दिन हरि पास के थियेटर के सिनेमा के टिकट निकालकर लाता है। सिनेमा जाने की पूरी तैयारी घर में चल रही है। खिडकियाँ बंद की जा रही हैं उसकी पत्नी विभा नहाने गई है बस उसके आने भर की देरी है। इतने में विभा की अमरिका से लौटी बहन पुष्पा उसका पति बिहारी और उनके बच्चे बड़े सजधज कर कमरे में आए, आते ही उन्होंने खिडकियाँ खोली। हरि ने घर में बेटी को फिर से चाय बनाने के लिए कहा। उसने अमरिका से लौटे इस परिवार को देखा और फिर नई नज़र से अपने घर की चीजों को देखने लगा। पर्दों के रंग फीके पड गये थे, चाय की खाली प्यालियाँ थीं, गद्दों के कपड़े मैले लग रहे थे। एक मध्यवर्गीय परिवार के घर का पूरा नमूना वहाँ उपस्थित था। जो मेहमान आये थे उनके बोलचाल और

बैठने के ढंग से लगता था वे जल्दी नहीं जाएंगे। आखिर हरि ने कहा फिल्म का क्या है? फिल्म किसी दिन देखेंगे आप थोड़े ही रोज-रोज घर पर आते हैं? इस प्रकार सिनेमा के टिकट वापस करके वह आया तो, मिठाई, कोका कोला आदि में पैसे खर्च हुए। वह मन ही मन पैसों का हिसाब लगाने लगा।

उसकी पत्नी विभा फिर रसोई घर में घुस गई। बेटियाँ मदद करने लगीं, पड़ोस में रहने वाले एक गृहस्थ भी आए, और एक पत्नी और पति भी जाते-जाते उनसे मिलने आए। इस पर चाय-पानी, नाश्ता, भोजन, आदि में दिन निकल गया। विभा रात को रो रही थी, हम तो नौकर हैं, सारा दिन काम से फुर्सत नहीं मिली। दिन भर की भाग-दौड़ी में हरि का बदन दर्द करने लगा था, सारे दिन नकली मुस्कराहट स्वागत, हँसना और वह झल्ला कर दिन भर के लोगों का और खर्चे का हिसाब लगाने लगा। थियेटर इतने पास है, दो-चार महीने में कभी-कभार कार्यक्रम बनता है परन्तु वह भी इस प्रकार ऐसा उसका रविवार चला गया, बेचारे बच्चों को रविवार की ही छुट्टी मिलती है। आज वह सुबह से अखबार तक न पढ़ सका। दूसरे दिन हरि का सारा परिवार तैयार होकर अपने दोस्त और रिश्तेदारों के यहाँ निकले। विभा कहने लगी अब मैं तो किसी के यहाँ जाकर आराम से बैठूँगी। इस प्रकार पहले रविवार को हरि के परिवार पर जो बीती थी, वह अब किसी उसके मित्र या परिवार के लोगों पर बीतेगी ।

५). नन्हों: शिव प्रसाद सिंह

शिव प्रसाद सिंह की पहली कहानी 'दादी माँ' 'नई कहानी' आंदोलन की प्रवर्तक रचना मानी जाती है। इनकी कहानियों का संबंध मुख्यत: ग्राम जीवन से है। उनका गाँव ऐसा है जिसमें परम्परागत रूढ़ियाँ और प्रतिगामी शक्तियों के दबाब हैं तो दूसरी और इसमें देश स्वतंत्र हुआ उसके बाद की परिवर्तनकारी स्थितियों का चित्रण भी है। निम्न जाति के चरित्र उनकी कहानियों में चिचित्र हैं। मनुष्य की महिमा एवं जिजीविषा की कहानी वे लिखते हैं।

उनके कहानी संग्रह हैं। - आर-पार की माला, कर्मनाशा की हार, इन्हें भी इंतजार है आदि।

उनके उपन्यास हैं- अलग -अलग वैतरणी, गली आगे मुड़ती है, मंजुशिमा, शैलूप, नीला चाँद और वैश्वानर। 'नन्हों' मुख्य रूप से नारी चरित्र प्रधान कहानी है। ग्रामांचल के रीति-रिवाज, मनुष्य में छिपा बनावटी पन, स्वार्थ, आर्थिक दशा, इनमें नारी जीवन की शोकांतिका इस कहानी के माध्यम से चित्रित हुई है।

नन्हों का विवाह मिसरी लाल से हुआ था । वह जन्मजात लँगडा था। जन्म से ही उसकी एक टाँग छोटी थी। वह पिचके गालों का और काले रंग का था, वह लाठी टेककर कर उस पर फुदक कर चलता था नन्हों रूपवती थी, नव यौवना थी, उसके पिता ने मिसरी लाल के नाम पर रामसुभग का अर्थात् उसके ममेरे भाई को देखा था। नन्हों का डोला आया तो उसका विवाह मिसरीलाल के साथ हुआ शादी का पूरा वातावरण वैसा ही था जैसा हमेशा

होता है परन्तु नन्हों अपने भाग्य पर रोई जा रही थी। नन्हों के पिता को भी कुछ पता चल गया था परन्तु बडा घर और अच्छा लड़का पाने के लिए पैसे भी तो चाहिए इसलिए चुप बैठा।

रामसुभग अपनी भाभी नन्हों के पास जाकर बात करना चाहता है तो उसकी भीगी आँखें उसे कहीं का रहने नहीं देती। मुँह दिखाई के तौर पर उसकी माँ द्वारा दिए गये रुपये वह रेशम के रूमाल में बाँधकर रखता है पर दे नहीं पाता। एक दिन पानी का गिलास लेते समय उसने नन्हों के हाथों को छुआ तो नन्हों ने उसे खरी खोटी सुनाई। इसी बीच सहज होता हुआ भाभी देवर का रिश्ता फिर उलझ गया ।

रामसुभग ने उनके घर आना-जाना छोड़ दिया। मिसरीलाल स्वयं ही दूकान का माल लाने-जाने लगा । मिसरी लाल की दूकान रामसुभग के हाथ बँटाने से ही चल रही थी। एक दिन मिसरीलाल धूप में लू लगने से बीमार हुआ और चल बसा। रामसुभग आया, उसने घर में सब मदद की परन्तु घर पर वह कम ही रूकता था।

कुछ महीने बीते, एक दिन नन्हों चमटोली में कीर्तन सुनने गई, उसका भी मन रामसुभग के बारे में सोच रहा था, परन्तु रामसुभग ने जब उसे रात-बिरात ऐसा घूमना ठीक नहीं ऐसा कहा तो उसने कड़क कर जबाब दिया, मैं तुम्हारी जोरू नहीं हूँ।

उसके बाद राम सुभग कलकता गया। वहाँ से उसने नन्हों को चिट्ठी लिखी। वह आया और नन्हों के दु:ख के लिए वह स्वयं कारण है यह सोचकर उसने नन्हों से क्षमा माँगी, उसे लगा अब की बार तो नन्हों उसका स्वीकार करेगी परन्तु ऐसा नहीं हुआ, उसने उसका रूमाल और पैसे लौटा दिये। उसने कहा यह रूमाल मेरे पाँव बाँध देता है। मैं आज अपने पैरों पर खड़ी हूँ। आज तुम मुझे हारने मत दो। इस प्रकार नन्हों ने अकेले रहने का निर्णय लिया और दरवाजा बंद किया परन्तु वह रामसुभग के विचारों को मन से न निकाल सकी।

६) अकेली: मन्नू भंडारी

भारत की स्वतंत्रता के बाद हिन्दी साहित्य में नारी शिक्षा और जागरण के कारण, रचनात्मक लेखन का एक ऐसा भाग सामने आया है, जिसे नारी लेखन कहा जाता है। मन्नू भंडारी इस नारी लेखन की सबसे यशस्वी, लोक प्रिय और विशिष्ट रचनाकार हैं। स्वयं स्त्री अपने या अपनी जाति के विषय में क्या सोचती है, और परिवेश तथा मानवीय संबंधों को किस रूप में चित्रित करती है- इसका अनुभव मन्नू भंडारी की लेखनी से होता है। स्त्री का केवल चित्रण नहीं तो बदलते हुए परिवेश में, बदलते हुए संदर्भ, संबंध और स्वरूप का भी चित्रण हुआ है।

बदलती हुई नैतिकता, नारी मन के अंतर्द्वंद्व, जड बंधन, उनके प्रति असहमतता के दर्शन हमें मन्नू भंडारी के लेखन में होते हैं। नारी की अस्मिता एवं स्वावलंबन भाव भी चित्रित होता है। वे केवल नारी लेखन करने वाली लेखिका नहीं, समाज का चित्रण भी उनकी कहानियों में होता है।

मन्नू भंडारी के प्रकाशित कहानी संग्रह इस प्रकार हैं- मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, एक प्लेट सैलाब, यही सच है, त्रिशंकु। उनके उपन्यासों के नाम हैं- आपका बंटी, स्वामी, महाभोज, असिमाता। रोजन्द्र यादव के साथ 'एक इंच मुस्कान' उपन्यास लिखा है। बिना दीवारों के घर, 'महाभोज' उनके बहुचर्तित नाटक हैं।

'अकेली' कहानी सोमा बुआ की कहानी है। लेखिका ने कहानी के आरंभ में ही सोमा बुआ की स्थिति को बताया है कि सोमा बुआ बुढ़िया है, परित्यक्ता है और अकेली है। उनका जवान बेटा गया तो उनके पति इस दु:ख से तीर्थ स्थल में जाकर रहने लगे। संन्यासी बन गए। घर में अन्य कोई भी ऐसा सदस्य न था जो सोमा बुआ के अकेलेपन को दूर करे ।

उसके पति ऐसे संन्यासी थे, जो सालभर में एक महीना घर आते,जब आते तो सोमा बुआ का कहीं घूमना फिरना बंद होता, संन्यासी महाराज न कुछ अच्छी बातें करते थे न मीठे बोल बोलते थे। जब सोमा बुआ अकेली होती तो उसका जीवन आस-पास के पड़ोसी लोगों के भरोसे ही कटता था। वह गाँव में हर किसी के यहाँ जो समारोह होता वहाँ जाकर अपना अकेलापन दूर करती। बहुत काम करती, बदले में कोई भी अपेक्षा नहीं रखती। उसे लगता है संन्यासी महाराज को यह सब अच्छा नहीं लगता, उसके मत से वे सन्यासी हैं उन्हें दुनिया से कुछ लेना-देना नहीं है, मुझे सबके साथ संबंध तोड़कर कैसे चलेगा? वे साथ लेकर भी नहीं जाते सारा पुण्य अकेले लूटते हैं यहाँ आते हैं तो यह रोक-टोक।

सोमा बुआ का पति के साथ झगडा हुआ है। उसके पति का कहना है कि बुलावा आए बिना सोमा बुआ-किसी के घर क्यों जाती है? सोमा बुआ अपना दु:ख अपनी पड़ोसिन राधा भाभी को सुना रही है। राधा भाभी उसे समझाती है।

लगभग एक सप्ताह बाद सोमा बुआ पति को बताने लगी, देवर जी के ससुराल वालों की किसी लड़की का संबंध हमारे यहाँ भगीरथ जी के घर हुआ है। देवर जी के बाद हम उनके समधी हैं, वे हमें बुलायेंगे ही । संन्यासी महाराज ने पहले ही कहा था बिना बुलावे की जाओगी तो देखना ---। सोमा बुआ को विश्वास था निमंत्रण तो आयेगा ही । वह विवाह के बारे में पूछ-ताछ करती। किसी ने उनको बताया लिस्ट में उनका नाम है। उनको न्योता कैसे नहीं आएगी, सोमा बुआ राधा भाभी के यहाँ गई, कहने लगी खाली हाथ जाना अच्छा नहीं लेगगा, इसलिए मेरे पास जो है, मैं लाकर देती हूँ, मैं पुराने जमाने की हूँ तुम जो अच्छा समझ ो वह ले आना, समधियों के सामने फजीहत न हो।

सोमा बुआ के पास पैसे न थे, पुराने जमाने की एक सोने की अँगूठी जो उनके बेटे की निशानी थी वह राधा को बेचने के लिए दी।

कल शादी थी, बुआ ने बरसों बाद चूडियाँ पहनीं, साड़ी में रंग और अभ्रक लगाया। राधा भाभी चाँदी की सिंदूरदानी, एक साड़ी, एक ब्लाउज का कपडा लेकर आई। सारी तैयारी करके सोमा बुआ आनंदित मन से बुलावे की प्रतीक्षा करने लगी। तीन बजे तक उन्हें बुलाने कोई नहीं आया। वह छत पर खड़ी होकर बुलावे की राह देखती रही, पर कोई नहीं आया।

राधा ने अंधेरे में छत पर अकेली सोमा बुआ को देखकर कहा सर्दी में अकेली क्यों खड़ी हो, सात बज गए खाना नहीं बनाना है क्या ? तब उसके सामने साही स्थिति खुल गई। अपने आप पर नियंत्रण करते हुए सोमा बुआ ने कहा- दो जनों का खाना अभी बना लूँगी। बहुत निराशा से सारा सामान उन्होंने संदूक में सावधानी से रखा, चूडियाँ भी रखी और अत्यंत निराश मन से वह चूल्हा जलाने बैठ गई।

एक अकेली, दु:खी स्त्री की यह कहानी है। जिसकी आशा निराशा में बदल जाती है। समधी के विवाह में कुछ भेंट देने के लिए उसने जो मोल दिया है वह बहुत बड़ा है, सोमा बुआ की यह करुण एवं मर्म स्पर्शी -कहानी है।

७) **अमरूद का पेड़- ज्ञान रंजन** परिच्छेछ करें । सन् साठ के बाद के (साठोत्तरी) बहुचर्चित कथाकार हैं। 'संबंध' 'चिंता' जैसी कहानियों के कारण उनका नाम कथा क्षेत्र में चर्चा में आ गया। उनके कहानी संग्रह हैं- 'फेन्स के 'इधर और उधर' 'यात्रा' 'सपना नहीं,' 'क्षणजीवी'।

उनकी कहानियों में चित्रित विषय सत्य के साथ आसानी से जोड़े जा सकते हैं। बिडंबन की विधि का उपयोग जैसे उनका रचनात्मक स्वभाव बन गया है। बहुत सी कहानियों में वे 'मैं' के रूप में उपस्थित हैं परन्तु इसका अर्थ ऐसा नहीं है कि वे अपनी ही बात कह रहे हैं। उनकी कहानियाँ समाज में घटित घटनाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ हैं।

'अमरूद का पेड़' एक सुंदर कहानी है। यह पेड लेखक को प्रतीकात्मक लगता है। स्वयं लेखक एवं उनके परिवार जनों को इस पेड़ के प्रति मोह एवं ममता है। लेखक ने अमरूद के इस पेड़ के साथ व्यापक रूप में अपनी भावनाओं एवं निष्ठाओं को बाँधा है।

उनके घर के सामने आँगन में एक जगह अपने आप अमरूद का पेड़ उग आया उस पेड़ के प्रति किसी ने आत्मीयता नहीं दिखाई न पानी ही डाला एक प्रकार की लापरवाही में वह पेड़ अपने आप बढ़ गया । उसकी टहनियाँ फैल गई और जब पेड़ नज़र में भरने लगा तो पड़ोसियों ने अपना मत दिया कि पश्चिम की ओर जिस का घर का मुख होता है उसके सामने अमरूद के पेड़ का होना बड़ा अशुभ होता है।

लेखक को विश्वास है उनकी माँ स्वतंत्रता आंदोलन में जेल जाकर आई है। पिता जी सामाजिक -राजनीतिक जीवन में रहकर उदार मतवादी बने हैं उनके घर ऐसी अंधविश्वास पूर्ण बातें नहीं चलेंगी। परन्तु लेखक देखते कभी-कभी अमरूद के वृक्ष को देखकर उनकी माँ के सुंदर चेहरे पर भय दिखाई देता ।

कुछ दिनों बाद उनका अमरूद का पेड़ फल और फूलों से लद गया, माली की सूचना के अनुसार पेड़ की पहली कच्ची फसल तोड़कर फेंक दी। बाद में उनके अमरूद के पेड़ पर कई मीठे अमरूद लगे । तोते का पिंजरा भी बाहर ही टाँगा जाने लगा। घर में अमरूद की पत्तियों में सूरन पकाकर खाने लगे, घर में टमाटर और अमरूद का सलाद बन गया। तोते के लिए पके अमरूद महीनों तक उपलब्ध होते। लेखक के घर के अमरूद, इलाहबाद के अमरूद

के साथ प्रसिद्धि प्राप्त कर गये। पेड के नीचे घनी छाँव भी थी। अमरूद की छाया में बेंत की कुर्सियाँ डालकर लेखक अपने भाई बहनों के साथ बैठता था, उनमें दोस्ताना अंदाज भर जाता था।

अमरूद के पेड़ ने अपने अस्तित्व से ही अपशुकन के आरोपों को नष्ट किया है। उस पर छोटे पप्पू ने झूला भी डाला है। घर के भाई नौकरी एवं अन्य कारणों से शहर के बाहर गए। लेखक भी गए। लेकिन उन्हें जाते समय माँ और अमरूद का पेड़ इनकी बहुत याद आई। अमरूद का पेड उनमें जागृति भर जाता, नये विचार एवं नई-नई कल्पनाओं के प्रतीक के रूप में अपने मन में अमरूद का पेड़ हमेशा रहा। पिताजी जब पत्र लिखते तो अमरूद के चर्चे होते। उनके पत्र मन को छूने वाले होते।

पिता के पत्रों के द्वारा लेखक को ज्ञात हुआ माँ का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। घर में तनाव है, बड़ा भाई अलग रहने लगा है। अमरूद के पेड को इसका कारण जानकर माँ पेड़ काटने पर बल दे रही है। इन बातों से संतप्त होकर लेखक ने अमरूद न काटने के बारे में चिट्ठी लिखी। लेखक को लगता है अमरूद का पेड़ है तो एक विशेष गौरव है। अमरूद के कारण कितने दोस्त हुए हैं। लेखक को लगता है हमारा अमरूद का पेड़ एक छाता है हरे रंग का ।

लेखक कई दिनों के बाद उत्सुकता में घर आए तो देखा पेड़ काटकर उसके स्थान पर गुलदाउदी और केले के पौधे लगाये हैं। पेड़ के कटने का दु:ख लेखक को इतना न था जितना कि पराजित होने का। जब हममें आत्मविश्वास जाग गया था तब अशुभ और रुढ़ी के भय ने माँ को पराजित कर दिया । शायद माँ को यह भरोसा नहीं हो सका कि उसकी संतानें अशुभ से लड़ सकती हैं।

लेखक ने सोचा उसमें एक बात तो यह अच्छी हो गई कि मिट्टू को पेड़ काटने का बड़ा गुस्सा और क्षोभ आया था, लेखक को लगा यह भी कम नहीं है कि नई पीढ़ी को ऐसा क्षोभ होता है। लेखक ने देखा अमरूद की जहाँ जड़ थी वहाँ धूप का एक टुकड़ा बड़ा हो रहा है।

यह नई कहानी है। इसमें एक नई चेतना उभर कर आई है। यह पेड़ उनके घर का सदस्य-सा बन गया है। रूढ़ियाँ और आशंकाएँ भी मन से जाती नहीं। परन्तु उनके प्रति कोई तो क्षोभ व्यक्त करता है। इस कहानी का अंत आशादायक है। लेखक ने भविष्य में जो शुभ घटित होने वाला है उसकी ओर संकेत किया है और अशुभ को नकारने का संकेत धूप के टुकड़े को बड़ा होने में दिखाया है।

ज्ञान रंजन की यह कहानी कथ्य और टेकनिक की दृष्टि से भी सुन्दर है।

८) पेपर वेट गिरिराज किशोर

गिरिराज किशोर अपनी कहानियों के लिए प्रसिद्ध हैं। वे सन् 60 से लगातार कहानियाँ लिख रहे हैं। उनके ग्रंथों की संख्या 40 के आस-पास हैं। नाटक, उपन्यास और कहानियाँ इन विधाओं में उन्होंने अच्छी ख्याति अर्जित की है।

वे ऐसे कहानीकार हैं जो अपने समय के प्रश्नों का साक्षात्कार करते हैं, बदलते हुए सोच विचार के साथ हमें अवगत कराते हैं। वे उन रचनाकारों में हैं जो रचनात्मक स्तर पर हिन्दी को तोड़कर बदलते जा रहे हैं। उनकी कहानियों का कथ्य सबल है। उनके कहानी संग्रह हैं- 'गाना बड़े गुलाम अली खाँ का', नीम के फूल, चार मोती, बेआब, जगतारनी, पेपर वेट आदि। उनके उपन्यास हैं- लोग, जुगलबंदी, चिड़ियाघर, परिशिष्ट आदि।

'नरमेघ' उनका बहुचर्चित नाटक है।

'पेपर वेट' गिरिराज किशोर की प्रसिद्ध कहानी है। जिसमें अनोखे ढंग से राजनीतिक भ्रष्टता का चित्रण किया है।

इस कहानी में दो ही चरित्र महत्वपूर्ण हैं। एक मृणाल बाबू और दूसरा शिवनाथ बाबू । शिवनाथ बाबू विदेश गए थे। विदेश जाने के पूर्व वे मृणाल बाबू को मंत्री बनाकर गए थे। वे उन्हें स्वयं आमंत्रित करने गए थे, अपने हाथों उन्हें पद की शपथ दिलाकर गए थे। उन्होंने मृणाल बाबू की बड़ी तारीफ की थी। उन्हें ईमानदार और मेहनती कहा था। उनकी सेवा, आदर्श तथा तत्परता की भी प्रशंसा की थी ।

स्वयं मृणाल बाबू ने भी सोचा था शिव नाथ बाबू के लौट आने तक वे विभाग को पूरी तरह से बदल डालेंगे। वे सचमुच ईमानदार और परिश्रमी थे। उन्होंने आदेश दे रखा था जनता का काम समय पर होना चाहिए। पंद्रह दिन से अधिक कोई फाईल न रुके, काम का निपटारा होना चाहिए।

परन्तु जब से शिवनाथ बाबू विदेश से लौटे थे, तब से कैबिनेट की मीटिंग में उन्होंने सब मंत्रियों के काम की प्रशंसा की थी परन्तु मृणाल बाबू के काम के बारे में उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा है। विभाग के काम में भी परिवर्तन आया था, जो भी फाईल वे विभाग से माँगते पता चलता वह मुख्यमंत्री के पास है। उनको लगा कि यह सचिव की बदमाशी है। मुख्यमंत्री से बात करनी पड़ेगी ।

जब वे शिव नाथ बाबू से मिलने गये तो देरतक उन्होंने उनकी ओर देखा तक नहीं। फाइलों में व्यस्त रहे। कुछ न कुछ लिखकर हस्ताक्षर करते गये। मृणाल बाबू बहुत उब गये। बाद में बहुत देर बाद मृणालबाबू की ओर देखा। उन्होंने जमादार को बुलकार सचिव मिस्टर राय को बुलाने के लिए कहा, मृणाल बाबू ने फाईलें न मिलने के बारे में कहा। मिस्टर राय की शिकायत की। शिवनाथ बाबू ने फिर फाइलें देखना शुरू किया मृणाल बाबू को यह बुरा लगा। जमादार ने आकर कहा राय साहब कोठी पर नहीं हैं मन्दिर गए हैं। शिवनाथ बाबू बिना कुछ कह उठे और हाथ जोड़कर 'अच्छा' कहा। मृणाल बाबू को लगा किसी ने उन्हें धक्का देकर बाहर निकाला है।

उन्हें लगा जमादार, ड्राइवर सब उनको ओर अज़ीब नज़रों से देख रहे हैं जैसा कि उनका मजाक कर रहे हैं। ड्राइवर कार के शीशे में भी उनसे नजरें मिलना नहीं चाहता था।

घर जाकर उन्होंने सोचा कि त्याग पत्र दूँगा, शिवनाथ बाबू का तब का और आज का व्यवहार बिलकुल अलग है। उनको ऐसा लगा जैसे वे बंदी व्यक्ति है।

घर पहुँचे तो उनके द्वार पर उनसे मिलने वालों की वही भीड थी। एक औद्योगिक बस्ती का मामला था। सरकार जो जमीन ले रही है उसके एवज में फैक्ट्री की पक्की नौकरी और औद्योगिक बस्ती में कम किराये पर घर माँगते थे। मृणाल बाबू ने सोचा सरकार को लोगों की शर्त मान लेने के लिए रजामंद करेंगे। परन्तु फाइल तो मुख्यमंत्री के पास है। मृणालबाबू उन लोगों को क्या जवाब देंगे? जब उन्होंने लोगों को शिवनाथ बाबू से मिलने के लिए कहा तो लोग यह कह कर बिगड़ उठे कि आप भी शांतिशरण जैसी ही बात करते हैं।

मृणाल बाबू को लगा कि ये सारी परिस्थितियाँ उनके लिए तैयार की गई हैं। उन्हें उसमें फिट किया गया है। वे असहाय हो गये हैं। अगर वे त्याग पत्र देते हैं तो यह भी शिवनाथ बाबू के पक्ष में ही होगा ।

जैसे पेपरवेट बेमतलब का मेज पर धूम रहा था, वैसा ही उनका अस्तित्व बन गया ।

मुख्यमंत्री ने उन्हें बुला लिया, उनके सामने सचिव को बुलाकर डाँटने लगे ऐसे कि सचिव को कम और मृणाल बाबू को ही डाँट सुना रहे हैं। सचिव सिर झुकाए खड़ा रहा, बाद में चला गया। मृणालबाबू को लगा जाते समय उसके चेहरे पर अजीब-सी मुस्कराहट है।

शिवनाथबाबू ने जैसे फटकार कर कहा था आप जरा सी चोट खाकर रोने लगते हैं। राजनीतिज्ञ लोहे के समान धर्मी होते हैं।

राय बिना अनुमति के बेहिचक चला आया तब मृणाल बाबू ने सोचा मंत्री होकर भी शिवनाथ बाबू से मिलने के लिए मुझे आज्ञा लेनी पड़ती है।

जाते-जाते कठोर चेहरे से उन्होंने उनके हाथ में फाईल थमा दी और आदेशपूर्ण शब्दों में कहा, कल विधान सभा में आपको उस औद्योगिक मसले का उत्तर देना है। मृणाल बाबू ने देखा उस फाइल पर थोड़े से शब्दों को बदल कर वही सब लिखा था जो शांति शरण ने लिखा था। वही उत्तर उनको कल देना है। उनको लगा- शांतिशरण के लिए लोगों ने कहा था, हड्डी निचोड़ने वाले कुत्ते हमें नहीं चाहिए- वही बात सब लोग उनके लिए भी दोहराने लगे।

उन्हें यह भी लगा, शिवनाथ बाबू मुस्कराकर कह रहे हैं- शांतिशरण तो बेईमान और कम अक्ल थे अब तो विधान सभा का सबसे ईमानदर और विश्वास पात्र मिनिस्टर भी वही कह रहा है।

इस प्रकार मृणाल बाबू जैसे ईमानदार लोग जब राजनीति में आते हैं तो मँजी हुई राननीति उनका कैसा हाल बेहाल कर देती है इसका कटु चित्रण इस कहानी में है। सचमुच राजनीतिक चालें बड़ी क्रूर और निर्मम होती हैं।

९) सुख- काशिनाथ सिंह

काशिनाथ सिंह 1960 से कहानियाँ लिख रहे हैं। वे साठोत्तर कथा लेखन के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। उनकी कहानियों का क्षेत्र विस्तृत है न केवल ग्राम जीवन बल्कि कस्बाई और नगर जीवन के साथ संबंधित कहानियाँ भी उन्होंने लिखी हैं। यथार्थ की ओर देखने का उनका अपना नजरिया है। उनका कहानी कहने का एक खास लहजा है।

उनके कहानी संग्रह हैं- 'लोग बिस्तरों पर' 'सुबह का डर' और नई तारीख।'अपना-अपना मोर्चा' उनका उपन्यास है।

'सुख' कहानी एक अज़ीब सी अनुभूति देती है। इस कहानी में यह बताया गया है कि रोजी-रोटी, नौकरी, रोज की आपाधापी में मनुष्य अपने आस-पास की, हर रोज घटित होने वाली, घटनाओं को प्रसंगों को नियमित दृश्यों को भी नहीं देखता। 'इतनी फुर्सद' उसके पास नहीं है। परन्तु जब कभी समय पाकर वह कोई दृश्य, बिंब देखता है तो उसे वह बिकुल नया, अजनाना, अद्‌भूत, असाधारण लगता है।

यह कहानी भोलाबाबू की कहानी है। वे नौकरी से वापस आये थे अर्थात् उन्होंने अवकाश ग्रहण किया था। वे घर में पड़े-पड़े अखबार पढ़ रहे थे। इतने में उनके गंजे सिर पर डूबते सूरज की नर्म किरण आई, उसका स्पर्श उन्हें नन्हें बच्चे की हथेली की तरह लगा। उन्होंने उत्सुकता से सूर्य की किरणों एवं उसकी लाली को देखा, बाहर सूरज की लाली ऐसी फैली थी कि उन्हें चारों और गुलाबी रंग दिखाई देने लगा। अपने कपड़े, बाज़ार, गाय उन्हें गुलाबी रंग में रंगी दिखाई दी। सूर्य की सुन्दरता देखकर उन्होंने कहा दुनिया में कितनी अच्छी -अच्छी चीजें हैं।

फिर उन्होंने सूरज की ओर देखा, सूरज का गोला काँप रहा था छोटा-बड़ा हो रहा था। उन्होंने आनन्द से अपनी पत्नी को आवाज दी, ताड़ के पेड़ के उस पार गए सूरज को वे पत्नी को दिखाना चाहते थे, वह आई उसने भी सामने देखा वह भी खुश हुई, परन्तु उसने ईंटों से लदे खच्चरों का झुंड और उसके पीछे चलते, आदमी को देखा और कहा, हाँ बहुत अच्छा उन्होंने नाराज होकर कहा मैं तुम्हें लाल सूरज दिखा रहा हूँ। तब उसने कहा उसे क्या देखना? इसे तो मैं जिदंगी भर देखती आ रही हूँ। तुमने तो आज देखा। उन्होंने डाँटकर अपनी पत्नी को भगा दिया और सोचने लगे, वे गाँव, पहाड़, कस्बा छोड़कर कहीं गए नहीं आज तक तो यह सूरज, यह दृश्य आखिर था कहाँ ?

उन्होंने इस दृश्य को दिखाने के लिए बच्चों को बुलाया वे आए नहीं, उन्होंने एक ऊँट वाले को दिखाना चाहा उसने ध्यान दिया नहीं, इस प्रकार साँझ ढल गई-वह सुन्दर दृश्य आँखों से ओझल हो गया । वे उदास से घर लौटे, चुपचाप बैठे रहे।

उनके मन में वही रहा यह सुन्दर दृश्य इसके पहले क्यों दिखाई नहीं दिया?

१०) भेड़िए: गुरू वचन सिंह

गुरू वचन सिंह एक ऐसे कहानीकार हैं जिन्होंने हिन्दी, उर्दू और पंजाबी में कथा लेखन किया है।

इनकी अभिव्यक्ति की प्रमुख भाषा हिन्दी है।

निम्नवर्ग, निम्न मध्य वर्ग, श्रमिक वर्ग और जनजातीय जीवन से इनके कहानी के विषय जुड़े होते हैं। जन जातीय समाज संबंधी उनकी कहानियाँ विशेष महत्वपूर्ण हैं। हिन्दी में आज इस समाज जीवन का चित्रण कम हुआ है। कम से कम घटनाओं के द्वारा वे कथ्य तक पहुँचते हैं यही उनकी विशेषता है। उनके सात कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं-'युग और देवता' नीम निबौलियाँ, धरती के बेटे, एक और निवेदन, बुझी हुई राख, हे अरण्य कुछ कहो, और आसमान दूर है-

प्रस्तुत 'भेडिए' कहानी छोटा नागपुर क्षेत्र की कहानी है। वहाँ रहने वाली जनजातियों के करूण जीवन की यह कथा है। गरीबी, अकाल, विपन्नता और शोषण की कथा कहने वाली यह कहानी 'हे अरण्य कुछ कहो' कहानी संग्रह से ली गई है।

इस कहानी में जंगल के पास रहने वाले परिवार की गरीबी का चित्रण है। इस कहानी में एक छोटी बालिका का वर्णन है, जो अपने साथ छोटे साथ छोटे भाई को लेकर सोयी थी। सुबह उसके पास उसका भाई न था। वह अपनी माँ के पास जाकर पूछती है। माँ लगातार रो रही है। तब उसे सब याद आता है।

उसके पिता के पास कुछ लोग आए थे। वे कुछ धीरे-धीरे बोल रहे थे। उसके पिता अपनी बेटी को बाहर ले जाना चाहते हैं परन्तु उसकी माँ उसे नहीं जाने देती फिर वह सोये हुए बालक गिरसा को लेकर जाता है और दूसरे दिन लौटता है। वह अकेला आता है और उसके पूछने पर बताता है गिरसा को भेड़िए खा गये। तब वह बहुत रोने लगती है।

वह अपनी माँ से पूछती है । भेडिए कैसे होते हैं? कहाँ रहते हैं? उसकी माँ कहती है वे जंगल में रहते हैं वे भयानक होते हैं। उनकी आँखें लाल होती हैं। सुकरी कहती है। माँ भेडियों को आने न देना। आ गए तो मार कर भगा देना।

तब उसकी माँ कहती है भेडिए किसी एक को लेकर जाते हैं तब सुकरी अर्थात् वह छोटी बालिका कहती है मुझे मत ले जाने देना।

वास्तव में इस कहानी का विषय बहुत गंभीर है। जहाँ ये परिवार रहता है, वह जंगली क्षेत्र है। अकाल पड़ा हुआ है। खाने को कुछ नहीं है। जानवर, खरगोश, चिडिया सब को मारकर भूखे लोग खा गए हैं-नहीं खाया तो सियारों और भेडियों को। वे ही अब लोगों को खाने की तैयारी में हैं।

गरीबी एवं भूख से मजबूर होकर सुकरी को उसका पिता कुछ लोगों के हाथ बेच देना चाहता है। माँ के विरोध करने पर वह सोये हुए बालक को उन लोगों के हवाले करता है।

वह छोटा बालक सोया था, वह अपनी पत्नी को बताता है, उन लोगों ने उसे कुछ खिला दिया था तो वह गहरी नींद सो गया था, जागने पर वह रोएगा।

उसकी माँ कहती है तुमने अपने बेटे को बेचा है वह चुपचाप नोट गिनता है, उसने पाँच सौ रुपये में बेटे को बेचा है। उसकी माँ पैसे लेने से इनकार करती है, कहती है इन पैसों से खून की बदबू आ रही है।

भूख के मारे लोग मर रहे हैं। सुकरी की सहेली मनकी भूख की वजह से धीरे-धीरे मर रही है। सुकरी को भी भूख लगती है, तो मॉ के पास उसे देने के लिए कुछ नहीं है। वह कहती है, वह भी मनकी तरह बीमार पड़ जाएगी। उसकी माँ उसे खींचकर गले से लगाती है।

वह उसके पिता से कहती है। तुमने अपने बेटे को बेचा है। उसका पिता कहता है, थोड़े दिनों के बाद जब सब ठीक हो जाएगा तों मैं उसे लेकर आऊँगा तब वह कहती है तुम उसे नहीं लाओगे,बल्कि इसे भी बेच दोगे ।

इस बात पर वह रोती है, उसके पिता रोते हैं, इस रोने में बाहर सियार और भेडिए भी अपनी आवाज मिलाकर साथ देते हैं, यहाँ कहानी का अंत है।

वास्तव में इस कहानी के शीर्षक में बहुत प्रतीकात्मकता है। 'भेडिए' केवल इस नाम के पशु नहीं है, भेड़िए तो वे लोग हैं जो गरीबों की मजबूरी का फायदा उठाते हुए आर्थिक स्वार्थ के लिए उनके बच्चों को खरीद लेते हैं। भेड़िए जितने क्रूर होते हैं, उनसे कई गुना ये लोग क्रूर और निर्दयी होते हैं, एक छोटे से बालक को खरीद कर ले जाते हैं। उनकी भूख भेड़िए से बढकर होती है। ऐसे अमानुष व्यक्ति तो पशु का दर्जा तक प्राप्त करने की हैसियत के नहीं होते। गरीबों की कंगाली और भूखमरी उन्हें कौन से स्तर तक गिरा सकती है, इसका भीषण चित्र इस कहानी में चित्रित है।

जंगल का परिवेश, भूख, भय, विवशता आदि का सजीव चित्रण इस कहानी में है। वातावरण और परिवेश की निर्मिति लेखक ने सजीवता से चित्रित की है।

इसमें कई बातें प्रतीकात्मक हैं। लेखक की कथन शैली यहाँ अत्यंत शक्तिशाली रूप में प्रकट हुई है। लेखक अपने कथ्य को पाठकों तक पहुँचाने में सफल हो गया है।

यह करूण तथा मर्म को छू लेने वाली कहानी हैं।

*****

३. **नाटक**

ध्रुव स्वामिनी
नाटककार -जयशंकर प्रसाद

जयशंकर प्रसाद का जीवन

स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद जी मूल रूप से कवि के रूप में जाने जाते हैं परन्तु वे कहानी कार नाटककार एवं उपन्यासकार भी थे। प्रसाद जी का जन्म काशी नगरी के ही एक प्रतिष्ठित वैश्य घराने में माध शुक्ल दशमी, संवत् 1946 वि. में हुआ था। उनका परिवार धनवान था, अपनी दानशीलता के लिए प्रसिद्ध था। प्रसाद जी के घर में ज्ञानी एवं गुणीजनों का आना-जाना था। प्रसाद पहले से ही अपने शैव तथा दानी एवं उदार घराने के कारण बनारस में प्रसिद्ध थे। प्रसाद जी के पिता का नाम देवी प्रसाद था। उनके परिवार में धर्म का कर्मठ जटिल, अवरूद्ध एवं दार्शनिक वातावरण था। उनका सम्पूर्ण कुल कट्टर शैव पंथी था। इस प्रकार प्रसाद जी का लालन-पालन इस प्रकार के परिवेश में हुआ। यह वातावरण बहुत बडी मात्रा में काव्यात्मक भी था। इसी वातावरण ने प्रसाद जी को जीवन भर के लिए उत्कृष्ट काव्य संस्कार दिए। उन्होंने अपने बाल्यकाल में यात्रा के दौरान प्रकृति के अपूर्व और विराट दृश्य देखे थे, शायद इसीलिए उनके समग्र साहित्य में भव्य प्रकृति का चित्रण मिलता है।

प्रसाद जी की आरंभिक शिक्षा-दिक्षा घर पर ही हुई और उन्होंने हिंदी, संस्कृत अंग्रेजी,फारसी का अध्ययन किया। बाद में वे कुछ समय तक स्थानीय क्वीन्स कॉलेज में अध्ययन कर रहे थे।

दुर्भागय से उनके पिता का देहांत जब वे बारह साल के थे तब हुआ। बाद में घर का बँटवारा हुआ जो परिवार अत्यंत संपन्न था, उसे आर्थिक दशा का बिगडता हुआ आलेख मिला, पैतृक व्यवसाय बिखर गया। प्रसाद जी की माता का भी देहान्त हो गया। सत्रह वर्ष की अवस्था में उनके भाई की मृत्यु हुई। प्रसाद जी के कंधों पर परिवार की जिम्मेदारी आ गई।

प्रसाद जी का वैवाहिक जीवन भी दुःखमय और अशांत रहा प्रथम दो पत्नियों की असामयिक मृत्यु हो गई। फिर घर के सदस्यों से बहुत जोर डाल कर उनका तृतीय विवाह हुआ। उससे उन्हें पुत्र प्राप्ति हुई। उसका नाम मणिशंकर था।

सन् 1935 में वे तपेदिक से ग्रस्त होकर वे 15 नवम्बर, 1937 में हिंदी संसार को छोड़कर चले गये।

जय शंकर प्रसाद जी का व्यक्तिगत एवं कृतित्व महादेवी वर्मा जी ने प्रसाद जी के व्यक्तित्व का सम्पर्क एवं सुंदर वर्णन किया है- वे गौरवर्ण के छरहरे शरीर के, ऊँचे और प्रशस्त माथेवाले आँखों में उज्जवल दीप्ति, सुडौल नासिका, होठों पर स्वच्छ हँसी, सफेद खादी का धोती कुर्ता। प्रसाद जी की उपस्थिति स्वच्छता और सात्विकता का उद्रेक करती थी।

वे अच्छा खाने -पहनने के शौकिन थे, उनके वस्त्र स्वच्छ और प्राय: श्वेत रंग के होते थे। पान खाने के शौकिन थे। व्यायाम और बागवानी का उन्हें बड़ा शौक था।

वे मृदुभाषी, मिलनसार और हँसमुख थे। उनकी दिनचर्या साहित्यिक हुआ करती थी। वे प्रात: से शाम तक कवि और साहित्यकारों से चर्चा करते रहते। वे शिव के अनन्य भक्त थे। अपने साहित्य की जो व्यक्ति कटु आलोचना करते थे उनके प्रति भी उनका सदभाव था। वे बड़े सम्मेलनों से बचते रहते थे। परन्तु छोटी-छोटी गोष्ठियों में बहुत रूचि के साथ कविता पाठ करते।

प्रसाद जी का कृतित्व

प्रसाद जी चहुँमुखी प्रतिभा के सर्जक थे। उन्हें कवि सम्राट और नाट्य सम्राट भी कहते थे। प्रसाद जी के नाम के उल्लेख के बगैर हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का पूर्ण होना संभव नहीं, आधुनिक काल का इतिहास उनके बिना अधूरा ही रहेगा।

छायावादी काव्य धारा के वे प्रणेता हैं। साहित्य साधना की दृष्टि से वे विलक्षण प्रतिभा के अधिकारी थे। वे सम्पन्न कृतिकार और शब्द प्रभु थे।

जयशंकर प्रसाद की कृतियाँ

उनके द्वारा सृजित साहित्य रचनाएँ साहित्य विधाओं के अनुसार, निम्नानुसार है-

काव्य कृतियाँ:-

प्रेम राज्य	(1909)
वन मिलन	(1909)
अयोध्या का उद्धार	(1990)
शोकोच्छवास	(1990)
प्रेम पथिक	(1914)
महाराणा का महत्व	(1914)
कानन कुसुम	(1913)
चित्राधार	(1918)
झरना	(1918)
आँसू	(1925)
लहर	(1933)
और कामायनी	(1934)

कहानी संग्रह

छाया	(1912)
प्रतिध्वनि	(1926)
आकाशदीप	(1929)
आँधी	(1929)
इंन्द्रजाल	(1936)

उपन्यास

तितली	(1914)
कंकाल	(1929)

इरावती-अपूर्ण उपन्यास

निबंध- प्रसाद जी के काव्य और कला तथा अन्य निबंध में संकलित निबंधों के अतिरिक्त कामायनी की भूमिका तथा अपने नाटकों की भूमिका के रूप में प्रसाद जी ने अनेक गवेषणात्मक निबंध लिखे हैं।

नाटक-

सज्जन	(1910-11)
कल्याणी परिणय	(1912)
करूणालय	(1912)
प्रायश्चिन	(1914)
राज्यश्री	(1915)
विशाख	(1929)
अजात शत्रु	(1929)
कामना	(1923-24)
जनमेजय का नागयज्ञ	(1926)
चंद्रगुप्त	(1928)
स्कंदगुप्त विक्रमादित्य	(1929)
एक घूँट	(1929)
ध्रुवस्वामिनी	(1933)

हिन्दी नाटकों का विकास क्रम

कहते हैं ऋग्वेद से संवाद, सामवेद से गान, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रस तत्व लेकर नाटक नामक पंचम वेद की रचना की गई थी। नाट्यशास्त्र के ज्ञाता के रूप में भरत मुनि का नाम लिया जाता है। उनके नाट्यशास्त्र ग्रंथ में रूपक अर्थात् नाटक की विशद

व्याख्या की है। भारतीय काव्यशास्त्र के अनुसार नाटक के तीन मुख्य अंश होते हैं वस्तु, नेता और रस। पाश्चात्य आलोचकों के अनुसार कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, चरित्र-चित्रण, देश काल-वातावरण उद्देश्य नामक नाटक के छह तत्व हैं। आधुनिक नाटकों पर पश्चात्य मान्यताओं का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। प्रसाद जी ने पाश्चात्य व भारतीय दोनों के दृष्टिकोणों को अपनाकर अपने नाटकों की रचना की है।

उनके पूर्व संस्कृत में नाटकों की बड़ी परम्परा रही है। नाटक की लुप्त होती परम्परा को आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चंद्र जी ने पुन:जीवित किया भारतेन्दु के पूर्व फारसी एवं उर्दू नाटकों का प्राबल्य था। 643 के आस-पास लिखा 'प्रबोध चंद्रोदय' नाटक हिन्दी का प्रथम नाटक माना जाता है परन्तु यह नाटक मौलिक न होकर संस्कृत नाटक का अनुवाद ही है।

भारतेंदु -पूर्व काल में लिखे गये अन्य नाटकों में 'नहुष' लेखक गोपाल दास, 'समय-सार' बनारसी दास, 'रामायण महानाटक'-प्राणचंद चौहान-आदि नाटक उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी नाटकों के विकास को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1)	भारतेन्दु युग	(1857 से 1910)
(2)	प्रसाद युग	(1910 से 1933)
(3)	प्रसादोत्तर युग	(1634 से आगे)

(१) भारतेन्दु युग- भारतेन्दु युग में तीन प्रकार के नाटक लिखे गए-(1) अनुवादित (2) मौलिक (3) पारसी नाटक कम्पनियों की दृष्टि से लिखे गये नाटक।

भारतेन्दु और उनके समकालीन नाटक लेखक- भारतेन्दु जी ने मौलिक और अनूदित 14 नाटक लिखे हैं, जिनमें एकांकी और प्रहसन भी हैं। इनके नाटकों में से मुद्राराक्षस, सत्य हरिश्चन्द्र, नीलदेवी, भारत दुर्दशा, चन्द्रावली और अंधेर नगरी अधिक प्रसिद्ध हैं। इनके लघु नाटकों में वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवित' नीलदेवी, प्रेमयोगिनी भारत दुर्दशा, विषस्य विषमौषधम कर्पुर मंजरी और सती प्रणय में नाना सामजिक समस्याओं पर मार्मिक व्यंग्य किए गए हैं।

भारतेन्दु काल के नाटककारो ने अनेक प्रकार के नाटक लिखे हैं।

(२) प्रसाद युग- प्रसाद जी भारतीय संस्कृति के गौरवमय अतीत के विशेष प्रशंसक थे और उन्होंने अपने नाटकों की कथावस्तु भारत के गौरवमय अतीत से ही चुनी है। उन्होंने अपने विषय के प्रतिपादनार्थ बड़ी ही गवेषणापूर्ण भूमिकाएँ लिखी हैं। उन्होंने अपने रचना शिल्प को अधिक समृद्ध किया । कई नाटककारों ने प्रसाद जी के युग में भी नाटक लिखे। परन्तु उनके नाट्य कौशल में प्रौढता प्रसाद युग के पश्चात् ही आ पायी थी, अत: उनका उल्लेख प्रसादोत्तर युग में करना ही समीचीन है।

(३) प्रसादोत्तर कालीन नाटक-

(1) ऐतिहासिक- पौराणिक नाटक
(2) समस्या प्रधान सामाजिक नाटक
(3) एकांकी, रेडिओ रूपक आदि।

आकाश वाणी से प्रसारित किए जाने के लिए भी एकांकी नाटकों को आरंभ हुआ, समाज की समस्याओं को भी नाटकों में प्रस्तुत करके समस्या मूलक नाटक लिखे गए ।

प्रसाद जी के नाटकों की विशेषता

(१) ऐतिहासिक एवं पौराणिक पृष्ठभूमि- प्रसाद जी के अधिकांश नाटकों की कथावस्तु ऐतिहासिक या पौराणिक घटनाओं पर आधारित होती है। उदा. 'करूणालय' की कथावस्तु महाराज हरिश्चंद्र के पौराणिक वृत्त पर आधारित है।

चन्द्रगुप्त, राज्यश्री स्कंदगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि नाटकों का मूलाधार ऐतिहासिक घटनाएँ हैं। उनकी यह इच्छा थी कि इतिहास के प्रेरणापूर्ण प्रसंगों को प्रकाश में लाना ।

(२) कल्पना प्रवणत्ता- नाटकों के कथा बीज उन्होंने केवल अनुकरणात्मक रूप में नहीं उठाये हैं अपितु उन्होंने अपनी कल्पना का रंग भी उसमें ढाल दिया है। इस दृष्टि से प्रसाद ने अपनी कल्पना प्रवण प्रतिभा का परिचय दिया है।

रस की दृष्टि से भी उनके अधिकांश नाटक सफल ही है। उनके नाटकों में वीर और श्रृंगार ऐसे दो रस प्रधान रूप में बहते रहते हैं। नारी पात्रों के चित्रण में भी प्रसाद जी बहुत हद तक सफल हो गए हैं। पात्रों के मन के आंतरिक द्वंद को भी उन्होंने सफलता पूर्वक चित्रित किया है। उनके नाटकों में स्त्रियों का नि:स्वार्थ और त्यागमय जीवन चित्रित है।

(३) प्राचीन संस्कृति का चित्रण- उनके नाटकों में पौराणिक और ऐतिहासिक वातावरण का बड़ा सुंदर चित्रण है। तत्कालीन राजनीति, समाज तथा संस्कृति उनके नाटकों में अच्छे ढंग से चित्रित है। वे भारतीय साहित्य के गंभीर अध्येता थे। वातावरण निर्मिति के साथ-साथ तत्कालीन समाज में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का प्रयोग प्रसाद जी ने किया है।

(४) प्राचीन भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्य सिद्धातों का समन्वय -प्रसाद जी के नाटकों में भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्य सिद्धांतों का सुदंर समन्वय दिखाई देता है। उनके आरंभिक नाटकों में भारतीय नाट्य सिद्धान्तों का पुरस्कार किया हुआ दिखाई देता है- जैसे नंदिनी प्रस्तावना विदूषक तथा भरत वाक्य की योजना की गई है। परन्तु उनके बाद के नाटकों में इन परम्परागत तत्वों का परित्याग किया है। बाद में अपने नाटकों में वस्तु, नेता और रस योजना के निर्वाह के साथ चरित्रों के अंतर्द्वंद को भी चित्रित किया है। उनके नाटकों के पुरुष प्राय: प्रख्यात ही होते हैं। उनके नाटकों में प्राय: वीर एवं श्रृंगार रस का चित्रण होता है।

(५) दीर्घ कथानक- प्रसाद जी के नाटकों में प्राय: कथानक लम्बे एवं दीर्घ पाए जाते हैं। उदा. चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त आदि का आकार बड़ा है एवं चार-पाँच अंक से युक्त वे नाटक हैं। एक ही अंक में कई-कई दृश्य हैं। इसके परिणामस्वरूप नाटक के संबंध सूत्र उलझ जाते हैं साथ ही पात्रों की संख्या भी कुछ अधिक होती है और नाटक रंगमंचीय दृष्टि से भी बाधा निर्माण करते हैं।

(६) गीतों की प्रचुरता- प्रसाद जी मूल रूप से कवि थे, इसलिए उनमें जो कवित्व है वह साहित्य की अन्य विधाओं पर भी हावी हो जाता है। उनकी गद्य विधाओं में भी काव्य की सुन्दरता के दर्शन होते हैं। आरम्भ के उनके नाटकों में पात्रों के द्वारा कुछ गीतों को गाने की योजना थी और एक नाटक में कई गीत भी दिखाई देते थे, परन्तु बाद में लिखे नाटकों में गीतों की संख्या कम-कम होती गई। ध्रुवस्वामिनी में केवल चार ही गीत हैं।

(७) भाषा की विलष्टता- उनकी भाषा अत्यंत लक्षणा व्यंजनामयी और सांकेतिक है। वे संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग प्रचुरता से करते थे। उनके पात्र लाक्षणिक शब्दावली मं बात करते हैं। स्वागत कथनों में भी गद्य काव्य ही रहता है। प्रबुद्ध पाठकों के पठन हेतु यद्यपि उनके नाटक आकर्षक एवं रमणीय हैं वहाँ रंगमंचीय प्रस्तुति के बाद पात्रों की भाषा सहज सरल नहीं लगती।

(८) दार्शनिकता- प्रसाद जी के पात्रों में दार्शनिकता का पुट लिए कोई ना कोई पात्र अवश्य रहता है। वह पात्र अन्य पात्रों को दार्शनिक उपदेश एवं शिक्षा भी देता है। नाटक के रचना काल में जो बौद्धमत और शैव दर्शन था उसका प्रभाव पात्रों के संवादों पर है।

(९) नाटकों का अंत-सुखांत एवं दुखांत- प्रसाद जी के कुछ नाटक ऐसी स्थिति में समाप्त होते हैं कि उस स्थिति को न सुखांत न दुखांत ही कह सकते हैं। उदा. के लिए स्कंदगुप्त नाटक का अंत। कभी कभी प्रेक्षक ऐसी दुविधा में ग्रस्त जो जाते हैं कि नाटक को क्या समझे सुखांत या दुखांत ।

हिन्दी आलोचकों ने प्रसाद जी के नाटकों के अंत के संदर्भ में एक शब्द प्रयोग किया है कि उनके नाटक प्रसादांत होते हैं। अर्थात् वे नाटक प्रसाद जी की अपनी धारणाओं के अनुसार अंत पाते हैं।

'ध्रुवस्वामिनी' की कथा वस्तु

ध्रुवस्वामिनी नाटक तीन अंकों में विभाजित है।

प्रथम अंक के आरंभ में पहाड़ी प्रदेश में रामगुप्त का शिविर दिखाई देता है। मंच पर यहाँ ध्रुव स्वामिनी के सर्व प्रथम दर्शन होते हैं। उसके संवादों से पता चलता है वह क्रोधित एवं अपमानित है, उसे रामगुप्त के अत:पुर में अवहेलना तथा अपमान पूर्ण जीवन बिताना पड़ रहा है, वह रामगुप्त के साथ विवाह होना अपना अपमान समझती है। उसे वह शाप मानती है। वह

कहती इस राजमहल में जिधर भी देखों कुबड़े, बौने, हिज़ड़े, गूँगे और बहरे ही दिखाई देते हैं- क्या एक भी प्राणी ऐसा नहीं जिसमें मानवोचित संपूर्ण गुण हो ? एक प्रकार से ध्रुवस्वामिनी स्वयं को बंदिनी मानती है। रामगुप्त विलासी और मद्यपि है। उसके मुख से ध्रुवस्वामिनी ने कोई मधुर वाणी अब तक नहीं सुनी है।

वह यह नहीं समझ पाई है कि उस महल में उसका स्थान क्या है?

संवादों से यह ज्ञात होता है कि स्कंदगुप्त ने कुमार चंदगुप्त को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था, इस दृष्टि से उसका विवाह ध्रुवस्वामिनी से ही होना निश्चित था, किन्तु कुमार चंद्रगुप्त ने राज्य के साथ-साथ अपनी अमूल्य निधि ध्रुवस्वामिनी पर भी रामगुप्त का अधिपत्य होने दिया । इस प्रसंग में ध्रुवस्वामिनी कहती है, 'राजचक्र सबको पीसता है', परन्तु उसके संवादों से स्पष्ट होता है कि उसके मन में चंद्रगुप्त के प्रति अब भी अनुराग की भावना व्याप्त है। वह उसके बारे में यह भी कहती है कि 'कुमार की स्निग्ध और सुंदर मूर्ति को देखकर कोई भी प्रेम से पुलकित हो सकता है। किन्तु उन्हीं का भाई?' वह निरंतर चंदगुप्त के प्राणों की चिंता करती है।

ध्रुवस्वामिनी और खड़ग धारिणी का वार्तालाप रामगुप्त छिपकर सुनता है उसे लगता है ध्रुवस्वामिनी उससे नहीं चंद्रगुप्त से प्रेम करती है। उसे यह भी लगता है कि वे कोई षड़यंत्र उसके खिलाफ चला रहे हैं।

रामगुप्त का अमात्य शिखर स्वामी और रामगुप्त में जो संवाद हैं उससे ज्ञात होता है कि वह शकराज द्वारा संधि प्रस्ताव में सामंत पत्नियों के साथ ध्रुवस्वामिनी की भी माँग की थी रामगुप्त इसके साथ सहमत होता है। एक प्रकार से इस संधि के द्वारा वह चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी को अपने रास्ते से हटाने की योजना बनाता है। जब यह बात ध्रुवस्वामिनी के सम्मुख खुल जाती है तो वह आक्रोश से कहती है कि 'मेरे साथ ऐसा पशुओं के समान मनमाना व्यवहार नहीं किया जा सकता'। वह पहले रामगुप्त से प्रार्थना करती है कि वह उसके स्वामित्व की रक्षा करें। परन्तु रामगुप्त पर इसका कोई प्रभाव नहीं पडता। वह ध्रुवस्वामिनी को उपहार की वस्तु समझता है। इस पर अपना आत्मघात करने के लिए ध्रुवस्वामिनी कसर निकाल लेती है परन्तु रामगुप्त इतना कायर है कि उसे लगता है कि कहीं वह उसकी ही हत्या न कर बैठे इस कारण वह वहाँ से चिल्लाता हुआ भाग जाता है।

इसी समय प्रथम बार कुमार चंद्रगुप्त रंगमंच पर आता है वह ध्रुवस्वामिनी को आत्महत्या से परावृत्त करता है। ध्रुवस्वामिनी से रामगुप्त के हीन प्रस्ताव को जानकर चंद्रगुप्त क्रोधित होता है, उसे लगता है इन सभी बातों से सम्राट समुद्र गुप्त के कुल गौरव को कलंक लगेगा। तभी रामगुप्त, शिखर स्वामी और मंदाकिनी वहाँ प्रवेश करते हैं। मंदाकिनी का प्रस्ताव है कि शकराज पर एक बार पूरी ताकद से आक्रमण किया जाए, इसका रामगुप्त विरोध करता है। वह ध्रुवस्वामिनी और चंद्रगुप्त को शकराज को शिविर में जाने के लिए कहता है। चंद्रगुप्त के मना करने पर भी ध्रुव स्वामिनी उसके साथ चली जाती है।

द्वितीय अंक में शकराज के शिविर की रंगस्थली है। शकराज की प्रेयसी कोमा भी उसके साथ है । वह उसे पत्नी मानने के लिए तैयार नहीं, वह शकराज को कहती है कि किसी भी स्त्री का सम्मान नष्ट करने का उसे अधिकार नहीं है। शकराज कोमा की बातों से भयभीत होता है उसे अनिष्ट की शंका होती है। इतने में स्त्री वेशधारी चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी को वहाँ लाया जाता है। शकराज उन्हें देखकर दुविधा में पड़ जाता है। इस पर चंद्रगुप्त जब प्रकट होता है, तो वह अपना परिचय शकराज को उसकी मृत्यु के रूप में देता है। इस समय शकराज चंद्रगुप्त के हाथों मारा जाता है। अन्यत्र सैनिक भी शकराज की सेना से युद्ध करने लगते हैं और ध्रुवस्वामिनी और चंद्रगुप्त दोनों शकराज के दुर्ग पर अधिपत्य जमा लेते हैं।

तृतीय अंक में ध्रुवस्वामिनी चिंतमग्न दशा में बैठी हुई दिखाई देती है। जब रामगुप्त को पता चलता है कि शकराज के राज्य पर अधिपत्य हो गया है तो वह ध्रुवस्वामिनी से मिलना चाहता है, परन्तु वह उससे मिलने से इंकार कर देती है। वह घायल चंद्रगुप्त की पूछताछ करती है। उसी समय वहाँ राजपुरोहित पधारते हैं तो वह सूचित करती है कि अब रामगुप्त जैसे कायर को वह अपना पति नहीं मानती। वह कहती है कि रामगुप्त ने उसके साथ बलपूर्वक राक्षस विवाह किया था।

इधर रामगुप्त अपने सैनिकों के द्वारा चंद्रगुप्त को बंदी बना लेता है। ध्रुवस्वामिनी इस बात से तिलमिलाती है, वह रामगुप्त को फटकारती है। रामगुप्त उसे काल सर्पिणी स्त्री कहकर संबोधित करता है। वह ध्रुवस्वामिनी को भी बंदी बनाने का आदेश देता है, तब चंद्रगुप्त के क्रोध की सीमा नहीं रह जाती। वह अपनी लोहे की श्रृंखलाएँ तोड डालती है। वह सभी सामंत पुत्रों को मुक्त कराता है। परिषद की मंत्रणा से और निर्णय से ध्रुवस्वामिनी को रामगुप्त से मोक्ष या छुटकारा मिलता है। इन बातों से चीढ़कर वह चंद्रगुप्त पर पीछे से हमला करना चाहता है। चंद्रगुप्त का एक विश्वास पात्र सामंत यह सब देख लेता है और वह रामगुप्त की हत्या कर देता है।

सभी लोग चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी की जय जयकार करते हैं और पर्दा गिरता है, यहाँ यह संकेत अवश्य मिलता है कि ध्रुवस्वामिनी और चंद्रगुप्त का विवाह हो गया होगा ।

'ध्रवस्वामिनी' नाटक में ऐतिहासिकता एवं कल्पना

जिनके नाम पर नाटक के क्षेत्र में एक युग का निर्माण हुआ है ऐसे स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद जी की अभिरूचि ऐतिहासिक, नाटकों की ओर अधिक रही है। ध्रुवस्वामिनी नाटक भी इतिहास के परिपृष्ठ पर खड़ा है। इतिहास के साथ-साथ इस नाटक में कल्पना का पुट देकर प्रसाद जी ने इस नाटक को स्वाभाविक एवं मनोरम बनाने का प्रयास किया है ।

ध्रुवस्वामिनी नाटकके पात्र

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक के पात्र तीन वर्गों में बाँटे जा सकते हैं :-

1. ऐतिहासिक पात्र और धटनाएँ ।
2. अर्ध ऐतिहासिक पात्र और धटनाएँ ।
3. काल्पनिक पात्र और धटनाएँ ।

१. **ऐतिहासिक पात्रः-** ध्रुवस्वामिनी नाटक के चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी दोनों पात्र पूर्णतः ऐतिहासिक व्यक्ति हैं और उन्हें लेकर इस नाटक की घटनाओं का जो प्रस्तुति करण किया गया है वह मुख्यतः ऐतिहासिक ही है। ध्रुवस्वामिनी की शकराज द्वारा माँग की जाने का उल्लेख भी लिखित रूप में मिलता है। हिन्दी के कुछ विद्वानों ने चन्द्रगुप्त एवं ध्रुवस्वामिनी के पुनर्विवाह का प्रसंग भी सत्य माना है। उस काल में विशिष्ट स्थितियों में सभी का पुनर्विवाह होने के प्रमाण भी मिलते हैं। ध्रुवस्वामिनी जिसका ऐतिहासिक नाम ध्रुवदेवी उपलब्ध होता है। महाराज चंद्रगुप्त के अतिरिक्त शकराज भी ऐतिहासिक पात्र हैं। इसकी धटनाएँ भी ऐतिहासिक हैं। गुप्त शिबिर को घेरकर शकराज ने मनमानी संधि शर्तें रखी थीं। राज्य परिषद् द्वारा रामगुप्त को दोषी ठहराकर उसे राज्यच्युत करने का प्रस्ताव पास करना तथा चंद्र गुप्त को राज्याभिषेक करने का निश्चय करना भी ऐतिहासिक घटना मानी जा सकती है।

२. **अर्ध ऐतिहासिक पात्र और घटनाएँ:-** इस प्रकार के पात्रों में रामगुप्त व शिखर स्वामी आदि की गणना की जा सकती है । प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथों में रामगुप्त का उल्लेख नहीं मिलता है। रामगुप्त नामके राजा के सिक्के भी मिलते हैं। यद्यपि रामगुप्त को पूर्णतः ऐतिहासिक व्यक्ति कहा नहीं जा सकता उसकी पुष्टी करने वाले कुछ प्रमाण भी मिले हैं। इसलिए वह अर्ध ऐतिहासिक चरित्र है। शिखर स्वामी भी अर्ध ऐतिहासिक चरित्र है। शिखर स्वामी जैसा धूर्त मंत्री अवश्य रहा होगा परंतु ऐतिहासिक तथ्य के आधार पर उसका नाम शिखर स्वामी नहीं मिलता।

कुबड़े, बौने, हिजड़े का चरित्र भी अर्ध ऐतिहासिक माना जा सकता है क्योंकि राजकीय अतःपुरों में प्रायः ऐसे ही पुरूष या वृद्धा स्त्रियों की नियुक्ति होती थी। अतःसंभव है कि रामगुप्त के अंतःपुर में भी ऐसी ही दास-दासियों की प्रधानता रही हो।

रामगुप्त की हत्या चंद्रगुप्त के समर्थक सामंत के हाथों होते हुए चित्रित करना भी अर्ध ऐतिहासिक घटना है यहाँ स्वयं चंद्रगुप्त ने रामगुप्त के लिए राज गद्दी का त्याग किया था, इसलिए चंद्रगुप्त के हाथों रामगुप्त की हत्या न दिखाकर प्रसाद जी ने चरित्र के उदात्तता की रक्षा ही की है।

३. **काल्पनिक पात्र और घटनाएँ-** इन पात्रों के अंतर्गत मंदाकिनी, कोमा जैसे पात्र काल्पनिक हैं। मंदाकिनी प्रसंगों में रामगुप्त, शिखर स्वामी और पुरूगुप्त की जो भर्त्सना करती मिलती है। वह अपने ओजस्वी कथनों के द्वारा ध्रुव स्वामिनी और चंद्रगुप्त के प्रति ममत्व भाव

जागृत कर देती है, वे समस्त घटनाएँ काल्पनिक ही हैं। कोमा का चरित्र भी प्रसाद जी की कल्पना की देन है।

'ध्रुव स्वामिनी' नाटक में गीत योजना-

प्रसाद जी मूल रूप से कवि थे। उनका कवि नाटककार से भी अधिक महत्वपूर्ण था। उनके कवि रूप का उनके नाटकों पर भी प्रभाव पड़ा है। उनके नाटकों में गीतों की बहुलता मिलती है। कभी कभी आवश्यकता न होने पर भी उन्होंने अपने नाटकों में गीतों की योजना की है। अतः आलोचकों ने उनकी गीत योजना को सदोष बताया है। किन्तु जहाँ तक ध्रुव स्वामिनी नाटक का प्रश्न है इस प्रकार का दोष इस नाटक पर लगाने का कोई कारण नहीं है। 'ध्रुव स्वामिनी' में केवल चार गीत हैं वे गीत परिस्थितियों के निर्माण में सहायक हैं या पात्रों की मनोदशा के उद्घाटन में सहायक हैं।

'ध्रुवस्वामिनी' का प्रथम गीत मंदाकिनी द्वारा गया जाता है। अब वह स्वयं मानसिक द्वंद्व में पड जाती है और आखिर अपने ह्दय के दुःख को मन में ही छिपा कर, चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी की सहायता चुपचाप आँसू पीकर करना चाहती है तब उसके मुख से यह गीत निकलता है।

यह कसक अरे आँसू सह जा,
बनकर विनम्र अभिमान मुझे,
मेरा अस्तित्व बता, रह जा।

'ध्रुवस्वामिनी' का दूसरा गीत भी मंदाकिनी द्वारा ही गया जाता है। जब चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी सामंत कुमारों के साथ शक-शिविर की और प्रयाण करते हैं तब उस समय मंदाकिनी गीत गाती है- इस गीत द्वारा वह उनको दुःख में भी अविचल रहने का संदेश देती है।

पैरां के नीचे जलधर हो बिजली से उनका खेल चले।
संकीर्ण कंगारों के नीचे, शत-शत झरने बेमेल चले।

यह गीत मंदाकिनी के चरित्र को व्यक्त करता है।

ध्रुवस्वामिनी का तीसरा गीत शकराज के दरबार में नर्तकियों द्वारा गया जाता है।

जब शकराज को यह समाचार मिलता है कि रामगुप्त द्वारा उसकी सभी शतरें स्वीकार की गई हैं, और वह शकराज की सेवा में ध्रुवस्वामिनी को भेज रहा है तो बहुत ही हर्षित होकर शकराज नृत्य का प्रबंध करने के लिए कहता है, तब नर्तकियाँ यह गीत गाती हैं-

अस्ताचल पर युवती संध्या की खुली अलक धुँधराली है।
लो मानिक मदिरा की धारा अब बहने लगी निराली है।

यह गीत राज दरबारों में गाए जाने वाले नृत्य गीतों जैसा है। गीतों की परम्परा तथा कथावस्तु की परिस्थिति को देखते हुए सर्वथा उपयुक्त है।

ध्रुव स्वामिनी का चतुर्थ गीत इस नाटक की करूणापूर्ण युवती कोमा गाती है। कोमा प्रकृति की अनुरागिनी भी है शकराज संबंधी मधुर भावनाओं को वह गीत में व्यक्त करती है-

यौवन! तेरी चंचल छाया।
इसमें बैठ घूँट भर पी लूँ जो रस तू है लाया।

प्रस्तुत गीत कोमा की मनोदशा का चित्रण करता है। अर्थात् ध्रुवस्वामिनी के सभी गीत प्रसंगों एवं भावोचित हैं । अनौचित्य का दोष उन्हें लगता नहीं ।

'ध्रुवस्वामिनी' में पात्र योजनाः-

ध्रुव स्वामिनी इस नाटक की नायिका है। ध्रुव स्वामिनी रामगुप्त की पत्नी है। वह भाग्यहीन नारी है इसलिए कि उसके पिता उसका डोला सौंप देते हैं यह अनिर्णित रहता है कि उसका विवाह किसके साथ संपन्न होगा? माना तो यही जा राह था कि जिसे स्कंदगुप्त ने अपना उत्तराधिकारी माना था उसके साथ ही उसका विवाह होगा परन्तु चंद्रगुप्त के स्थान पर जब रामगुप्त साम्राज्य का अधिकारी बनता है तो उसकी इच्छा के विरूद्व उसका विवाह रामगुप्त के साथ होता है। चंद्रगुप्त भी ध्रुवस्वामिनी की और आकर्षित था, ध्रुव स्वामिनी के मन में भी उसके प्रति अनुराग था। रामगुप्त में अनेक दुर्गुण थे, वह विलासी था, ध्रुवस्वामिनी के मन में उसके प्रति घृणा के भाव थे।

वह चंद्रगुप्त के प्रति शुभाकांक्षा रखती है। वह रामगुप्त और चंद्रगुप्त की तुलना करके उन दोनों में कितना अंतर है यह बताती है। जब रामगुप्त उसे उपहार की वस्तु मानकर शकराज को देने का निर्णय करता है तो वह आत्महत्या करने के लिए तत्पर हो जाती है। जब चंद्रगुप्त उसे परावृत्त करता है तो वह मान जाती है। वह अपने नारीत्व की रक्षा के लिए शकराज के यहाँ जा रहे चंद्रगुप्त को रोकती है, और अंत में दोनों साथ ही शकराज के शिविर में जाते हैं।

उसके पास आत्म सम्मान है। वह फिर भी रामगुप्त से कुलवधु होने के सम्मान की रक्षा करने के लिए कहती है। परन्तु जब राम गुप्त उसे कोई आश्वासन नहीं देता तो वह कठोर शब्दों में उसकी निंदा करती है। वह कहती है कि मैं अपनी रक्षा स्वयं करूँगी।

वह स्वयं वीर नारी है। जब शकरात पर विजय प्राप्त करने के बाद वह जब उसे मिलने रामगुप्त आता है तो थक जाने का बहाना बनाकर वह उसे टाल देती है। एक क्लीव पति की पत्नी बनने की अपेक्षा वह मृत्युमुख में जाना श्रेयस्कर समझती है।

वह पम्पराओं का अंधानुकरण कभी नहीं करती। वह यह स्वीकार नहीं करती कि कोई स्त्री को पशु संपत्ति समझे। वह अपने आपको शीतलमणि की तरह नहीं मानती कि जिसे उठाकर किसी को भी दिया जा सके।

इस प्रकार ध्रुवस्वामिनी के चरित्र में एक नव जागृति दिखाई देती है।

चंद्रगुप्त - वास्तव में इस नाटक का नायक चंद्रगुप्त है। महाराज स्कंद गुप्त का वह छोटा पुत्र है। रामगुप्त के स्वभाव से खिन्न होकर स्कंदगुप्त अपने साम्राज्य का उत्तराधिकारी चंद्रगुप्त को ही मानता है। परन्तु रामगुप्त जब साम्राज्य का अधिकारी बनता है तो वह उसे स्वीकार करता है। परन्तु उसके मन में 'ध्रुवस्वामिनी' के प्रति प्रेम भावना को वह व्यक्त करता है। परन्तु वह त्यागशील है वह अपने बड़े भाई के लिए वह राज्य और पूर्व नियोजित वधु को त्याग देता है।

वह रामगुप्त की तरह स्वाभिमान शून्य नहीं है। किसी राजवधु को शत्रु के हाथों सौंपना उसे गुप्तकुल के कलंक के समान लगता है। वह इस संदर्भ में रामगुप्त का विरोध करता है। वह ध्रुवस्वामिनी का सच्चा प्रेमी है वह उसके लिए प्राणों का खतरा मोल लेने के लिए तैयार है। वह अत्यधिक साहसी है। वह शकराज को पराभूत करता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि चंद्रगुप्त में उनेक उदात्तचारित्रिक गुण है।

रामगुप्त- यह इस नाटक का खल चरित्र है । चंद्रगुप्त का चरित्र जिनता उज्ज्वल है उतना ही रामगुप्त का चरित्र कलुषित है। वह महाराज स्कंदगुप्त का बड़ा पुत्र है। किन्तु उसका आचरण बहुत गिरा हुआ है। वह विलासी, मद्यपि, शराबी और डरपोक है, वह षडयंत्री भी है। वह छल से गुप्त साम्राज्य के सिंहासन पर बैठता है। वह ध्रुवस्वामिनी पर भी अधिकार कर लेता है। परन्तु सदैव डरता रहता है कि ध्रुवस्वामिनी और चंद्रगुप्त उसके खिलाफ कोई षडयंत्र न करें। उसे अपनी मर्यादा का कोई ध्यान नहीं है वह शकराज के पत्र से डरकर ध्रुवस्वामिनी को उसके पास भेजने के लिए तैयार होता है।

वह अत्यधिक शंकालू है। वह स्वार्थी भी है। शकराज पर विजय प्राप्त करने के बाद वह स्वार्थी वृत्ति से ध्रुवस्वामिनी से मिलना चाहता है। वह कोमा जैसी कोमल स्त्री की हत्या कर देता है। वह चंद्रगुप्त को भी पीछे से वार करके मारना चाहता है।

मंदाकिनी एक सहायक स्त्री चरित्र है। यह चरित्र नाटक में बहुत कम बार रंगमंच पर आता है। वह चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी की पक्षपातिनी है। वह चाहती है कि चंद्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी का परिणय हो जाए। रामगुप्त द्वारा ध्रुवस्वामिनी को बंदी बनाने के आदेश का वह यह कहकर विरोध करती है कि महाराज अपने पुरूषार्थ का इतना बड़ा उपहासास्पद प्रदर्शन न कीजिए। मंदा दयालू, विचारवान स्त्री है। वह प्रेरणा के गीत गाती है। वह अच्छे बुरे का फर्क समझती है। वह मंदाकिनी की आवाज ही है कि जिस पर विचार करके पुरोहित यह निर्णय देता है कि ध्रुवस्वामिनी को रामगुप्त से मोक्ष का (मुक्ति का) पूर्ण अधिकार है ।

कोमा- कोमा शकराज की प्रेमिका है। वह आचार्य मिहिरदेव की पालित पुत्री है। वह शकराज से विवाह का स्वप्न देखती है। स्वभाव से कातर, अत्यधिक दयालु है। शकराज का हमेशा युद्व में रहना उसे अच्छा लगता नहीं। युद्व से उसे घृणा है। प्रेम को वह एक रहस्यमयी शक्ति मानती है। उसके मन में यौवन की उमंगे हैं। वह शकराज को ध्रुवस्वामिनी के संदर्भ में समझाने का प्रयास करती है। कोमा मिहिरसेन का आदेश मान कर शकराज को छोड़ कर चली जाती है।

उसे जब यह पता चलता है कि शकराज की हत्या हो गई है, वह उसका शव माँगने के लिए जाती है वह अपने मन से शकराज का वरण कर चुकी थी। वह सरल ह्वदय, भावुक प्रेमिका है। रामगुप्त के द्वारा उसकी भी हत्या हो जाती है। वह करूण रस निर्माण करती है।

शकराज- एक अद्‌भुत व्यक्तित्व वाला व्यक्ति है। वह अपने पुरूषार्थ में आस्था रखता है। भाग्य को मानना वह पुरुष की निर्बलता का प्रतीक मानता है। मिहिर देव द्वारा धुमकेतु दिखाने के बाद वह मन में घबरा जाता है। उसका प्रेम भाव भी स्थिर नहीं है। ध्रुवस्वामिनी के आगमन की सूचना से उसके कोमा के प्रति प्रेम के मनो भाव में अंतर आ जाता है। वह किसी की अधीनता स्वीकार करना नहीं चाहता। वह मिहिर देव का सम्मान करता है। उसका चंद्रगुप्त के हाथों दु:खद अंत होता है।

आचार्य मिहिर देव- आचार्य मिहिर देव उदात्त गुणों से युक्त दार्शनिक हैं। वे अबोध कोमा को परोपकार वश पुत्री के समान पालते-पोसते हैं, शिक्षा देते हैं। कोमा के स्थान पर उसे ध्रुवस्वामिनी को रानी बनाना अच्छा नहीं लगता है। वे उसे समझाने का प्रयास करते हैं। वे कोमा को अपने साथ चलने के लिए कहते हैं। कोमा की इच्छा को जानकर शकराज का शव माँगने के लिए ध्रुवस्वामिनी के पास वे कोमा के साथ आत हैं। रामगुप्त के सैनिकों द्वारा उनका वध होता है।

शिखर स्वामी- शिखर स्वामी ऐसे अधमभाव और विचार व्यक्त करता है कि प्रेक्षकों को उससे घृणा होने लगती है। उसके षड़यंत्र के कारण ही रामगुप्त चंद्रगुप्त के स्थान पर साम्राज्य का अधिकारी बनता है। वह चापलूस है। वह रामगुप्त से मंत्रणा करके ध्रुवस्वामिनी तथा चंद्रगुप्त को काँटे की तरह निकाल कर दूर करने की सोचता है। वह अवसरवादी भी है। वह समय देखकर अपनी चालें बदलता है। वह राज पुरोहित से भी उलझता है। जब रामगुप्त के पक्ष में अंत में कोई भी नहीं रहता तो वह भी चंद्रगुप्त के पक्ष में मिल जाने में ही अपनी भलाई समझ ाता है। वह अधम से अधम कृत्य करके अपना स्वार्थ सिद्‌ध करना चाहता है।

पुरोहित- इनका कोई विशेष नाम नहीं है। परन्तु वे बड़े तेजस्वी और निर्भीक व्यक्ति है। जब वे इस बात को अनुभव करते हैं कि ध्रुवस्वामिनी और रामगुप्त का विवाह संबंध उचित नहीं तो वे किसी की चिंता न करते हुए योग्य निर्णय देते हैं। धर्म के प्रति उनकी अटूट श्रद्वा है। वे स्पष्ट वक्ता, निर्भय व्यक्ति है।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक का नायक

वैसे पुरुष पात्रों में ध्रुव स्वामिनी' नाटक में प्रसाद जी ने रामगुप्त और चंद्रगुप्त दोनों के चरित्रों पर समान बल दिया है।

(1) शास्त्रीय दृष्टिकोण से भी कथावस्तु में नायक का आद्योपरांत योगदान होना चाहिए, नायक मूल कथानक की घटनाओं को फलागम की ओर ले जाता हो।

(2) वस्तु का जो अंतिम फल होता है नायक उसका उपभोक्ता हो।

(3) उसमें (नायक में) नायकोचित गुण भी होने चाहिए। अगर इस दृष्टि से विचार करें तो रामगुप्त एवं चंद्रगुप्त दोनों भी कथा वस्तु पर छाए हुए दिखाई देते हैं। प्रथम अंक में भी रामगुप्त ही छाया हुआ है। द्वितीय अंक में रामगुप्त का पात्रों के द्वारा उल्लेख भी नहीं मिलता और वह किसी क्रियाकलाप से संबंधित भी नहीं है, परन्तु तृतीय अंक में वह फिर से अनेक घटनाओं से संबंधित दिखाई देता है।

अंततः हम उसे राज परिषद में देखते हैं। वह सामंतों पुरोहित, सभासदों से दुर्वचन में बात करता है। फिर वह चंद्रगुप्त की हत्या के प्रयास में एक सामंत के हाथों स्वयं ही मारा जाता है।

इसके विपरित चंद्रगुप्त के नायकत्त्व का इस दृष्टि से दुर्बल पक्ष तो है तथापि इस नाटक की कथा वस्तु से उसका पर्याप्त संबंध है। 'ध्रुवस्वामिनी' इस नाटक की नायिका है। वह स्वयं चंद्रगुप्त के रूप, व्यक्तित्व, गुण एवं साहस की प्रशंसा करती है। वह उसके स्वास्थ्य की चिंता करती है। वह चंद्रगुप्त पर विश्वास करती है इसीलिए प्राणों की बाजी लगाकर वह चंद्रगुप्त के साथ शकराज के शिविर में जाती है। नायक का कर्तव्य होता है कि वह दुष्टों का निर्दालन करें। चंद्रगुप्त शकराज के अपराधों से क्रोधित होकर उसका संहार करता है, चंद्रगुप्त लोकप्रिय नायक है उसके सामंत रामगुप्त की हत्या करते हैं।

नाटक के फल का उपभोक्ता रामगुप्त नहीं चंद्रगुप्त है वह स्कंदगुप्त के साम्राज्य का पिता के द्वारा ही चुना गया उत्तराधिकारी भी था। अंत में उसकी जय जयकार सांमत कुमार 'राजाधिराज चंद्रगुप्त की जय' इस प्रकार भी करते हैं। वह सब के मन से दुष्टों की कृतियों के कारण उत्पन्न भय- भावना का निराकरण करता है।

धनंजय के अनुसार नायक में मधुर, त्यागी दक्ष प्रिय बोलने वाला, अनुरागी, पवित्रात्मा, वाक्पटु कुलीन, युवक, बुद्धिमान, उत्साही, स्मरण शक्ति से संपन्न, प्रज्ञावान, कला मर्मज्ञ, शूरवीर, प्रतीज्ञा पालन में दृढ़, तेजस्वी, धार्मिक और शास्त्रज्ञ होना चाहिए।

उपर्युक्त लगभग सभी गुण किसी न किसी रूप में चंद्रगुप्त में देखने को मिलते हैं। रामगुप्त उच्च कुलीन परिवार में जन्मा परन्तु उसका आचरण गिरा हुआ एवं पतितों के समान है।

इसलिए चंद्रगुप्त ही इस नाटक का नायक है।

'ध्रुवस्वामिनी' -शीर्षक

यह नाटक स्त्री-चरित्र प्रधान नाटक है। इस नाटक में ध्रुव स्वामिनी का नाटक की घटनाओं में सर्वाधिक सहयोग है। इस नाटक की मूल समस्या भी ध्रुव स्वामिनी के साथ संबंधित है। इस नाटक के केन्द्र बिन्दु में 'ध्रुवस्वामिनी' का ही चरित्र है। वास्तव में ध्रुवस्वामिनी का ऐतिहासिक नाम ध्रुवदेवी है, परन्तु प्रसाद जी ने 'ध्रुव स्वामिनी' नाम देकर नाम का गौरव बढ़ाया है। ध्रुवस्वामिनी की इस नाटक में प्रधानता निर्विवाद है। रामगुप्त के राज्य से वंचित होने, उससे युक्ति पाने और उसके अंत तक की जो घटनाएँ हैं, उनको देखते हुए ऐसा अनुभव होता है कि इन घटनाओं के पीछे ध्रुवस्वामिनी का हाथ है। चंद्रगुप्त की प्रेरणा के रूप में ध्रुवस्वामिनी पूरे नाटक में उपस्थित है। वह चंद्रगुप्त के साथ गुप्त कुल के गौरव की रक्षा में प्रतिबद्ध है।

शकराज की मृत्यु का मूल कारण भी ध्रुवस्वामिनी ही है। इस नाटक में जो नारी-पात्र हैं वे भी ध्रुवस्वामिनी के व्यक्तित्व से प्रेरित हैं। वे उसका आदर करते हैं। मंदाकिनी के चरित्र का तानाबाना तो ध्रुवस्वामिनी के चरित्र के आसपास ही बुना हुआ है।

इन नाटक के अंत में चंद्रगुप्त के साथ ध्रुवस्वामिनी के नाम की जयकार होती है। इस नाटक के आधार के रूप में ध्रुवस्वामिनी है। उसके पात्र के साथ अधिकांश चरित्रों का विकास भी बंधा है।

यह छोटा, समर्थक, शीर्षक इस नाटक के लिए उचित, सर्वथा सार्थक एवं समर्पक है।

घ्रुवस्वामिनी- (संकलन त्रय) देश काल, वातावरण

देश-काल -वातावरण का नाटक के संदर्भ में अत्यधिक महत्व है। वर्ण्य विषय के संदर्भ में सभी बातें स्वाभाविक एवं सत्य लगे इसलिए पात्रों की वेशवूषा, आचार -व्यवहार आदि तथ्यों के प्रति जागरूक रहना पड़ता है। 'ध्रुवस्वामिनी' प्रसाद जी की प्रौढ़तम कृति है। इसमें प्रसाद जी ने बहुत ही जागरूकता के साथ तत्कालीन रीति-रिवाज, वातावरण, भाषा, वेशभूषा, संबोधन आदि के संदर्भ में अंकित किया है।

वहाँ के राज प्रासाद, शिविर, सैनिक हथियार, पर्दे, खंभे, शामियाने आदि का वर्णन तत्कालीन स्थितियों के साथ मेल खाता है।

विलासी राजा, उसका मदिरापान, नर्तकियाँ मादक गीत, उसके साथ ही हिज़डे, कुबड़े ,बौनों की फौज अत:पुर आदि का चित्रण भी देशकाल के अनुसार है। ध्रुवस्वामिनी और उसका अयोग्य पति रामगुप्त और अंत में उन दोनों का संबंध विच्छेद इसके द्वारा लेखक ने तत्कालीन सामाजिक विचार धारा का भी संकेत दिया है।

स्त्रियों की दयनीय दशा तथा सति प्रथा का उल्लेख भी मिलता है। मिहिरदेव एवं कोमा जैसे निरपराधों की हत्या भी अमानवीयता की चरम सीमा दिखाती है।

राजपुरोहित, राज परिषद, सामंत कुमारों, तथा राजा-रानी की जय जयकार आदि बातों का चित्रण भी है।

कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि ध्रुवस्वामिनी नाटक में देश काल वातावरण के चित्रण में इस संकलन त्रय का निर्वाह बहुत उचित ढंग से किया गया है।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में चित्रित समस्या

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक को पढ़ने के बाद अनुभव होता है कि यह एक समस्या नाटक है। समस्या मूलक नाटकों के अंतर्गत इसका समावेश होता है। स्त्रियों की पतित एवं अधोदशा का चित्रण इस नाटक में प्रमुखता से हो गया है। विवाह जैसी महत्वपूर्ण घटना में भी स्त्री का मत उसका मन आदि का विचार नहीं किया जाता, किसी कारणवश, स्वार्थवश अपने बचाव के लिए स्त्री को किसी के भी गले में मढ दिया जाता है फिर उसका जीवन भंयकर यंत्रणाएँ भोगता है। स्त्रियों पर तो यह संसार आधारित है परन्तु उसकी दशा क्या है? उसका क्या सम्मान है?

अयोग्य एवं पशुतूल्य पति से पत्नी को मोक्ष मिलना ही चाहिए। नारी के दो रूप यहाँ प्रसाद जी ने चित्रित किए हैं- कोमा और ध्रुवस्वामिनी। ध्रुवस्वामिनी तेजस्वी है वह अपनी व्यक्ति एवं विवेक द्वारा अपने स्वयं के जीवन में उजाला कर देती है। वहाँ भावुकता में बंधी कोमा की हत्या हो जाती है।

'ध्रुवस्वामिनी' की मूल समस्या नारी जाति की एवं राजनीति की समस्या है। यदि किसी स्त्री का उसकी इच्छा के प्रतिकूल ऐसे व्यक्ति से विवाह हो जाता है जिसका चरित्र गिरा हुआ है वह लंपट एवं अयोग्य है तो स्त्री को उससे मुक्ति पाने का अधिकार है।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक का उद्देश्य

कोई भी रचना निरूद्देश्य नहीं होती । रचना के पीछे साहित्यकार का कोई न कोई उद्देश्य आवश्य होता है। 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में कुटुंब एवं समाज के साथ जुड़ी हुई समस्या का उद्‌घाटन करना और उसका समाधान प्रस्तुत करना नारी जाति को सम्मान प्रदान करना यह उद्देश्य दिखाई देता है।

'ध्रुवस्वामिनी' जीवन के कुचक्र में फँस जाती है। जब उसका स्त्रीत्व खतरे में पडता है तो अपने नारीत्व की रक्षा के लिए वह रामगुप्त से विलास करने एवं उसकी दासी बनकर जीवन बीताने के लिए तैयार होती है। जब उसके स्वत्व एवं नारित्व का अपमान रामगुप्त करता है तो उसमें स्कुल्लिंग जल उठता है। सम्पूर्ण घटनाचक्र को वह अपने कार्य कलापों से उलट देती है।

प्रसाद जी ने नारी को प्रेरणा दी है कि वह स्वयं जागे तो अपनी रक्षा स्वयं करके साहस के साथ जीवन के कुचक्रों को भेद सकती है, अपने प्रेम को पा सकती है। और दुराचारी पति से मुक्ति पा सकती है।

शकराज और कोमा के प्रसंग को दिखाकर भी प्रसाद जी पाठकों को अंतर्मुख करा देना चाहते हैं। जहाँ प्रेम और भावनाओं का निरादर होता है वहाँ व्यक्ति का आशा लगाएँ रहना उसे विनाश की ओर ले जाता है। सत्ता एवं सौंदर्य पिपासा तथा कामुकता मनुष्य के जीवन का विनाश करती है यह शकराज के चरित्र का अंत बताता है।

शकराज एवं रामगुप्त की हत्या एवं पराजय सत्य की असत्य पर विजय दर्शाता है। अयोग्य, अत्याचारी, विलासी, कामांध का अंत तो कभी ना कभी बुरी तरह से होता है।

चंद्रगुप्त के चरित्र के द्वारा लोगों में एक आदर्श एवं प्रेरणा जगाने का उद्देश्य प्रसाद जी के सामने रहा होगा।

इतिहास की घटनाओं को वास्तविकता की कठोरता में तथा काव्य एवं कला में बाँधकर अद्भूत रूप से प्रस्तुत करने का उद्देश्य भी रचनाकार का रहा होगा।

'ध्रुवस्वामिनी' नाटक की भाषा शैली

नाटक के प्राणतत्व उसके संवाद हैं, संवाद भाषा शैली पर आधारित होते हैं, जितने संवाद सशक्त, उतनी ही भाषा सशक्त मानी जाती है। भाषा को गुणयुक्त एवं शक्तिशाली बनाने के लिए भाषा सौंदर्य तत्व की ओर देखा जाता है अर्थात् भाषा शैली की कुछ विशेषताओं को देखा जाता है।

(1) भाषा बहती, अर्थात् प्रवहमान हो।
(2) सरल सुबोध, अक्लिष्ट हो।
(3) पात्रों की मनो दशा एवं वर्ग विशेष को व्यक्त करती हो।
(4) उसमें स्वाभाविक अलंकारिकता हो।
(5) उसमें मुहावरे कहावतों का प्रयोग हो।
(6) मार्मिक एवं सुन्दर सूकियाँ हो।
(7) वह अभीष्ट भावों को प्रकट करें।
(8) वह रसों का प्रकटीरण करें।

उपर्युक्त गुणों की कसौटी पर 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक की भाषा सफलता से उतरती है केवल भाषा एवं संवाद कहीं-कहीं पर क्लिष्ट हो गए हैं।

भाषा में प्रवाह अवश्य है-उदा. के लिए 'ध्रुवस्वामिनी', मंदाकिनी, चंद्रगुप्त एवं कोमा के संवाद कुछ स्थानों की शब्दों की संस्कृत प्रचुरता एवं किलष्टता को छोड़कर भाषा सर्वत्र सुबोध, सरल एवं स्वाभाविक है।

प्रसाद जी की भाषा की विशेषता यह है कि गद्य की जगह काव्य जैसी प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता अभिव्यक्त होती है। स्वाभाविक रूप में भाषा अलंकृत करना प्रसाद जी का विशेष गुण है। स्थान-स्थान पर संवादों में उक्तियाँ बिखरी पड़ी हुई हैं। कहावते और मुहावरों का प्रयोग भी दिखाई देता है। जैसे अभिनय करना, इंद्रजाल में ग्रस्त होना, इंद्रजाल फैला देना, भीषण भविष्य होना, प्राणों का मूल्य समझना, बाहुबल पर विश्वास होना नीड़ में बसेरा कर लेना, स्वर्ण पिंजर में कैद होना, चोटकर बैठना, कुचक्र धूमना हाथ धौ बैठना, भाग्य के आसरे होना, राम के आसरे होना आदि।

उक्तियाँ एवं सूक्तियाँ

(1) सच है वीरता जब भागती है तो उसके पैरों से छल छंद की धूल उड़ती है।
(2) प्राणों की क्षमता बढ़ा लेने पर वही काई जो बिछलन बनकर गिरा सकती थी, दूसरों के ऊपर चढ़ने का अवलंब बन जाती है।
(3) मेध संयुक्त आकाश की तरह जिसका भविष्य घिरा हो, उसकी बुद्दि को तो बिजली के समान चमकना चाहिए।
(4) सौभाग्य और दुर्भाग्य मनुष्य की दुर्बलता के नाम हैं।
(5) पाषाणी के भीतर भी कितने मधुर स्रोत बहते रहते हैं।

ऐसे कई उदाहरण नाटक में यत्र-तत्र बिखरे हैं इस प्रकार भाषा सर्वत्र अपनी सुंदरता एवं पात्रों के सम्यक मनोभावानुकूल व्यक्त हुई है।

नाट्य विद्या के तत्व एवं अन्य साहित्यिक कसौटियों पर परखने के बाद ज्ञात होता है कि 'ध्रुव स्वामिनी' का स्थान नाट्य एवं साहित्य जगत में अद्वितीय है। प्रसाद जी की प्रतिभा एवं साहित्यिक सूझबूझ का यह अत्युत्तम उदाहरण है। ध्रुवस्वामिनी नाटककार के रूप में प्रसाद जी का कीर्ति स्तंभ है।

*****

४ निबंध

प्रिया नीलकंठी
ले.कुबेरनाथ राय

निबंधकार कुबेरनाथ राय का जीवन

कुबेरनाथ राय का जन्म 26 मार्च, सन् 1939 ई. दिन रविवार, तद्नुसार चैत्र अमावस्या, संवत् 1990 विक्रमाब्द को वृषलग्न व मीन राशि पर उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जनपद में जमानिया क्षेत्र के मतसा गाँव में, भार्गव,च्यवन,आप्नवान,और्य एवं यमदग्नि प्रवर वाले वत्स गोभी किसान ब्राहमण कुल में माता श्रीमती लक्ष्मी देवी एवं पिता वैकुंठनाथ राय की प्रथम संतान के रूप में हुआ था।

परिवार- परिवार सनातनी स्मार्त वैष्णव है। कुबेरनाथ परिवार में बड़े थे। दो भाई एवं तीन बहनें थीं । विवाह बहुत दूर पश्चिम बंगाल (मालदह जिले) के एक गाँव में बड़े किसान श्री वीर भंजन पाण्डेय की पुत्री श्रीमती महारानी देवी से हुआ था । परिवार की कुबेरनाथ राय ने कभी उपेक्षा नहीं की। संयुक्त परिवार की अवधारणा और जिम्मेदारी का निर्वहन आजन्म करते रहे। संतान के रूप में एक मात्र श्री कोशलेन्द्र कुमार ही पैदा हुए, जिन्हें अपराजिता और अनंत विजय दो संताने हैं।

कृतित्व- एम.ए. पास करने के बाद विक्रम विद्यालय हावड़ा में कुछ दिन अंग्रेजी के अध्यापक रहे। फिर 1959 में नलवारी कॉलेज, नलवारी (असम) में अंग्रेजी के व्याख्याता नियुक्त हुए। वही अपने जीवन के 25 वर्ष अंग्रेजी के व्याख्यान और विभागध्यक्ष के रूप में बिताये । वहां का राजनीतिक माहौल बदल जाने के कारण असम छोड़कर नौ वर्ष तक स्वामी सहजानंद महाविद्यालय गाजीपुर में प्राचार्य पद पर कार्य करके 30 जून सन् 1995 को सेवामुक्त हुए थे।

कुबेरनाथ राय की कृतियाँ

प्रिया नीलकंठी	(1969)
रस आखेटक	(1970)
गंध मादन	(1972)
निषाद योग	(1973)
निषाद बाँसुरी	(1974)
पर्णमुकुट	(1978)
महाकवि की तर्जनी	(1978)
मणिवुतूल के नाम	(1980)
कामधेनु	(1980)

मनपवन की नौका, द्विपांतर, किरात नदी में चंद्र मधु, त्रेता का बृहत्साम, लौहमृदंग, दृष्टि अभिसार, मराल, उत्तर कुरू, चिन्मय भारत, अंधकार में अग्निशिखा,

(कुबेरनाथ राय के स्वर्गवास के पश्चात् प्रभाकर प्रकाशन दिल्ली से, फरवरी 1998 उपयुक्त रचनाएँ प्रकाशित हुईं)

श्री कुबेरनाथ राय साठोत्तर युग के श्रेष्ठ ललित निबंधकार

श्री कुबेरनाथ राय साठोत्तर युग के श्रेष्ठ ललित निबंधकार हैं। कुबेरनाथ राय अपने आपको ललित निबंधकार मानते हैं। आत्माभिव्यंजक शैली में लिखे गए अपने निबंधों को ललित निबंध की संज्ञा देते हैं। कुबेरनाथ राय हिन्दी निबंध के क्षेत्र में एक ऐसा नाम है जो केवल ललित निबंध के लिए ही समर्पित है। उनके नौ से अधिक निबंध संग्रह प्रकाशित हो गए हैं।

स्वतंत्रता के बाद जो परिवर्तन आया है जिसका प्रभाव सहित्य की सभी विधाओं पर प्रति फलित होता दिखाई देता है। निबंध भी उससे अछूता नहीं रहा। निबंध के एक तत्व व्यक्तित्व को प्रधान मानकर 'ललित निबंध' इस नवीन विधा का रूप निर्माण हो गया।

डॉ. प्रभाकर माचवे इन्हें आत्म निबंधं की संज्ञा देते हैं। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी इन्हें आत्मपरक निबंध कहते हैं। डॉ. गंगा प्रसाद गुप्त के मत से ये व्यक्तिवादी निबंध हैं। जगदीश चंद्र माथुर ने इसे मन की मौज कहा है।

ललित निबंध की परिभाषा

(१) डॉ. विद्या निवास मिश्र-ललित निबंधों में मोहकता, स्मृतियों के ताने-बाने से उतनी नहीं भाती, जितनी आती है शब्दों की विषमताओं से और भावों की सरसता से आरोही, अवरोही, सरसता से, जबकि व्यक्ति व्यंजक निबंधों में स्मृतियों का ताना-बाना विशेष मतलब रखता है। और ये स्मृतियाँ अपनी होते हुए भी दूसरों में घुली हुई अपनेपन की होती हैं। व्यक्ति व्यंजक में भाव विचारमय होने के लिए प्रस्तुत होते हैं। और शब्द आत्मीय संवाद स्थापित करने के लिए, ललित निबंध लिखने के लिए 'मुक्त निबंधक फक्कड़पन, होना आवश्यक है। नि:संग फक्कड़पन के साथ-साथ आस-पास के जीवन में गहरी संपृक्तता होना भी आवश्यक है।

(२) श्रीमती दिनेश नंदिनी- ललित निबंध में लेखक की वैयक्तिकता को प्रधानता मिलती है, इसिलए यह गद्य काव्य के निकट है।

(३) डॉ. शंकर पुणतांबेकर - वह मधुर साहित्य लेख- जिसमें निबंध और कहानी का संकर हो। अर्थात् कहानी सी रोचकता और निबंध की गंभीरता का मिलाजुला रूप।

(४) डॉ. मु.ब.शहा- व्यक्ति सापेक्षता स्वच्छंदता, वैचारिकता, गुणों से संपृक्त, संक्षिप्त गद्य रचना को ललित निबंध कहा जा सकता है।

ललित निबंधों के तत्व

ललित निबंधों ने अपनी स्वतंत्र पहचान स्थापित कर ली है। ललित निबंध और निबंध के विभाजक बिन्दुओं की ओर संकेत किया गया तो उन्हीं बिन्दुओं को तत्व के रूप में माना जाता है।

डॉ. जयनाथ नलिन ने ललित निबंध के लिए आवश्यक तत्व इस प्रकार गिनाए हैं- सभ्यता, संस्कृति, और लोक जीवन की अनुभूति, सहज अभिव्यंजना, शिल्प में व्यक्तित्व का प्रकाशन भाव और भाषा की मधुरता, सुकुमारता सुबोधता, सरलता आदि।

डॉ. हर्षनारायण नीरव के मत से परिवेश, अनुभूति और समझ की एकान्विति, आत्माभिव्यंजना तथा आस्तित्व बोध ललित निबंध के आवश्यक तत्व हैं।

कीर्ति वल्लभ- के मतानुसार-ललित निबंध के लिए व्यक्ति व्यंजकता, स्वच्छंद चिंतन निश्च्छल -अनुभूति, सरसता और रागात्मकता को प्राधान्य दिया है।

डॉ. जगन्नाथ चौधरी- सभी मतों का निचोड- या सार बताते हैं कि ललित निबंध के लिए आत्मीयता, आत्मानुभूति, कल्पना, व्यक्तित्व की अभिव्यंजना, भाषा-शैली की विशेषता और लघु आकार ललित निबंध के तत्व हैं।

निष्कर्षत:- ललित निबंध एक रसवादी परम्परा है। या एक अनौपचारिक रचना है। आधुनिक ललित निबंधों में लालित्य, आत्मकथन, वैयक्तिकता और पाठकों में आत्मीयता दिखाई देती है।

ललित निबंधों की परम्परा

निबंध के क्षेत्र में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का नाम महत्वपूर्ण है। पांडित्य, धर्म, दर्शन, इतिहास, पुरातत्व, भाषा विज्ञान आदि शास्त्रों का बहुश्रृतज्ञान, मानवता वादी दृष्टिकोण भाव प्रधानता आदि विशेषताएँ उनके ललित निबंधों में स्पष्ट दिखाई देती हैं। उनके निबंधों में सर्जक का व्यक्तित्व और आलोचक के व्यक्तित्व का अद्‌भुत संगम है। प्राचीनता और नवीनता का सामंजस्य है। वैविध्य की दृष्टि से नाखून क्यों बढ़ते हैं? दीपावली: सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतीक, एक कुत्ता और मैना, शिरिष के फूल, अशोक के फूल, कल्पलता, कुटज आदि प्रमुख ललित निबंध हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की परम्परा को विकसित करने वाले विद्या निवास मिश्र ललित निबंधकार के रूप में साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुए विद्यानिवास मिश्र का व्यक्तित्व आलोचक, कवि, संपादक, अनुवादक से समन्वित है। उपनिषद, पुराण, शास्त्र, धर्म के साथ-साथ लोक जीवन, लोक संस्कृति तथा लोक शास्त्र के ज्ञाता हैं। संस्कृत, पाली, प्राकृत, फ्रेंच, अंग्रेजी,फारसी आदि भाषाओं पर उनका अधिकार था । उन्होंने तमाल के झरोखे से, गाँव का

मन, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, वसंत आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं, परम्परा बंधन नहीं, शेफाली झर रही है, छितवन की छाँह, आँगन का पंछी और बनजारा मन आदि लगभग 39 निबंध संकलन प्रकाशित किये हैं।

मिश्र जी के निबंधों की विशेषता है कि विचार अथवा घटना को विविध संदर्भों में करना, प्राकृतिक सुषभा के चित्र अंकित करना, भोजपुरी बोली भाषा के उदाहरण प्रस्तुत कर पाठकों में आत्मीयता स्थापन करना। वे ज्ञान का उपयोग विषय को स्प्ष्ट करने और पाठकों को समझा देने के लिए अधिक करते हैं।

कुबेरनाथ राय -कुबेरनाथ राय अपने आप को ललित निबंधकार मानते हैं। आत्मा भिव्यंजक शैली में लिखे गये अपने निबंधों को **ललित निबंध** की संज्ञा वे देते हैं। कुबेरनाथ राय हिंदी निबंध के क्षेत्र में एक ऐसा नाम है जो केवल ललित निबंध के लिए ही समर्पित है। उनके नौ सौ से अधिक निबंध संग्रह प्रकाशित हुए हैं। कुबेरनाथ की विशेषता है रसमयता। प्रिया नीलकंठी और रसआखेटक उनके प्रकृति वर्णन से भरपूर, रसमयता से परिपूर्ण निबंध हैं। असम की पूरी प्रकृति उसमें सजीव हो गई है।

कुबेरनाथ राय की दूसरी विशेषता है- भारतीय संस्कृति के प्रति, भारतीयता के प्रति अटूट लगाव एवं आकर्षण, भारत की हर बात हर परम्परा उन्हें लुभाती है। प्राचीन को पचाकर,छानकर वर्तमान का संतुलित मूल्यांकन और भविष्य के प्रति दिशा देने वाले उनके निबंध हैं।

प्रिया नीलकंठी- शीर्षक

'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह का नाम है। वास्तव में ये दोनों शब्द संस्कृत शब्द है। 'नील कंठ 'महादेव जी का नाम है। महोदव ने गरलपान किया था तो उनका कंठ नीला हो गया था। उनका कंठ विषपायी था ।

लेखक के अपने मत से यह 'निर्वासन और नीलकंठी प्रिया' नामक निबंध से यह नाम निकाला गया । शिव तो नीलकंठ नाम से विख्यात हैं ही । मेरी कल्पना, मेरी प्रतिमा श्री विषपायी नीलकंठी है। दु:ख के या उल्लास के भीतर जहर होता है, उस जहर को यह खींचकर स्वयं श्याम कंठ हो जाती है। और धरती को जो कुछ देती है, वह शुद्व प्राण और रस रहता है।

'प्रिया नीलकंठी' में संस्कृति एवं साहित्यिक सुगंध मौजूद है। यह शीर्षक दो शब्दों से बना संक्षिप्त शीर्षक है। यह प्रतीकात्मक शीर्षक भी है। इस शीर्षक में कौतूहल है, उत्सुकता बढ़ाने वाला यह शीर्षक है।

लगभग सभी निबधों के साथ इसका संबंध है। एक छोटा, आकर्षक, समर्पक, प्रतीकात्मक एवं संक्षिप्त तथा सुंदर शीर्षक है। इस शीर्षक में एक ऐसा आकर्षण है कि पाठक यह जानना ही चाहता है कि आखिर इस निबंध संग्रह में क्या है?

श्री कुबेरनाथ राय के निबंधों का मुख्य उद्देश्य

भारतीय साहित्य, गंगा के तीर पर बसा लोक जीवन और आर्येतर भारत, रामकथा, गांधी दर्शन और आधुनिक वैश्विक चिंतन का चित्रण उनके निबंधों का उद्देश्य है। लेखक मनुष्य, पृथ्वी और ईश्वर से जुड़कर मनुष्य चेतना का अहंकार संयमित होता है। ईश्वर से विच्छिन्न होने पर ही मनुष्य अहंकार की भाषा बोलता है। क्षुद्र स्वार्थ की भाषा बोलता है।

लेखक ने सांसारिक अनुभवों की यंत्रणा से गुजरने का अनुभव किया है तभी उसकी सर्जना वैश्विक चेतना का अक्षय आगार बन गई है।

लेखक लोक जीवन, लोक संस्कृति व लोक साहित्य की छोटी-छोटी दृष्टियों व परिकथाओं को एक अखंड लोक जीवन कथा के रूप में प्रस्तुत करता है। यहाँ तक कि पूर्वोत्तर भारत की निषाद व किरात संस्कृति के अछूते रूपों की भव्य झाँकी को लेखक ने अत्यंत गहराई से चित्रित किया है।

कुबेरनाथ राय के निबंधों के उद्देश्यों के बारे में कहा गया है कि भारतीय संस्कृति के उदात्त स्वरों को समकालीन जीवन की विद्रुपता, विडंबना, विसंगति तथा अनास्थाओं के कर्णभेदी कोलाहल से बचाते हुए उसकी शाश्वत व नित्य प्रासंगिकता को उद्‌घाटित करना ही श्री कुबेरनाथ जी के निबंधों का उद्देश्य है। इसलिए तो उन्हें रसधर्मा निबंधकार कहा जाता है।

उनके निबंधों में लोक मानस की सहज आस्था सर्वात्म भाव, अनुष्ठानिक विचारणा तो नित्य व स्थायी भाव की तरह विराजित है।

श्री कुबेरनाथ राय का चिंतन मौलिक है, वे अपने इस चिंतन को नई शैली के साथ मोहक रूप से चित्रित करते हैं। उनकी मूल मनोआस्था लोकांचल तथा ग्रामीण संस्कृति में अधिक रमती है। अपने निबधों में वे उसी आस्था को चित्रित करना चाहते हैं। उनकी लोकानुभूति वैयक्तिक न होकर भूमिका का मधुमय दान बन चुकी है। वे अपने निबंधों के द्वारा 'सर्वे भंवतु सुखिन': पर विश्वास व्यक्त करना चाहते हैं।

समृद्ध स्वस्थ एवं सहज जीवन के लिए लोक भावना की संस्कृति आज अत्यावश्यक है, परन्तु आज यह लोक संस्कृति धूमिल हो गई है इस चिंता को श्री कुबेरनाथ राय ने वाणी दी है। साथ ही साथ पिछले तीन चार दशकों से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विसंगतियाँ, अव्यवस्था, अविश्वास, अस्थिरता, बिखराव,तोड-फोड, उत्पीड़न, संत्रास का बुरी तरह से फैलाव हुआ है। सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन, नैतिकता का पतन भी दिखाई देता है, इन

सबको कुबेरनाथ जी ने अपने निबंधों में वाणी दी है और मनुष्य मात्र के सामने देश की स्थिति को रखकर उसे अंतर्मुख करने का प्रयास किया है।

'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह के अंतर्गत संकलित निबंधों की विशेषता

कुबेरनाथ राय की अपनी अलग सत्ता एवं पहचान है। इसी कारण कोई उन्हें शुक्लोत्तर निबंध साहित्य का प्रमुख हस्ताक्षर कहता है तो कोई उनके निबंधों की विशेषताओं को देखकर ललित पुरुष के रूप में संबोधित करता है।

हिंदी साहित्य को कुबेरनाथ राय का परिचय सन् 1969 में 'प्रिया नीलकंठी' के प्रकाशन से हुआ। इससे पहले ही रचना कर्म पर उन्हें आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार उत्तर प्रदेश सरकार से प्राप्त हुआ और उन्हें साहित्य अकादमी से भी पुरस्कार से गौरवान्वित किया।

उनके पहले चरण के निबंधों को 'मुग्धा निबंध' कहा जा सकता है। जिसमें 'प्रिया नीलकठी' के निबंध आते हैं वे एक सशक्त निबंध कार थे, बुराइयों के खिलाफ उन्होंने निबंधों के द्वारा अपने हाथ में धनुष बाण लिया और भारतीयता के महान शिव धनुष से उन्होंने ऐसे - ऐसे बाण चलाए कि उनके सामने अनेक योद्धा पराजित हुए।

आज के आधुनिक 'विज्ञान' युग को उन्होंने विषाद युग की संज्ञा दी है। उनके मत से बुद्धिवाद के महिषासुर हमारी भावों की लहलहाती खेती को रौंद डालेंगे। हमारी मूल्यवान संस्कृति के विरोध में अब प्रति संस्कृति पैदा हो गई है। 'प्रिया नीलकंठी' के 'डूबता हुआ देवयान' और 'मधु माधव' निबंध में यही विचार लेखक ने व्यक्त किए हैं। आज का व्यक्ति सुविधा भोगी और पलायन प्रवृत्ति का हो गया है। उनके निबंध संस्कृति के धार्मिक, सामाजिक पक्ष की तेजस्विता एवं सह्दयता से ओत-प्रोत हैं।

'प्रिया नीलकंठी' में लेखक अपनी प्रतिभा एवं कल्पना को वे प्रिया कहते हैं। जो विषपायी शिव-सी- नीलकंठी हो गई हैं ।'गूलर के फूल ' निबंध में गूलर के वृक्ष के बहाने आंतरिक सौदंर्य के महत्व को बताया है। 'गूलर का फूल' कभी दिखाई नहीं देता उसके पुष्प उसकी मस्तक मणियाँ उसके अंतर में हैं। जब नारायण ने हिरण्य कश्यप का वध किया तो उनके नाखूनों में जलन हो गई तो उन्होंने अपने नख जो जल रहे थे, उन्हें गूलर के शरीर में धँसाया । भगवान नारायण की नख ज्वलन तो शांत हो गई पर उस दाह को खींचकर गूलर का पेड़ विषाक्त हुआ। तब से उसके फल भी रसहीन एवं कीटपूर्ण होते हैं।

'हेमंत की संध्या' पाठ में मनुष्य अकेलेपन की सत्ता को भोगता है, यह बताया है। आज मनुष्य अंतराल में त्रिशंकु की स्थिति में है। वह त्यक्त रूप में है। लेखक के इस निबंध में विचार हैं सारे मूल्यों को फिर से गढ़ना होगा। नई पद्धति के द्वारा 'व्यक्ति ' को पूर्ण व्यक्ति करना होगा। आज युग धर्म बदल रहा है। आज नहीं तो कल हम अपने को दूसरे रूप में पाएंगे। एक ओर व्यक्ति है, दूसरी और बुद्विवाद ऐसी दोहरी त्रासदी राष्ट्रीय जीवन की है। बुद्विवाद राहु का रिश्तेदार बन गया है। हेमंत की करूणामयी उदास संध्या ने कई प्रश्न उठाये हैं।

'सनातन' नीम- गाँव में नीम के बहुत सारे पेड हैं। लेखन के आँगन में भी विशालकाय नीम का पेड है। सांयकाल को हर डाल पर पक्षियों की सभा लगी रहती है। लेखक उन्हें रोज देखता है। उनमें सहजीवन है, धीरे-धीरे आधी रात के बाद लेखक को नीम की टहनियों पर साहित्य पाने लगता है। रातभर यह प्रक्रिया चलती है। बचपन की कुछ स्मृतियाँ इस नीम के तल में जुड़ी है। लेखक नीम के पेड़ के नीचे बैठकर कई कल्पनाएँ करता है। हर मनुष्य को एक मणि मिली है पर वह उसे उगलना नहीं चाहता यह माफी उसका 'स्व' है । नीम का फूल कुछ शेष का प्रतीक है। गंध के रूप में यह 'अस्ति' पक्ष की जय है। नीम का फूल मामूली, धीमे सुस्ते परन्तु अमर स्नेह का प्रतीक है। इसकी जीवन की बूंदें हर युग में बची ही रह जाती है।

मनियारा साँप - लेखक ने अपने बाल सखा के संदर्भ में विचार लिखा है। भारतीय साहित्य पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। चैतन्य महाप्रभु के गीतों में राधा कृष्ण है। वैष्णवों की इस साधना के बारे में लिखा है । नये कवियों के बारे में लिखा है। आज व्यक्ति-व्यक्ति में राधा है। कवि ने रवीन्द्र नाथ की कविता का उदाहरण दिया है। मैं तो जन्म से ही रोमँटिक हूँ---- निबंधकार का कहना है मैं भी तो यही कहना चाहता हूँ ।

डूबता हुआ देवयान- इसमें लेखक ने पाश्चात्य रचनाकारों की पक्तियाँ उद्धृत की है। यूरोप के बुद्विजीवियों के मत दिये हैं। आज मनुष्य ने ईश्वर को अस्वीकृत करके बुद्वि को स्वामिनी और कामिनी बनाया । आज प्रत्येक मनुष्य असंतुष्ट और क्षुधा पीड़ित है। यह स्वयं को प्रति ईश्वर मानता है। आज का जगत वास्तव में लघु मानवों का बहुत भयत्रस्त समुदाय है लेखक कहते हैं अब तक देवता का अवतरण व्यक्ति में होता रहा है, परन्तु आगे चलकर देवता को भी अब अवसर की नई सामूहिक शैली ग्रहण करनी होगी।

आछी का पेड़ पैशाची, जरथुस्त्र और मैं- लेखक का आत्मचिंतन इसमें है। वह अपने ही दूसरे रूप को इसमें देखता है। लेखक ने विद्यापति चंडीदास की डी.एच.लॉरेन्स आदि के संदर्भ दिए हैं।

अवरूद्ध त्रेता, प्रतीक्षा रत धनुष- गाँव के लोगों की रामलीला का वर्णन आरंभ में किया है। इस संदर्भ में वे कहते त्रेता हमारे अंदर मरा नहीं, जीवित है। त्रेता भाव शुद्व रूप में आज भी हमारे अंदर जीवित है। लेखक सनातन त्रेता को अन्यत्र कहीं नहीं बल्कि आस-पास के जीवन के माध्यम से देखता है।

संपाती के बेटे- संपाती जटायु का बंधु है। गृद्व (गिद्ध) शाक्त पक्षी है। तुलसी दास ने गृद्धों की अपार दृष्टि और दूरदर्शिता का उल्लेख करके उनकी इज्जत बहुत कुछ बचा ली है। संपाती की कहानी बताते हुए लेखक ने एक सत्य उद्घाटित किया है कि निरावरण तेज, निरावरण नग्न सत्य और निरावरण सौंदर्य को सभी बर्दाश्त नहीं कर सकते । वैसे हर एक साहित्यकार थोडा बहुत संपाती होता है। संपाती पैगंबर बनने की चेष्टा करते रहते हैं। आज का मनुष्य मन से विविधता को बर्दाश्त नहीं कर पाता। आज मनुष्य को स्वयं नई-नई बेड़ियों की खोज है और वह बेडियाँ बनाता भी है।

चंड़ी थान - चंडिका देवी का चबूतरा। शिव की प्रिया चंड़िका। यह चंडीथान आसपास के बावन वत्स गोभी ग्रामों का कुलपीठ है। विश्व राजनीति तक इसका दखल है। लेखक ने इसमें तंत्र साधना का उल्लेख किया है। हिंदी साहित्य के बारे में अपना चिंतन स्पष्ट किया है।

निर्गुण नक्शे सबुज श्याम धरती - इसमें बंगाल की धरती के बारे में विचार व्यक्त किए हैं तथा भारतीय एवं पाश्चात्य रचनाकारों के संदर्भ दिए हैं।

निर्वासन और प्रिया नीलकंठी - कवि ने बाहरी जीवन से अस्वास्थ्य के कारण कुछ दिन निर्वासन में बिताये थे, तब उनके मन मे कई विचार आये थे। इसमें उन्होंने भारत के महान साहित्यकारों के बारे में अपने विचार व्यक्त किए हैं। अपने निर्वासन की तुलना लेखक ने संपाती के निर्वासन के साथ की है। निर्वासन अकेलेपन की पूरक अवस्था है। हिंदी कविता में निर्वासन की यह स्थिति कई बार पाई जाती है।

शमी वृक्ष पर लटकते शव - यह प्रतीकात्मक निबंध है 'वनपर्व' में लिखा है कि विराट नगरी में प्रवेश करने से पूर्व पांडवों ने अपने हथियार शमी वृक्ष की ऊँची शाखाओं के मध्य लटका दिए और ऊपर से एक मुर्दा लटका दिया । शमी के वृक्ष में अग्नि आकर छिप गए थे इसलिए इसे अग्निगर्भा भी कहते हैं।

हमारा देश तेज गर्भ शमी वृक्ष है। इसके गले में आज विधि निषेध के पुरोहिती अविद्या के और जड़ी भूत चिंतन के शव लटक रहे हैं। लेखक श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा में है जो इस लटकते शव को उतार कर फिर से शमी को अर्थात् संस्कृति को शाप मुक्त करेगा ।

बहुरूपी - गाँव में, मार्ग शीर्ष में द्वार-द्वार पर बहुरूपी बनकर अलग-अलग भेष सजाने वाले बहुरूपी उसके बहुरूपी पुत्र एवं उसकी पत्नी, शुक- सारिका का खेल इन सबका बहाना बनाकर कहा है हिन्दुस्तान ही एक बहुत बड़ा बहुरूपिया है। यह 'महानट' है। यह रात दिन शहर नगर में विविध भूमिकाओं में जी रहा है। हिन्दुस्तान की धरती पार्वती, अन्नपूर्ण है। यह धरती स्वयं एक श्रीचक्र है। इस श्रीचक्र का बोध ही जीवन की सार्थकता है।

यायावर -रस- ओद्युसियस होमर के नाटक का नायक है। उसकी कथा को पृष्ठ भूमि में रखकर कवि ने जीवन, देश, साहित्य के बारे में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

कुबेरनाथ राय के निबंधों में लोक संस्कृति

कुबेरनाथ राय भाषा बोली के अन्वेषक थे। वे लोक संस्कृति और श्रमिक संस्कृति को पर्याय नहीं मानते। उनके अनुसार -वास्तव में संस्कृति के दो भेद हैं- परम्परागत और आधुनिक परम्परागत संस्कृति के दो उपभेद हैं- अभिजात और लोक संस्कृतियाँ। लोक संस्कृति का केन्द्र है कृषक-और जन्मभूमि है ग्राम -। अभिजात संस्कृति का केन्द्रीय पुरुष है नागरिक और जन्म भूमि है- नगर परन्तु दोनो परस्पर मिलजुलकर चलते हैं। लोक संस्कृति का केन्द्र है कृषक। आधुनिक संस्कृति का केन्द्र है मशीन और उससे जुड़ा है श्रमिक मध्य वर्ग और पूँजीपति।

इस प्रकार असम और बंगाल की लोक संस्कृति को राय जी ने निकट से परखा-निरखा अत: उनके निबंधों में आर्य-आनार्य के सामंजस्य और निषाद, व किरात संस्कृति से संदर्भित अनके मौलिक उद्भावनाएँ उपलब्ध होती हैं। पान ताबूल, फूल चंदन, विवाह मंडप, पर्णछाज, नवान्न भोग, भूमि पूजा, दुर्गा पूजा आदि का उल्लेख एवं संदर्भ हैं।

उनका भारतीय इतिहास व लोक संस्कृति का गहन अध्ययन था। कुबेरनाथ राय के लोक संस्कृति विषयक निबंध एक ओर जहाँ आर्येतर लोक जीवन को स्थापित करते हैं वहीं भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में उनके अवदान एवं समन्वय को रेखांकित भी करते हैं। उनके निबंध लोक संस्कृति के निदर्शक, संस्कृति के प्रदर्शक, लुप्त इतिहास का प्रकटीकरण है।

प्रिया नीलकंठी में जीवन दर्शन

कुबेरनाथ राय भारतीय जीवन धारा को संस्कृति से और संस्कृति को जीवन धारा से जोड़कर देखने वाले रचनाकार हैं। उनके निबंधों में जीवन की औपचारिक समस्याओं की अपेक्षा जीवन मूल्यों की सहजता का विस्तार है।

कुबेरनाथ राय ने भारतीय संस्करों एवं उत्तर भारतीय परिवेश में रच-बसकर जिस जीवन दर्शन को अपने निबंधों में प्रस्तुत किया उसमें एक आत्मीयता पूर्ण आकर्षण है। उनके जीवन दर्शन में आत्मीयता की लोकवादी संवेदना और बहुपठित ज्ञान का विलक्षण संगम है। अतीत को निचोड़ कर वर्तमान को एक नई पहचान देने वाले अद्भुत रचनाकार है। इसलिए उनके निबंधों में मनुष्य का बिंब सर्वोपरि है1 यह वह भारतीय मनुष्य का बिंब है जो संघर्ष और पुरूषार्थ में विश्वास, सांस्कृतिक परम्परा में आस्था और लोक जीवन के जागरण में श्रद्धा रखता है।

व्यक्ति की आंतरिक आस्था, सौंदर्य दृष्टि और शाश्वत मूल्यों की तलाश कुबेरनाथ राय के जीवन दर्शन की विशिष्ट पहचान बन गई है। उनके मत से जीवन में परम्परा को लोक विश्वास से शक्ति मिलती है।

लोक विश्वास को मानवीय आस्था से गति मिलती है और मानवीय आस्था को सांस्कृतिक वृत्त अपेक्षित ठहराव देता है। यही जीवन दर्शन उनके निबंधों में मनुष्य की संभावनाओं को एक सुनिश्चित आकार देता है। लेखक ने प्राचीन और शिव तथा सुंदर को विलक्षण- रूप से आधुनिकता के साथ जोड़ दिया है। यही उनका विशिष्ट जीवन दर्शन है। उनके लेखन में ग्राम जीवन की सूखती धारा को फिर से प्रवहमान बनाने का संकल्प है।

उनका प्रथम निबंध संग्रह 'प्रिया नीलकंठी' में निबंधों की परिकल्पना ही अनूठी और भावपूर्ण है, जो समग्रता में लालित्य लिये हुए है। शिव तो नीलकंठ नाम से विख्यात है ही। लेखक का कहना है कि यह विषपान ऐसा है कि स्वयं श्यामकंठ हो जाते हैं और धरती को रसमय बना देते हैं। फिर भी लेखक का जीवन दर्शन स्वस्थ है। उनके निबंधों में आँचलिकता का बोध व्याप्त है। उसके साथ ही सांस्कृतिक चेतनता विद्यमान है।

भारतीय जनजीवन की परम्परा में जो परिवर्तन आज हो रहा है, उसकी समग्र अनुभूति प्राप्त करने की चेष्टा ही 'प्रिया नीलकंठी' के निबंधों की सृजन प्रेरणा है। बौद्धिकता के साथ-साथ ग्रामांचलों का रस सूखता जा रहा है लेकिन ग्राम की संस्कृति हेय और उपेक्षणीय क्यों मानी जा रही है? आधुनिक यंत्र बोध से उत्पन्न निर्वासन के भावों को जीवन की स्वीकारात्मक स्थिति तक ले जाने का प्रयास 'नील कंठी' में है।

वास्तव में कुबेरनाथ राय के ललित निबंधों में भारतीय लोक संस्कृति की पीठिका पर मनुष्य की शाश्वत हितचिंता का स्वर सर्वाधिक प्रबल रहा है। यह बात 'प्रिया नीलकंठी' 1969 से लेकर 'कामधेनु' 1990 तक, उनके सभी तेरह निबंध संग्रहों के संदर्भ में कही जा सकती है। इन सभी संग्रहों में एक विशिष्ट समानता है और वह है भारतीय संस्कृति और लोक जीवन के मूल्यों में लेखक की अथाह श्रृद्धा और आस्था।

कुबेरनाथ राय का जीवन-दर्शन भारत के सांस्कृतिक आधुनिकीकरण के पक्ष में तर्क देता है।

जातीय संस्कृति, दर्शन, राष्ट्रीयता,लोक रंग और बौद्विक रस बोध के महीन तंतुओं से बुने उनके निबंध निरंतर मानवीय मूल्यों की खोज में प्रयास रत दिखाई देते हैं।

कुबेरनाथ राय का निबंध संग्रह 'प्रिया नीलकंठी' में मानवतावादी चिंतन

कुबेरनाथ जी के निबंधों में मानवीय पक्ष का सहज उद्घाटन हुआ है। भारतीय आम जनता के खोए हुए सम्मान को मानो लौटा लाने के लिए लेखक प्रतिबद्ध है। उनके मत से संस्कृति का मूलाधार गाँव है यही से संस्कृति का पुनः सृजन और पुनर्जारण संभव है। मानवीयता के प्रति उनकी यह प्रतिबद्वता पहले निबंध से ही दिखाई देती है। उनके निबंधों में भारतीय मानव का चिन्ह है। उनके निबंधों में दर्शाया गया है कि यह है भारत और यह है उसका दर्शन।

लेखक समाजवाद के समर्थक होते हुए भी उसे परब्रह्म की तरह असीम नहीं मानते। उनकी दृष्टि में जीवन का आदि है 'काम' अर्थात् प्रकृति और अंत है 'मोक्ष' अर्थात् ईश्वर। बीच में है अर्थ और धर्म ।

लेखक की चिंता और चिंतन का फलक व्यापक और बहुमुखी है। उन्होंने मानव चिंतन को एक नया परिमाण दिया है- अपने मूल से जुड़ने का अपनी भूमी को पहचानने का भारतीय अस्मिता की पहचान और रक्षा के लिए उन्होंने आठ बुनियादी सूत्रों की स्थापना की थी- वे सूत्र हैं- 1) सर्व भूत आत्मवाद 2) परम तत्व की स्थापना 3) अंत्य अनेकांत है 4) रचनात्मक सामंजस्य 5) ऋत का स्वीकार 6) शाश्वत की महत्ता 7) तार्किक ज्ञान और प्रतिम ज्ञान को स्वीकृति 8) मनुष्य, प्रकृति ईश्वर का मित्रिक ।

श्री राय ने जीवन और साहित्य के माध्यम से एक नया मानव देखने का प्रयत्न किया है। उनकी चिंता और चिंतन का मुख्य विषय है मनुष्य और उसके सपने, उसका भूत, वर्तमान और भविष्य वे निरंतर इसी चिंता में रहे कि मनुष्य एक आत्म सम्मानी रूप में प्रतिष्ठित हो। उनकी मानवीय भूमिका यों भूमि, भाषा, रंग, जाति की सीमाओं को पार कर निकल जाती है। वे निरंतर अखंड मनुष्य की तलाश में रहते हैं। वे मानव को सभ्य मान साहित्य के आँगन में स्थापित करते रहते हैं।

कुबेरनाथ राय की भाषा शैली में लालित्य

कुबेरनाथ राय ललित निबंध धारा के विशिष्ट हस्ताक्षर हैं। वैचारिकता के साथ-साथ उन्होंने शिल्प का स्तर भी सुस्थापित किया है। वे काव्यमयी ललित भाषा शैली के सफल प्रयोक्ता एवं निर्माता हैं। व्यक्ति और समाज की सृजन शीलता भाषा में ही अभिव्यक्त हो पाती है। इसलिए कुबेरनाथ राय कहते हैं, मुझे धातु जैसी ठनठनपाल टंकसाली भाषा नहीं चाहिए। मुझे तो कुछ और चाहिए कुछ अधिक प्राण संम्पन्न कुछ अधिक सजीव चाहिए। नदी जैसी निर्मल, हवा जैसी सजग, उड़ते डैनों जैसी साहसी मुझे चाहिए। मुझे चाहिए गंगा, जमुना, सरस्वती जैसी त्रिगुणात्मिका भाषा-------।

कुबेरनाथ राय भाषा को कथ्यानुसारी बनाने के लिए अपना स्वत्व समर्पित कर भाषा शिलाओं को जगाने वाले रचनाकार हैं। लेखक ने लोक और शास्त्र तथा विदेशी भाषाओं से संदर्भानुसार शब्दों का ही चयन नहीं किया है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर नई शब्द रचना करने में भी संकोच नहीं किया है। इसी कारण आपके शब्द भण्डार में अद्‌भुत लालित्य उत्पन्न होता है।

तत्सम शब्दावली का अनायास प्रयोग उनकी विशेषता है- उदा. स्थित प्रज्ञ, नीलोत्पल, चकित नयना, मयूर पिच्छयारी, तुषाराच्छादित, सहभोक्ता विष्णु, अंगुष्ठ प्रमाण, निविशेष, चतुर्दिक इत्यादि।

बीच-बीच में जो संस्कृत वाक्य लिखे हैं उनके कारण भाषा में एक अद्‌भुत सौंदर्य एवं आकर्षण उत्पन्न कर दिया है। उनकी भाषा क्लासिक शिल्प बोध की परिचायक बनकर भाषा में लालित्य का उन्मेष भर देती है। कुबेरनाथ जी में अपनी बोली के लालित्य की सुरक्षा करने की अदम्य प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। पाठकों के प्रति आत्मीयता दर्शाते हुए उन्होंने क्षेत्रीय भाषा के शब्दों का नि:संकोच प्रयोग किया है।

कुबेरनाथ राय ने 'निषाद-बाँसुरी' संग्रह में कबूतर बाजी, पतंगबाजी, नौकायन, यहाँ तक कि चौर्य कला के क्षेत्रीय शब्दों को केन्द्र में रखकर ललित निबंधों की रचना की है। देशी शब्दों का विलक्षण लालित्य उनके निबंधों में दिखाई देता है। भाषा बहता नीर है जहाँ से बहेगा वहाँ का पानी तो अनायास ही आकर मिलेगा ही। उससे कोई बचना चाहे तो भी बच नहीं सकता लैंड, स्लाइट, इरोजिन, कनजरवेशन जैसे अंग्रेजी शब्द आ आते हैं, वैसे उर्दू शब्द भी आ जाते हैं -जैसे राज़ी, नज़र, फिज़ूल, मुताबिक, दर्जा, मजाक, जबरदस्त, इज्जत, कुनबा,

मिजाज, किस्मत, इलाका, साजिश, गनीमत, आशिकबाजी, शरारत, खूबसूरत आदि । विदेश शब्दों का स्वीकार भी कुबेरनाथ राय जी ने स्वाभाविक ढंग से किया है उसके कारण उनकी भाषा में लोकानुरंजनकारी लालित्य उत्पन्न हो गया है।

अपने रचनात्मक उद्देश्य के हेतु कुछ शब्द उन्होंने स्वयं गढ़े हैं, उनके स्वनिर्मित ये शब्द खटकते नहीं बल्कि पाठकों के मन पर ऐसे शब्द उनके सामर्थ्य का प्रमाण देते हैं और भाषा की संप्रेषणीयता को कई गुना बढ़ा देते हैं।

कुबेरनाथ राय जी ने अपने निबंधों में अपने अनुभव लोक से प्राप्त मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रचूर मात्रा में प्रयोग किया है। कुछ लोकोक्तियाँ एवं मुहावरे इस प्रकार हैं- मिट्टी पलीद होना, पानी पानी होना, वाह वाही का मुकुट सिर पर बाँधना, मन मुट्ठी में करना, नौटंकी लगाना, सरे आम नीलाम में बिकना, तुक्का मारना, चाँदी के जूते से पीटना, माध की रात अफीम है अफीम, ये सभी मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ कुबेरनाथ राय की भाषा एवं भाव का अभिन्न अंग बनकर उनकी भाषा के अधिकाधिक सजीव बनाती हैं। शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ तो भाषा के हीरे-मोती होते हैं। कुबेरनाथ राय जी की भाषा लालित्य और माधुर्य में सराबोर होकर शासकीय संपदा के साथ-साथ लोक रंग में रंगी हुई है। उसमें कथ्यानुसार विविधता एवं नूतनता है।

किसी रचनाकार की शैली उसके व्यक्तित्व का दर्पण होती है। कुबेरनाथ की शैली चुंबक है। उनकी शैली में सुरूचि संपन्न व्यक्ति के लिए रोचकता एवं लालित्य है, सहृदय के लिए अखंड रागात्मकता है, मनीषी के लिए चिंतन, मनन पूर्ण बौद्विकता और साधारण व्यक्ति के लिए उसकी समसामयिक समस्याओं की और संकेत एवं अनौपचारिक तथा हार्दिक बातचीत जैसा रस विद्यमान है। उनके कुछ निबंधों में आवेग शैली है तो कहीं कहीं आवेग, क्रुद्ध एवं लालित्यपूर्ण शैली के दर्शन होते हैं। उनकी रचनाओं में भावात्मक शैली का प्रयोग सबसे अधिक है। निबंधों में अलंकारिक शैली का लालित्य सर्वत्र है। कहीं पर उन्होंने अपनी लाक्षणिक शैली का चमत्कार भी दिखाया है। कभी-कभी अपनी व्यंग्यात्मक शैली द्वारा अपनी अभिव्यक्ति को पैना, रोचक और आकर्षक बनाया है।

सारांश यह कि कुबेरनाथ राय की भाषा शैली अत्यंत परिष्कृत एवं परिनिष्ठत है। उन्होंने विविध शैलियों का अंगीकार करके अपने ललित निबंधों को गुरूता, गंभीरता, लाक्षणिकता, अलंकारिकता, व्यंगात्मकता एवं रसात्मकता प्रदान की है। आपकी भाषा शैली लालित्य कैसा हो? इसका सुन्दर उदाहरण है।

कुबेरनाथ राय के निबंधों की विशेषता

(1) कुबेरनाथ राय के निबंधों में वैयक्तिकता को प्रधानता मिली है।
(2) कुबेरनाथ राय के निबंध विशुद्ध लालित निबंध हैं।
(3) उन्होंने अपने निबंधों में बुद्धि और भाव का सुंदर सामंजस्य स्थापित किया है।
(4) आधुनिकता और प्राचीनता का समवाय कुबेरनाथ राय के निबंधों की विशेषता है।

(5) लोक संस्कृति और लोक मानस की चित्रात्मक शैली में उनके निबंधों को अभिव्यक्ति दी है।

(6) आत्मकथा शैली में लिखे गए उनके निबंध अंग्रेजी के 'मोनोलॉग' प्रणाली पर निर्मित हुए हैं।

(7) कुबेरनाथ राय ने अपने निबंधों में जहाँ सामाजिक सांस्कृति परिवेश का चित्रण किया है, वहां राजनीतिक आर्थिक परिवेश का चित्रण भी क्रम प्राप्त होता है।

(8) कुबेरनाथ राय के निबंधों में उद्धरणों की बहुलता मिलती है, जिससे उनके बहुज्ञ व्यक्तित्व का परिचय मिलता है।

(9) उनके निबंधों में कहानी सी विशिष्टता, काव्य की सरसता, जीवनी-सी आत्मीयता, रेखाचित्र सी सजीवता तथा नाटक-सी गतिशीलता प्राप्त होती है।

कुल मिलाकर श्री कुबेरनाथ राय हिंदी के श्रेष्ठ लालित निबंधकार हैं।

कुबेरनाथ राय के निबंधों में प्रकृति चित्रण

कुबेरनाथ राय ललित निबंधकार हैं। इसलिए उनका प्रकृति के साथ भावात्मक होना स्वाभाविक है। प्रकृति उन्हें प्रेरणा देती है। मनुष्य अनंतकाल से प्रकृति से प्ररेणा और सभ्यता पाता आया है। ऋग्वेद कालीन रचनाकारों ने भी प्रकृति से प्रेरणा प्राप्त की थी। वह परम्परा आज तक है। कुबेरनाथ राय भावुक निबंधकार हैं वे एक सहृदय व्यक्ति भी हैं। इसलिए उनका प्रकृति के प्रति दृष्टिकोण विशुद्ध भावुक है।

कुबेरनाथ राय की दृष्टि से हम प्राकृतिक सौंदर्य को प्राय:शारीरिक धरातल पर ही ग्रहण करते हैं। परन्तु राय जी की दृष्टि केवल शारीरिक ही नहीं, तो यह आत्मा तक पहुँचती है। जो पाठक की आत्मातक को भी छू जाती है। राय इसे आत्मा की वस्तु मानते हैं, इसे रस बोध मानते हैं।

पतझड़- 'सनातन नीम' इस निबंध में बसंत ऋतु के सौंदर्य के दूसरे पहलू शिशिर के पतझड़ में मिलते हैं। लेखक के आँगन का नीम का पेड़ वंसत ऋतु में रूप बदलता है, यह रूप लेखक को सौंदर्य और रस बोध प्रदान करता है। नीम के पत्ते झड़ने लगते हैं फिर उनकी जगह लाल-लाल, छोटी-छोटी पत्तियाँ आती हैं, कुछ दिनों बाद फिर वह हरी-भरी हो जाती हैं।

चॉदनी रात- कुबेर नाथ राय ने वंसत की चाँदनी रात का सौंदर्य अपने 'मनियारा साँप' निबंध में किया है।

मानवीकरण- चाहे सुख हो चाहे दु:ख मनुष्य हर स्थिति में अपने को प्रकृति के निकट पाता है। भाव जब चरम अवस्था पर अभिव्यक्त होता है तो वह प्रकृति से उपादान ग्रहण करता है। प्रकृति -जीवन की हर अवस्था का चित्रण कुबेरनाथ राय ने किया है। प्रकृति में उन्होंने अलग-अलग रस ढूँढ़े हैं। प्रकृति की परत के अंदर परत हैं- सब मिल जुलकर महाबोध या महारस

उत्पन्न करते हैं। यह हिन्दुस्तान की धरती ही ऐसी है। हिन्दुस्तान का वसंत दर्शनिक है, रस पायी होते हुए भी अंदर ही अंदर बैरागी और फक्कड़ भी है- ऐसा कुबेरनाथ जी का मत है।

प्रकृति का उद्दीपन रूप - लेखक ने निबंधों में प्रकृति का उद्दीपन के रूप में चित्रण किया है।

प्रकृतिक विनाश एवं सागर की उत्ताल लहरों का वर्णन करके लेखक ने प्रकृति का रौद्र रूप का चित्रित किया है। औद्युसियस -----निबंध इसका उदाहरण है।

प्रकृति का ग्राम्य सौंदर्य - कुबेरनाथ राय ग्राम संस्कृति के कुशल चितेरे हैं। उन्होंने ग्राम संस्कृति का प्रकृति के साथ एक रिश्ता जोड़ दिया है। लेखक की दृष्टि में वसंत का समग्र चित्र, एक तरफ बौराते हुए आम, मंजरी के उपर मंडराते हुए भौंरे, कूकती हुई कोयल, आदि का वर्णन किया है।

डॉ. सक्सेना का कथन है कि आपके निबंधों में कहीं खेत खलिहानों में छिटकी हुई चैत की चाँदनी का सौंदर्य दृष्टिगोचर होता है। कई भारतीय मृगों के झुंड कोमल दूब के नवीन गुँफ और ज्वार बाजरे या गेहूँ जौ के नए खेत हरित गुँफ खींचकर खाते दिखाई देते हैं। वहीं बासमन अच्छादह सरोवर के पुंडरिक मन अथवा लंकापुरी के अशोक वन की भाँति काव्यमय गरिमा से मंडित दिखाई देता है।

प्रकृति का उपेक्षित रूप प्रकृति के उपेक्षित रूप को भी कुबेरनाथ राय ने सौंदर्य की दृष्टि से देखा है। प्रकृति कुरूप है ही नहीं, वह अत्यंत सुदंर है ऐसा लेखक का मत है। इसलिए हेमंत ऋतु में पेड़ों की पत्तियाँ पीली होकर गिरने लगती हैं तो उन्हें उसमें भी सौंदर्य दिखाई देता है। पतझड है, इसलिए वसंत है। अतः पतझड में एक सौंदर्य है संध्या समय का सूर्य धीरे-धीरे विकसित होना और धीरे-धीरे कालिमा छाना भी एक सौंदर्य ही है।

ग्रीष्म का प्रखर एवं रूद्र रूप

कुबेरनाथ राय ने ग्रीष्म के प्रखर एवं रूद्र रूप का वर्णन इस प्रकार किया है- दर्द की हरीतिया तब तक व्यर्थ रहती है जब तक ये प्राणों को शेष और व्यथा की अग्नि में तपाकर पुष्ट न कर ले। पछुवा हवा इसी रोध इसी ताप को लाती है। गेहूँ जौ की बालियाँ पकती हैं।

'आछी का पेड' आछी का पेड नामक निबंध में कुबेरनाथ राय लिखते हैं- जेठ वैशाख के महीने में आठ बज़े सुबह से शाम छह बजे तक लू बहती है। आग का दरिया आसमान से उतर कर धरती पर वलानवा की तरह बहने लगता है। वातावरण का संगीत, उदास और धू-धू हो उठता है। और कभी-कभी यह हू-हूकर लंबी रेखा में खींचा हुआ दूर तक चला जाता है।

'चंडीथान' चंडीयान नामक ललित निबंध में 'कड़ी धूप' का वर्णन और तालाब का चमचमाता हुआ पानी, उसके पास बवंडर और बवंडर के साथ अंधविश्वास की मान्यता यह भी एक सूक्ष्म अनुभूति का उदाहरण है।

निसर्ग एक अनंत संभावनाओं वाली सत्ता है नक्शे आखिर नक्शे ही हैं। नक्शे निसर्ग को बाँध नहीं सकते। उसका सगुणभाव बाँध देने में असमर्थ है।

निष्कर्षत: ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय ने प्रकृति के कोमल कठोर,शिवम सुंदरम सभी रूपों को देखा है। उनका प्रकृति वर्णन कहीं ग्राम्य संस्कृति से जुड़ा है। तो कहीं काव्य के सौंदर्य बोधसे कहीं चाँदनी रात की रूमानियत का वर्णन है तो कहीं ठोस खलिहानों के सौंदर्य का। कोमल और रौद्र ऐसे प्रकृति के दोनों रूप कुबेरनाथ राय जी ने चित्रित किए है। वही कवि की भावुकता और वैचारिकता का प्रमुख रूप है। संक्षेप में यही कह सकते हैं कि कुबेरनाथ का लालित्य विधान उनके प्रकृति-चित्रण में ही निहित है।

कुबेरनाथ राय के निबंधों में परम्परा और आधुनिकता का समन्वय

यह प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि क्या परम्परावादी आधुनिक हो सकता है? 'प्रिया नीलकठी' के प्रारंभ से अंत तक यही दृष्टि दिखाई देती है। पहली रचना 'गूलर का फूल' इसे वे अपनी 'आत्मकथा' कहते हैं। साथ ही उसे एक अरण्य-कथा भी कहते हैं। इसमें भारतीय संस्कृति के परोपकार और बलिदान की कथा बताई है।

'हेमंत की संध्या' निबंध पाठ में ललित निबंधकार ने आधुनिक युग की स्थिति पर घोर व्यंग्य किया है। साथ ही घोर निराशा व्यक्त की है। व्यक्तिवाद- अजनबीपन बढ़ रहा है। आज हर व्यक्ति अपने आपको वक्ता या नेता समझ रहा है श्रोता या समाज नहीं ।

'बहुरूपी' पाठ में लेखक ने तरह-तरह के वेश धारण करने वाले बहुरूपियों के बारे में लिखा है। गाँव में कला बनती और संस्कृति निखरती, पर अंग्रेजी शासन के बाद भ्रष्टाचार और मँहगाई के बीज पड़े। स्वतंत्रता के बाद तो स्थिति यह हुई कि काले कुत्तों ने सफेद कुत्तों को भी मात कर दिया। ग्राम संस्कृति का हास हो गया। ग्राम संस्कृति के हास से गाँव कुरूप बन गए हैं। कला की कोई कदर नहीं रही। बौद्धिकता का भावुकता के साथ-साथ संघर्ष है। प्राचीन रस धारा और सनातन उल्लास सूख कर एक निर्वात जैसी रिक्तता का निर्माण होगा। सांस्कृति हास का कारण है यांत्रिकता की बाढ संगीत, लोक गीत मंगलगीत भी नष्ट हो रहे हैं। सर्जन की सार्थकता से आज कोई ताल्लुक बचा नहीं है। कुसंस्कार और विकृतियाँ शहरीकरण से खत्म होता हो तो शुभ ही है, परन्तु ग्रामों की रागात्मक संस्कृति, गीत, नृत्य, उल्लास, भावना सब नष्ट हो रहे हैं। शहरीकरण के कारण गाँव के नाच मर जाए और उसकी जगह कुचिपुडी, भरत नाट्यम या कथक आए तो कोई बात न थी परन्तु नाच के रूप में सिनेमा के नाच आ रहे हैं। गीत भी सिनेमा के आ रहे हैं।

धर्म भी मनुष्य के लिए आवश्यक है। धर्म का रूप ही भारत के लोगों को एक सूत्र में बाँध सका है।

वर्णव्यवस्था की आलोचना कुबेरनाथ राय ने की है।

जातिगत भेदों को देखकर वे बरस पडते हैं इस देश का 60% जो सनातन, जो गरीब से गरीब है, उसको वर्ण व्यवस्था ने भूख और दारिद्रय के हाथों बेच दिया है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कुबेरनाथ राय परम्परा के समर्थक होते हुए भी रूढ़ीबद्ध नहीं हैं वे प्राचीन परम्परा और आधुनिक चेतना के सेतु रूप हैं ।

संदर्भ ग्रंथ:-

(1) प्रिया नीलकंठी - कुबेरनाथ राय

(2) कुबेरनाथ राय ओर उनका साहित्य- अमिता सिंह

(3) निषाद बाँसूरी- कुबेरनाथ राय

(4) ललित निबंधकार कुबेरनाथ राय -संपा0 डॉ. सुरेश माहेश्वरी-भावना प्रकाशन दिल्ली (1999 प्र.सं.)

(5) हिन्दी के प्रतिनिधि निबंधकार संकलन

****

५ संस्मरण/रेखा चित्र

अतीत के चलचित्र
लेखिका -महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा का परिचय

हिन्दी साहित्य जगत में जिसने अनवरत लेखन एवं साहित्य निर्मित के द्वारा अपना नाम अमर किया है ऐसी ख्याति प्राप्त एक मात्र महिला रचनाकार महादेवी वर्मा हैं। उनके समकाल में उनकी जितनी ख्याति किसी महिला विशेष को नहीं मिली है। महादेवी वर्मा को आधुनिक काल की मीराँबाई कहा जाता है। उनकी रचनाओं में जो कारूणिक भाव हैं उन्हें देख कर उन्हें पीड़ा की गायिका या करूणा की निष्कंप दीपशिखा कहा जाता है। महादेवी वर्मा मूल रूप से काव्य रचना करने वाली रचनाकार है। उनका नाम छायावादी धारा के प्रमुख चार स्तंभों में लिया जाता है। महादेवी वर्मा छायावादी धारा की लघुत्रयी के अंतर्गत आती है। महादेवी वर्मा ने कुछ काल तक छायावादी धारा में लेखन किया बाद में वे रहस्यवाद की ओर मुड़ गई। उनकी विशेषता यह है कि अनेक काव्य संग्रह लिखने के बाद महादेवी वर्मा जी ने सुन्दर गद्य रचनाएँ भी की हैं। संस्मरण ओर रेखाचित्र लेखन में तो वे सिद्वहस्त हैं। उनकी इस संदर्भ में निम्नलिखित रचनाएँ हैं-

1) श्रृंखला की कडियॉ।
2) अतीत के चलचित्र।
3) स्मृति की रेखाएँ।
4) पथ के साथी।

इन रचनाओं में संस्मरण और रेखाचित्र भी है। विशेष रूप से 'अतीत के चलचित्र' और 'स्मृति की रेखाएँ' शीर्षक से लिखी रचनाएँ तो शब्द चित्र भी हैं, रेखाचित्र भी हैं, संस्मरण भी हैं और कहानियाँ भी हैं। वास्तव में ये संस्मरण हैं।

शब्द चित्र का अर्थ है किसी का वर्णन करते हुए जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है वे शब्द ही स्वयं उस वस्तु विशेष का रूप या चित्र उपस्थित करते हैं। रचनाकार की शब्द प्रभुता का प्रत्यय उसके द्वारा मिलता है।

रेखाचित्र का अर्थ है किसी व्यक्ति विशेष का शब्दों के माध्यम से ऐसा चित्र प्रस्तुत करना जो व्यक्ति के आंतरिक और बाह्य विशेषताओं का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंकन करता है। कोई भी रेखाचित्र फोटो से भी अधिक व्यंजक होता है। सूक्ष्म रेखाएँ चित्र की बारिकियों को स्पष्ट करती हैं वैसे ही रेखाचित्र में स्वाभाविक गुण-विशेषों का सूक्ष्मता से अंकन होता है और संस्मरण भी क्या है? संस्मरण का संबंध स्मरण से है अर्थात् स्मृतियाँ, यादें। इन स्मृतियों के अंतर्गत अच्छी बुरी, दु:ख देने वाली, पुलकित कर देने वाली यादें होती हैं। यादें अतीत के

साथ जुड़ी होती हैं, यादों में वर्णित घटना प्रसंग घट चुके होते हैं, इसके अंतर्गत पुराने दिनों की यादों को ताजा किया जाता है। किसी कारणवश ये यादें उभरकर आती हैं, रचनाकार का मन भूतकाल में चला जाता है यादों के साथ किसी के जीवन की कथा भी होती है।

महादेवी जी ने भी अतीत की कई घडियों को और व्यक्तियों को याद किया है। उनके मन में कुछ भूले-बिसरे चित्र याद आ जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की विशेषता अलग ओर प्रत्येक घटना का संदर्भ अलग लेखिका ने स्मृतियों की कई कडियों को जोड़ने का प्रयास किया है। ये सारे प्रसंग, सारी घटनाएँ लेखिका के मन में गहरे जा कर बैठी हुई है, लेखिका स्वयं अच्छी चित्रकार हैं तो उन्होंने कई घटनाएँ, मनुष्य एवं प्राणियों के चित्र बहुत ही अद्‌भुत सफलता के साथ चित्रित किए हैं।

एक महिला रचनाकार होने के नाते उन्होंने नारी चरित्रों को बहुत नजदीक से देखा है। पुरुषों के द्वारा पीड़ित नारी के प्रति आवाज उठाई है। उनके रेखा चित्रों में चित्रित नारी समाज द्वारा पिसी गई नारी है। नारी के प्रति उनकी करूणा विगलित रूप में बह उठी है। 'अतीत के चलचित्र' में बिंदा, बिट्टो, सबिया, भाभी ये रेखाचित्र नारी जाति के प्रति समाज के निर्दयता के, एवं शोषण के रूप को चित्रिंत करते हैं।

उनके गद्य लेखन की अन्य विशेषताएँ हैं, सजीवता, मूर्तिमानता, चित्रोपमता मार्मिकता एवं प्रभावोत्पदकता वास्तव में महादेवी की शैली काव्यमय है और उन्होंने अपनी इसी शैली के द्वारा नारी की पीड़ा को गंभीरता से साकार किया है। महोदवी जी ने नारी पात्र एवं अन्य पीड़ित पात्रों को ऐसी खूबी के साथ चित्रत किया है कि वे हमेशा के लिए स्मृति में अमर हो गए हैं।

'अतीत के चलचित्र ' में क्या है ?

महादेवी जी ने अपने जीवन में अतीत में घटित घटनाओं को इसके अंतर्गत सँजोया है। यह बिलकुल स्वाभाविक ही है बाल्यकाल से हम जैसे-जैसे प्रौढ़ता की ओर बढ़ते हैं वैसे-वैसे जीवन में कुछ प्रसंग, कुछ व्यक्ति आते-जाते रहते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि ये घटनाएँ व्यक्ति होने के नाते हमारे अवचेतन में समा जाती है। वे मिटती नहीं आगे चलकर कोई ना कोई निमित्त कारण आदि की वजह से अतीत के प्रसंग, घटनाएँ व्यक्ति विशेष मन में साकार हो जाते हैं, उन्हीं की यादें या संस्मरण कहा जाता है।

वैसे तो हर मनुष्य के पास यादें होती हैं, वक्त पाकर यादों को क्रम भी शुरू होता है, साधारण व्यक्ति भी कई बार बैठे-बैठे लोगों के सामने यादों को दोहराता है परन्तु उसकी यादों में स्मृतियों के कुछ अंशों का कथन होता है। साहित्यकार जिन संस्मरणों को लिखता है उन्हें एक क्रमबद्ध तरीके से चित्रित करता है। अतीत की धुँधली यादों को स्मृतिवान बनाकर ताजा रूप में प्रस्तुत किया जाता है। अपने कथन के साथ आज की एवं भूतकाल की स्थितियों के साथ स्मृतियों का सिलसिला लिखा जाता है। संस्मरणों में कथानक जैसा आनंद भी होता है।

इस दृष्टि से कथन किये हुए और लिखे हुए ऐसे संस्मरण का लिखित एवं मौखिक रूप भी दिखाई देता है।

'अतीत के चलचित्र' में चित्रित चरित्र

इसके अंतर्गत महादेवी वर्मा ने रामा, भाभी, बिंदा सबिया, बिट्टो, बालिका वधू, घीसा, अंधा अलोपी, रधिया, लछमा आदि ग्यारह व्यक्तियों के चित्र प्रस्तुत किए हैं। ये सारे व्यक्ति लेखिका के जीवन में किसी न किसी समय में आ गए हैं, हर एक की अपनी व्यथा, अपना दु:ख और दर्द है, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का दु:ख और उसके संदर्भ अलग -अलग हैं। पुरुष आत्याचारों से पीडित नारियों के साथ-साथ भाग्य द्वारा छले हुए और समाज व्यवस्था के शोषण के शिकार हुए पुरुष पात्रों का भी इन संस्मरणों एवं रेखाचित्रों में अंतर्भाव है। 'अतीत के चलचित्र' में संग्रहित, प्रथम रेखाचित्र रामा है। रामा की माँ की मृत्यु बचपन में ही हो गई थी, विमाता के कठोर व्यवहार से त्रस्त होकर जैसे-वैसे वह महादेवी जी की माँ के पास शरण माँगने आया था। उन्होंने उसे अपने घर पर नौकर रख लिया और महादेवी तथा उनके भाई बहनों की देखभाल करने का काम उस पर सौंपा। इस प्रकार रामा लेखिका के बचपन में ही उनके सम्पर्क में आया था। वह कई वर्षों तक उनके घर रहा । वह जैसे लेखिका के बाल जगत से एकरूप हो गया था।

रामा की बाह्य रूप रेखा में लेखिका ने लिखा था कि उसे कुरूप तो नहीं कहा जा सकता परन्तु आकर्षक भी नहीं। वर्ण उसका काला था, हाथों की ऊँगलियाँ टेढ़ी-मेढ़ी थीं आँखें छोटी थीं जिनमें से स्नेह बरसता था आदि। परन्तु लेखिका एवं उसके भाई बहनों को रामा बहुत सुन्दर दिखाई देता था। वे सब उसे बहुत प्यार किया करते थे।

वह सदा मिर्जई और घुटनों तक ऊँची धोती पहनता था। उसकी कोठरी में बुदेलखंडी जूते, अस्तर लगा लंबा कुर्ता, गाठदार लाठी थी। परन्तु महादेवी एवं उनके भाई बहनों ने उसे एक ही बार ये कपड़े पहने हुए देखा था गाँव जाने के समय और विवाह करके पत्नी के साथ लौटा था तब। रामा प्रात: नित्य उठकर पूजाघर एवं पूजा के बर्तनों को साफ कर देता। बच्चों को जगाता, उनके हाथ मुँह धोता, उनको पंक्ति में बिठाकर नाश्ता कराता। उन्हें नहलाता कपड़े पहनाता, कहानियाँ सुनाता। वह बच्चों को अच्छी शिक्षा एवं उपदेश दिया करता, वह बच्चों के आग्रह पर गीत सुनाता था। रामा निरक्षर था परन्तु निष्कपट एवं सरल स्वभाव का था। वह बच्चों का सर्वस्व था। बच्चे उसके साथ सुरक्षित एवं निर्भय रूप में रहते । वह अद्‌भुत सेवा परायण था। बच्चों की सेवा करते-करते एक दिन वह स्वयं ही बीमार पड़ा। महादेवी की माँ ने उसकी देखभाल की, वह बच गया।

जब महादेवी की माँ के बार-बार के आग्रह पर विवाह करके आया तो उसकी पत्नी उस के साथ आई। बाद में दोनों में पारिवारिक कलह होने लगा। उसकी पत्नी अपने मायके चली गई वह उसे लाने गाँव गया तो फिर लौटकर नहीं आया। महादेवी की स्मृति में रामा आज भी वैसा ही है।

दूसरा रेखाचित्र विधवा भाभी का है। इस भाभी से लेखिका अपने बचपन में मिली थीं । यह विधवा मारवाडिन भाभी गोल और छोटे मुखवाली थी, उसका ललाट चौडा था। वह घर के काम दिनभर किया करती थी। वह दुर्बल शरीर की युवती थी। उसके हाथों और पाँवों में धूल लगी रहती ।

उस विधवा के घर उसका बूढ़ा ससुर था वह कपड़े और बर्तनों का व्यवसाय किया करता था। दूकान के पीछे की ओर रहने का कमरा था। वह विधवा वृद्ध सेठ के इकलौते पुत्र की वधू थी, यौवन काल में विधवा हो गई थी। सेठ की दृष्टि में वह कुल की विनाशिनी थी। उसकी एक दूर की बुआ थी और कोई नहीं था, वह किसी के यहाँ नहीं जा सकती थी। दिन भर वह काम करते हुए कमरे में बंद रहती। महादेवी एक दिन उनके द्वार के सामने फिसलकर गिर गई तब से भाभी के साथ उसकी दोस्ती हुई। महादेवी उसके घर आती-जाती थी, सेठ को इस पर कोई आपत्ति न थी। वृद्ध सेठ दिन में एक ही बार भोजन करता तो भाभी को भी एक ही बार भोजन मिलता परिणामस्वरूप वह दुबली बन गई थी। घर का सारा काम वह अकेली किया करती थी। ना अच्छा खाने के लिए न पहनने के लिए। काली या सफेद ओढ़नी और लहंगा वह पहना करती थी। उसकी ननद जब तब आकर उस पर अत्याचार करती रहती। उसे रंगीन कपड़ों के प्रति बड़ा आकर्षण था। एक दिन खेल-खेल में महादेवी ने एक बार उसके सिर पर फुलों वाली रंगीन ओढनी ओढ़ा दी वह खुशी से हँसने लगी। उसके ससुर ने यह देखा और क्रोधित हुए, ननद ने इतना मारा कि वह बेहोश हो गई। इस घटना का प्रभाव महादेवी पर गहरा पड़ा ।

कई वर्षों के बाद महादेवी को पता चला कि उसकी विधवा भाभी का ससुर मर चुका है लेखिका अब केवल भाभी के जीवन के बारे में सोचती है कि उसका क्या हो गया होगा?

'बिट्टो' एक ऐसा रेखाचित्र है जो बाल विधवा है। पैंतीस वर्ष तक विधवा बनकर रहने के बाद घर के लोगों ने एक वृद्व व्यक्ति के साथ उसका फिर से विवाह करा दिया और उसे फिर विधवा बनना पड़ा । उसकी दशा ऐसी थी न मायके जा सकती थी न ससुराल। उसके दूसरे पति के बेटों ने पिता की सारी संपत्ति को हथियाकर 'बिट्टो' को घर से बाहर निकाल दिया। जब लेखिका ने उसे देखा तो उसमें कोई उमंग, कोई जीवन की आशा बाकी न थी । बिट्टो ने बाद में लेखिका को कई भागों में अपनी करूण कहानी कही। 'बिट्टो' बाल विधवा थी, वह अपने माता-पिता के पास रहती थी। माता-पिता की मृत्यु के बाद उसका जीवन दु:खमय बना। उसकी भाभियाँ कटु वचन बोलती थीं और घर का सारा काम काज बिट्टो के कंधे पर आ गया जब बिट्टो को बीमारी हुई तो उसे ससुराल भेजने का प्रयास हुआ जब वह प्रयास असफल हुआ तो उसका विवाह एक बूढ़े के साथ किया गया, जब वह भी नहीं रहा तो बिट्टो फिर आश्रयहीन होगी- लेखिका उसकी करूण कथा में डूबकर सोचती है कि बिट्टो को निरूपाय एवं विवश होकर फिर तीसरे विवाह हेतु फिर किसी वृद्ध की शरण में जाना पड़े- संभव है।

बालिका वधू - यह एक ऐसी कथा है जिसमें सोलह वर्षीय विधवा युवती, किसी के द्वारा छली गई और माँ बन गई। उसके दादा ने गर्भपात करने का सुझाव दिया पर वह न मानी, उसने जब बालक को जन्म दिया तो उसे किसी अनाथालय में रखने का आग्रह दादा और बुआ ने

किया परन्तु वह किसी भी हालत में उसे छोड़ने के लिए तैयार न थी। वृद्व एक दिन महादेवी से मिलने आए, उन्हें अपने घर ले गये तब महादेवी को सारी स्थिति का ज्ञान हुआ।

महादेवी ने उस छोटे से बालक को देखा, जिसके कारण उसकी माँ को कलंकित कहा गया, उस बालक के जीवन की कोई कामना नहीं करता था सब चाहते थे यह शिशु स्वयं मर जाए।

लेखिका ने बालिका वधू को देखा तो उनके मन में स्त्री की असहायता और पुरुष का उसे बार-बार दंड देना आदि विचार आए, उनके मन में विद्रोह भर गया ।

वह दीन-हीन बालिका महादेवी से प्रार्थना करने लगी कि महादेवी की छत्रछाया में कोई भी काम करके वह बालक को बड़ा करना चाहती है। लेखिका ने उसे स्वीकृति दी, उन्हें घर ले आई इस प्रकार 27 वर्षीय महादेवी वर्मा 16 वर्ष की पुत्री और 22 दिन के नाती की नानी बनी। बाद में उनके कारण महादेवी जी का जीवन आनंद से भर उठा ।

घीसा - एक अबोध, सरल, कर्तव्य निष्ठ बालक की कहानी है। लेखिका इलाहाबाद के निकट गंगा पार बच्चों को पढ़ाने के लिए जाती है। वहाँ के देहात, वहाँ के घर, वहाँ पानी लाने के लिए जाने वाली स्त्रियों से वह परिचित है।

महादेवी की पाठशाला पीपल के नीचे लगने लगी वहाँ गाँव के कई गरीब बच्चे आते थे उनमें एक निराला बालक घीसा था। घीसा के माँ के जीवन की एक कहानी है। वह विधवा है, दूसरों का काम करके परिवार चलाती है, महादेवी से वह अनुरोध करती है कि घीसा को भी पाठशाला में बैठने दें।

लेखिका ने जान लिया यह बच्चा सब बच्चों में उपेक्षित है और उसकी मॉ सब स्त्रियों में उपेक्षित है। घीसा मन लगाकर पढ़ता था, गुरू के रूप में महादेवी का हर काम करता था। पीपल के नीचे की जगह लिप-पुतकर साफ रखता था। वह अपने कुत्ते के पिल्ले से बहुत प्यार करता था। मानवता की साकार प्रतिमा के रूप में लेखिका उसे देखती थी।

महादेवी को स्वास्थ्य के कारण अपने शहर जाना पड़ा जाने के पहले घीस ने अपनी एक मात्र कमीज के बदले एक किसान के बेटे से एक तरबूज लिया वह गुरू दक्षिणा के रूप में महादेवी को दिया।

कई दिनों के उपरांत महादेवी को पता चला कि घीसा इस दुनिया में नहीं है तो वह शोक और करूणा में डूब गई।

बिंदा- सौतेली माँ के उत्पीड़न से पीड़ित चरित्र है बिंदा । लेखिका ने बिंदा के जीवन को नजदीक से देखा था। लेखिका उसके जीवन को देखकर भय और विस्मय का अनुभव करती थी। वह उनकी बालसखी थी। जब उसके घर नयी माँ आई तो उसके जीवन में भय और

अत्याचार ऐसा छा गया कि वह जीवन ही मुरझा गया। काम करने के बावजूद उसकी सौतेली माँ दिन-दिन भर उसे तपती धूप में घंटो खड़ा करती थी, खंभे से दिन भर बाँधे रखती थी। खाना नहीं देती थी। बिना अपराध के लाछंन लगा देती थी । तेल के अभाव में उसके बाल रूखे हो गए थे। एक दिन सौतेली माँ का बाल खाने में निकल आया परन्तु उसकी माँ ने बिंदा के सारे बाल कैंची से काटे, अंत में बिंदा को चेचक निकल आए और बिंदा बिना दवा पानी के मर गई । लेखिका ने बिंदा की बहुत ही करूण स्मृतियाँ लिखीं हैं।

सबिया - त्याग एवं सहनशीलता की प्रतिमूर्ति के रूप में सबिया का चित्रण हुआ है। सबिया का मूल नाम सावित्री है पर माँ बाप के लाड-प्यार भरे पुकार से वह अपभ्रंश होकर सबिया बना।

सबिया पेशे से मेहतरानी थी। वह प्रसूत हो गई थी, इसी काल में उसका पति किसी दूसरे पुरुष की ब्याहता को लेकर भाग था, इस घटना के कारण सबिया बीमार पड़ी थी, जहाँ वह काम करती थी वहाँ नई मेहतरानी आ गई थी और उसे कोई काम न था। परिवार को पालने के लिए नौकरी आवश्यक थी, तब वह अपने छोटे से बालक को लेकर महादेवी के पास काम माँगने आई थी। लेखिका ने उसे अपनी यहाँ झाडू लगाने का एवं साफ सफाई का काम दिया ।

सबिया काली साँवली, दुबली,पतली,अशिक्षिता, ग्रामीण स्त्री थी। उसके व्यक्तित्व से उसकी निर्धनता का पता चलता था। उसकी आँखें चकित-सी लगती थीं।

लेखिका ने सबिया का सफाई का काम देखा तो वह चकित रह गई। सुबह आते ही नीम के पेड़ के नीचे धरती पर अपने नवजात शिशु को, मैले कपड़े पर लिटाकर वह बचिया को उसकी देख-रेख का भार सौंप जाती और झाडू लेकर अपने काम में लग जाती है। वह सारा कपाउंड साफ करती। दस बजे नहाने चली जाती। माँजकर चमकने वाली थाली लेकर लेखिका के वहाँ खाना लेने आती। वह घर में अपनी अंधी सास को छोड़कर कभी खाना न खाती थी, घर में थाल भरकर ले जाया करती थी। वह अत्यंत विनम्र थी।

उसका पति मैकू, दुर्व्यसनी अनैतिक और कामचोर व्यक्ति है परन्तु सबिया का उसके प्रति स्नेह है। मैकू जिसकी ब्याहता को लेकर भागा था उसने सबिया के सामने यह प्रस्ताव रखा कि वह उसकी बहू बन जाय परन्तु सबिया ने स्पष्ट इंकार किया ।

बाद में, कालांतर में उसका पति गेंदा के साथ वापस आया और घर पर रहने लगा, लेखिका ने सबिया को सिल्क की नीली साड़ी दी थी उसे वह गेंदा के लिए माँगकर ले गया यह कहते हुए कि सबिया काली है उस पर साडी अच्छी नहीं लगेगी इतने अपमान के बाद सबिया ने साड़ी दी, स्वयं अपने हाथों सौत को मनाकर वह घर ले आई। मन में दु:खी थी परन्तु उसकी सहन शक्ति अपार थी। गेंदा और मैकू के भरण-पोषण की जिम्मेदारी उसने अपने ऊपर ले ली।

चोरी के अपराध में पकड़े गए पति को वह छुड़ाकर ले आई। मैकू के ब्याहता को भगाने के अपराध को क्षमा करने के लिए बिरादरी को भोज देने का दंड सबिया ने सहर्ष स्वीकार किया। उसने इसके लिए लेखिका से अग्रिम वेतन पचास रुपये माँगा। सबिया निम्न वर्ग की ऐसी नारी है जिसके सामने कुलीन घरों की स्त्रियाँ भी फीकी पड जाएँ। वह पौरणिक सती नारी सावित्री से किसी मूल्य में कम नहीं है।

वास्तव में सबिया एक ऐसी महान सती साध्वी है, जिसके स्पर्श से पाप भी पुण्य बन जाता है।

'अभागी स्त्री' - यह रेखाचित्र एक ऐसी स्त्री का रेखाचित्र है जो पतिता नारी की पुत्री है परन्तु उसने अपने चरित्र द्वारा यह सिद्व कर दिया है कि वह एक महान पतिपरायणा स्त्री है। उसके मन में अगाध पति भक्ति भरी है। अपने पवित्र प्रेम के कारण समाज से विद्रोह करके उसने जिस युवक के साथ विवाह किया था उसके लिए उसे समाज से दूषण सहने पडे। बाद में वह एक असाध्य बीमारी से पीडित हुआ तब एक-एक चीज बिक गई, उदर निर्वाह का कोई साधन न रहा। उसके हाथों में एक सोने का छल्ला था, वह पति के प्रेम की निशानी थी, उसे वह बेचना नहीं चाहती थी। उसे बेचकर भी कितने दिनों तक चल सकता है- यह सोचकर वह लेखिका के पास काम माँगने आयी थी ।

लेखिका ने सोचा था इसे यहाँ रखने से समाज में कौन-कौन से प्रश्न निर्माण होंगे? इसलिए जिसका कुछ उपयोग नहीं ऐसा कुछ लेखिका उसे लिखने के लिए देती थी, लेखिका उसके बदले उसे पैसे देती थी। परन्तु शायद लेखिका के इस अभिनय को उसने जान लिया था, धीरे-धीरे उसका आना बंद हुआ। बाद में पता चला वह दिन रात सेवा करती थी परन्तु उसका पति नहीं बचा।

उसके पति के माता-पिता अर्थात् उसके सास ससुर वहाँ आए परन्तु किसी ने भी इसकी ओर देखा नहीं। उसने अपने सार-ससुर से बिनती की, कि उनकी सेवा करते हुए वह उनके यहाँ नौकर की तरह रहेगी,वे उसे अपने साथ ले जाएँ परन्तु उसके ससुर कटु बचन बोलकर चले गए। बाद में लेखिका को उसके बारे में कुछ पता न चला, किसी ने कहा कि वह फिर माँ के पास गई है किसी ने कहा विधवा आश्रम गई है। एक दिन लेखिका के पास उसका पत्र आया उसमें लिखा था वह सिलाई-बुनाई का काम करके पेट भर रही है- उस पर लेखिका अपने से ही प्रश्न पूछती है क्या तुझे आज भी आभिजात्य का गर्व है ? क्या तुझे आज भी समाज द्वारा मिले भलाई-बुराई के प्रमाण-पत्रों पर विश्वास है?

अलोपी- अलोपी अंधा था। वह 23 वर्ष का युवक था । वह महादेवी के यहाँ सब्जी लाने का काम करता था। वह अपने फुफेर भाई रघू का सहारा लेकर रोज सब्जियाँ लाता, महादेवी के घर में और छात्रवास में दे जाता। वह अंधा था, निर्धन भी था, फटे पुराने, मैले वस्त्र पहनता था, वह लाठी के सहारे चलता था।

वह अंधा था लेकिन कर्तव्य परायण था पिता की मृत्यु के बाद उसकी माँ सब्जी बेचने लगी तो उसने स्वयं सब्जी बेचने का निर्णय किया । महादेवी के पास आकर वहाँ सब्जियाँ देने का काम वह करने लगा। वह स्पर्श मात्र से सब्जी का वजन बताता था । वह अथक परिश्रमी था। कैसे भी मौसम में वह अपना काम करता ही रहता था। वह दूसरों पर अवलंबित होकर रहना नहीं चाहता था।

एक दिन असामयिक छिड़े हुए दंगे में अपने प्राणों को जोखिम में डालकर वह लेखिका के घर सब्जी पहुँचाने आ गया । और माँ के लिए फिर वह वापस उसी प्रकार से जोखिम उठाकर चला गया।

अलोपी के हृदय में दयालुता व कोमलता है। वह बच्चों से बहुत प्यार करता है।

उसके मन में महादेवी के प्रति अपार ममत्व है। वह यह जान लेना चाहता था कि लेखिका को कौन सी तरिकारियाँ अच्छी लगती है। वह वही तरकारियाँ ले आता था। एक बार महादेवी बीमार पड़ गई तो वह व्यग्र हो उठा, अपने साथ वह अलोपी देवी की विभूति लेकर आया, उसे पक्का विश्वास था कि इसे माथे पर लगाने से महादेवी पूर्णत: स्वस्थ हो जाएंगी ।

अलोपी के जीवन में एक स्त्री भी आई, उसने उस पर इतना विश्वास कर लिया कि माँ के मना करने के बावजूद उसने उससे विवाह किया, परन्तु उसका गड़ा धन और अर्जित संपत्ति लेकर वह भाग गई उसने अलोपी के साथ विश्वास घात किया। लोगों ने बहुत कहा कि पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करें, परन्तु उसने ऐसा न किया, अखिर वह उसकी ब्याहता पत्नी है-ऐसा उसका कहना था।

अलोपी अपना विश्वासघात सह न-पाया, उसका तन-मन टूट गया वह इस संसार से चला गया।

संक्षेप में अलोपी, कर्तव्य निष्ठ, सरल ह्दय उदार, कोमल, भावुक व्यक्ति था।

'बदलू' लेखिका के नित्य के आने-जाने के मार्ग पर 'बदलू' एवं रधिया का परिवार रहता था। यह कुम्हार दंपति थे। निर्धन और विपन्न- रधिया के आठ बच्चे हुए थे, जिनमें से पाँच जीवित थे। उनके भरण-पोषण के लिए वह चक्र पर मिट्टी के बर्तन बनाया करता था और रधिया पास के खेत में मजदूरी करती थी। कुछ काल के उपरांत बदलू ने महादेवी जी की प्रेरणा से देवी -देवताओं के चित्र एवं मूर्तियाँ बनाना शुरू किया और उसे अच्छी कमाई होने लगी तब कुछ दिनों बाद रधिया दुनिया से चल बसी। बदलू उपना घर परिवार लेकर अपने ममेरे भाई के साथ फैजाबाद चला गया। फिर भी हर दिवाली पर वह महादेवी जी के पास कोई न कोई मूर्ति लेकर आता था।

बदलू दुबला-पतला इंसान था। इसके गाल पिचके थे, गरीबी की कारण वह अकाल में ही बूढ़ा दिखता था। उसे अपने काम के आगे संसार के सुख-दु:ख की कोई परवाह न थी।

बच्चे पैदा करना और घड़े बनाना यही उसके दो काम थे। वह संकोची और मितभाषी था। उसकी पत्नी रधिया उसे संसार का श्रेष्ठ कलाकार मानती थी। रधिया की मृत्यु के बाद ही उसे जीवन का कड़ुवा यथार्थ मालूम हुआ। रधिया उसकी अनन्य सहचरी थी।

लछमा- यह एक पर्वतीय युवती है। वह निर्धन माँ की एक मात्र बेटी थी। उसका विवाह एक सम्पन्न परिवार में परन्तु एक अर्ध विक्षिप्त व्यक्ति से हुआ था। लछमा उससे अपने बालक के समान प्रेम करती थी। लछमा चतुर और कुशल युवती थी। उसके सास-ससुर इसी कारण उससे प्यार करते थे, परन्तु जमीन जायदाद के फेरे में पड़कर उसके देवर जेठ उसे मार डालना चाहते थे। लछमा पर अनेक अत्याचार हुए अंत में मार माकर बेहोश कर दिया और मरा जानकर एक खड्ड में फेंक आए। होश में आने पर भूखी प्यासी, गिरती-पड़ती किस प्रकार वह अपने मायके पहुंची। कष्ट सहिष्णुता की मूर्ति लछमा ने अपना पारिवारिक मान मर्यादा के कारण किसी को भी सच्चाई से अवगत नहीं कराया। लछमा के बाह्य व्यक्तित्व पर्वतीय आँचलिकता सिमटी हुई थी।

लछमा दिन भर हाथ में हँसिया लेकर भैंस के लिए घास काटती रहती या लकड़ी तोडती रहती। जब से उसका विवाह हुआ उसे दुःखों ने घेर लिया था। घर के जेठ देवर स्वार्थी थे, पति निपट मंदबुद्धि था। मरते हुए बची जब मायके आई तो सुख का एक क्षण भी नहीं मिला। घर में केवल एक भैंस थी, पूरे परिवार के भरण पोषण का भार उस पर ही था। वह परिवार वालों का पेट भर रही थी। अभी युवा थी इसलिए आसपास के लोग उसे बुरी नजर से देखा करते थे। उसे बदनाम करने का प्रयत्न भी किया गया था।

परन्तु सारे दुःख सहने के बावजूद भी वह सदैव प्रसन्न रहती। वह कभी किसी से कुछ माँगती नहीं, न ही वह किसी का मुफ्त में कुछ स्वीकार करती है। न वह किसी के सामने गिडगिडाती है ना याचना करती है। लेखिका के प्रति उसका बहुत स्नेह है परन्तु उसके बदले वह कुछ लेना पसंद नहीं करेगी। लेखिका ने उसे ममतालु सहायक कहा है।

'अतीत के चलचित्र' में वेदना, करूणा और दुःखवाद महादेवी जी को साहित्य जगत में 'पीडा की दीपशिखा' कहा हैं। उनके 'अतीत के चलचित्र ' को पढने के उपरांत यह उक्ति सत्य लगती है। गौतम बुद्व जी के करूणा और दुखवाद का प्रभाव उनके साहित्य पर परिलक्षित होता है। महादेवी की पीड़ा विशुद्व रूप में व्यष्टि केंद्रित है। परन्तु उनकी यह पीडाभिमुखता गद्य में परिवर्तित होकर व्यष्टि से हटकर समष्टि केन्द्रीत हो गई है। 'अतीत के चलचित्र' में समाज के विभिन्न वर्गों से संबद्ध व्यक्तियों के दुःख, दैन्य, निराशा, हताशा, कुंठा और संघर्ष शीलता का मार्मिक चित्रण किया है। प्रत्येक दुःखी, निर्बल,पीडित के प्रति महादेवी की करूणा बहती रहती है। उनकी दीन दशा देखकर वे विगलित हो उठती है, ,उनका ह्रदय हाहाकार कर उठता है और वह विचारों के जाल में घिर जाती है।

महादेवी के रेखाचित्रों में अधिकतर निर्धन वर्ग के पात्र ही चित्रित किए गए हैं। कुछ पात्र निर्धन तो हैं परन्तु उसके साथ निम्न वर्ग में जन्मे हैं, स्वाभाविक रूप से उसकी दीनता-हीनता और पीड़ाओं तथा शोषण का यथार्थ चित्रण इसमें हुआ है।

पुरुष पात्रों की दृष्टि से 'रामा' 'घीसा' अंधा अलोपी एवं बदलू प्रमुख हैं। स्त्री पात्रों में भाभी, बिंदा, सबिया, बिट्टो, बालिका वधू,रधिया, लछमा हैं। लेखिका ने अपने रेखाचित्रों में उन चरित्रों को वरियता प्रदान की है जिन्हें समाज हमेशा उपेक्षा एवं घृणा की दृष्टि से देखता आया है। महादेवी की इन सब के प्रति सहानुभूति हैं। महोदवी ने स्त्रियों के रेखाचित्र ऐसे खिंचे हैं- जिनके द्वारा समाज का बीभत्स एवं विकृत रूप सामने आ गया है। पुरुषों का निकम्मापन, निर्दयता, स्वार्थ क्रूरता का एक-एक अध्याय इन रेखाचित्रों के द्वारा खुलता जाता है। लेखिका करूणा के साथ-साथ एक तीव्र व्यंग की अभिव्यक्ति भी पुरुष समाज के प्रति करती है।

'अतीत के चल चित्र' में सामाजिक चित्रण

वास्तव में महादेवी ने जिन व्यक्ति चित्रों का अंकन किया है उनकी बहुत गहराई में जाकर मन का कोना-कोना वह छू आई है। आंतरिक एवं बाह्य ऐसी विशेषताओं को चित्रित करके उन्होंने एक-एक रेखाचित्र को अमर बनाया है।

परन्तु ये लोग ऐसे क्यों हैं? इसका उत्तर बहुत-बहुत बार समाज की ओर इंगित होता है समाज ही ऐसा है इसलिए ये व्यक्ति ऐसे हैं। नारी वर्ग की हीन-दीन-दयनीय दशा के लिए जितना समाज जिम्मेदार है उतना ही पुरूष वर्ग जिम्मेदार है।

दीन-दलितों, पतितों के वर्णन के साथ प्रसंगानुसार उच्च वर्ग का भी उल्लेख आता है या उच्च एवं कुलीन और अभिजात्य वर्ग के लोग कब सहिष्णुता एवं दयालुता का पाठ पढ़ेंगे?

पुरुष वर्ग भी तो इसी समाज में स्त्रियों का सहचर बनकर रहता है। वह स्त्रियों के प्रति कितना सहिष्णु है हमारी सामाजिक व्यवस्था ने पुरुषों को विशिष्ट स्थान दिया स्त्रियों को कनिष्ठ स्थान दिया, उसी के फलस्वरूप वह कामचोर, निकम्मा, गैर जिम्मेदार होकर रहता है और उसकी इन गलतियों की शिकार नारी ही बनती है।

महादेवी ने रेखाचित्रों का जो चित्रण किया है उनमें समाज के निम्नलिखित बिन्दु दिखायी देते हैं।

(1) पुरुष समाज द्वारा प्रताड़ित नारी का चित्रण ।
(2) जीवन संघर्ष में पिसे हुए व्यक्तियों का चित्रण।
(3) सामाजिक रीति-रिवाजों का चित्रण।
(4) आर्थिक विषमता का चित्रण ।
(5) धार्मिक अंध विश्वासों का चित्रण।
(6) भारत की गरिमामय नारी का चित्रण।

पुरुष प्रधान समाज में नारी को चाहे देवी कहकर पुकारा जाता हो परन्तु आज भी वह सम्पत्ति, वस्तु या भोग्या के रूप में है। भारतीय समाज में पक्षी, घोड़े, पशुओं की तरह पुरुष

एक स्त्री को भी पालता है। उसके मन शरीर पर अपना अधिकार जताता है। 'बिट्टो' सबिया, भाभी, लछमा ये सभी पात्र पुरुषों द्वारा प्रताड़ित एवं उत्पीड़ित पात्र हैं।

समाज के साथ, समाज में ही रहकर जीवन संघर्ष में पिसनेवाले व्यक्तियों का चित्रण इसमें हैं। जो जो चरित्र संघर्ष रत है, उसका संघर्ष सचमुच प्राणलेवा है। इनमें अलोपी, घीसा, लछमा,बिट्टो, रधिया है।

'अतीत के चलचित्र' में चित्रित चरित्रों के दुःख बढ़ाने के लिए सामाजिक रिति-रिवाजों का भी हाथ है। भाभी, बिट्टो, बालिका वधू में चित्रित चरित्र ऐसे हैं जो सामाजिक रूढ़ियों के कारण नारकीय पीड़ा भोगते हैं। भाभी का अपराध केवल इतना है कि वह विधवा है। उसकी उमंगें, बाल्य,चंचलता, मनोहारिता, सुकुमारता सब वैधव्य में झुलस गई हैं। 'बालिका वधु' में इन्हीं रीति-रिवाजों का प्रभाव दिखाई देता है।

आर्थिक विषमता तो सभी समस्याओं की जड़ में है। हमारा शिष्ट, सभ्य, धनवान कहलाने वाला समाज शोषित, पीड़ित और आर्थिक दृष्टि से विपन्न लोगों के साथ किस पाशविकता से व्यवहार करता है?'सबिया'केवल निर्धन थी, परन्तु विचार, आचरण एवं विवेक में किसी कुलीन स्त्री से क्या कम थी?

महादेवी जी ने अपने रेखाचित्रों में समाज का अत्यंत सूक्ष्म और यथार्थ चित्रण किया है।

अतीत के चलचित्र संस्मरणात्मकता एवं कथनात्मकता

महादेवी जी ने अतीत के चलचित्र में जो चित्र अंकित किए हैं वे संस्मरणों से निकाले हैं। महादेवी के किस चरित्र विशेष के साथ ही स्मृतियाँ एक -एक करके निकलने लगती हैं। उनके संस्मरण रोचक तो हैं ही परन्तु विश्वसनीय भी है। लगभग प्रत्येक चरित्र के साथ उनका कहीं ना कहीं व्यक्तिगत संबंध और संदर्भ रहा है। अनुभव की सच्चाई हर कहीं दिखाई देती है। पाठक इस पर सहज विश्वास कर सकता है। महादेवी की वर्णन शैली अद्भुत है वह संस्मरणों का एक लंबा क्रम लगाकर चरित्र का जीवन पट ही हमारे सामने रख देती है।

महादेवी के रेखाचित्र हैं तो संस्मरण परन्तु प्रत्येक में कहीं ना कहीं कहानी-तत्व तो दिखाई पड़ता है। परन्तु उनके संस्मरण और कहानी तत्व इतने घुलमिल गए हैं कि उनका पृथक अस्तित्व नहीं दिखाई देता। परन्तु कथातत्व होने के बावजूद ये संस्मरण ही हैं। महादेवी अतीत और वर्तमान के धरातल पर चरित्रों को चित्रित तो करती ही है परन्तु कभी-कभी भविष्य की चिंता के रूप में भविष्य में भी चिंतन करती है। कभी-कभी उनकी लेखनी अज्ञातता की ओर भी उठ जाती है। अतः उनकी शैली तो संस्मरणात्मक है परन्तु कथा तत्व भी उनमें सशक्त है।

अतीत के चलचित्र- भाषा शैली

रेखाचित्रों में यद्यपि संस्मरणों का क्रमबद्ध लेखा है तो भी वह कथा-साहित्य का ही एक अंग है। इसलिए भाषा के गुण इसमें देखे जा सकते हैं- शब्द शक्ति, अलंकार, मुहावरे, कहावते, भाषा के प्रसंगानुकूल परिवर्तित होते हुए विविध रूप आदि कथा साहित्य की भाषा की सम्पूर्ण विशेषताएँ रेखाचित्र में भी देखी जा सकती है।

अतीत के चल चित्र के आधार पर महादेवी जी की भाषा की निम्नलिखित विशेषताएँ देख सकते हैं---

संस्मरणों के वर्णन में प्रयुक्त भाषा ----

(1) सरल स्वाभाविक, बोलचाल की भाषा।
(2) अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा।
(3) गंभीर चिंतन प्रधान भाषा ।

संवादों में प्रयुक्त

(1) साधारण बोलचाल की भाषा ।
(2) ग्रामीण अंचल की अवधी भाषा ।

इसके अतिरिक्त महादेवी जी की भाषा सरलता रोचकता और प्रवहमानता है। उनकी भाषा के कारण तो उनके द्वारा वर्णित चरित्र तो चित्र के रूप में उभर आते हैं, चित्रात्मक भाषा उनकी विशेषता है। उसके साथ ही महादेवी जी की भाषा प्रसंगानुकूल एवं व्यंग्य पूर्ण भी है।

उनकी भाषा में (1) संवादात्मक शैली (2) वर्णनात्मक शैली एवं (3) विवेचनात्मक शैली के दर्शन होते हैं।

भाषा की इन विशेषताओं को देखते हुए कहना चाहिए कि महादेवी जी की भाषा शैली अत्यंत उत्कृष्ट सुघड़,कलात्मक,प्रवाह पूर्ण है। महत्वपूर्ण बात यह है कि उनका प्रत्येक वाक्य संवेदना से परिपूर्ण है।

हिंदी रेखाचित्र के विकास में पद्मसिंह शर्मा, महाकवि अबकर, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, अंबिकाप्रसाद वाजपेयी, महादेवी वर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी, शिवपूजन सहाय, विनोद शंकर व्यास, उदय शंकर भट्ट, शांतिप्रिय द्विवेदी, राहुल सांकृत्यायन, चंद्रगुप्त ,विद्यालंकार, माखन लाल चतुर्वेदी आदि रचनाकारों ने सहयोग दिया है।

महादेवी जी के रेखाचित्रों का स्वरूप, उसकी लोकप्रियता, उसकी विषय वस्तु, अनुभवजन्यता आदि को देखते हुए लगता है हिंदी जगत में सफल रेखाचित्रों का प्रणयन सर्व प्रथम महादेवी जी के रेखाचित्रों द्वारा हुआ है।

अंत में अतीत के चल चित्र की सभी विशेषताओं को देखने परखने के बाद यही बात सत्य लगती है कि 'अतीत के चलचित्र' हिन्दी गद्य की एक अप्रतिम रचना है। इतने दिनों बाद आज भी संवेदना के वे धरातल अछूते और अपूर्व हैं, जिनकी सृष्टि इन रेखाचित्रों द्वारा हुई थी। मानवीय सहानुभूति और संवेगों की गहनता के लिए इन्हें चिरकाल तक हिंदी साहित्य का शीर्षस्थ पद प्राप्त रहेगा ।

*****

प्रश्न मंजुषा
विपात्र-

दीर्घोत्तरी प्रश्न-

१. 'विपात्र' उपन्यास आधुनिक कालीन उपन्यासों में से एक नई तथा विशिष्ट शैली का उपन्यास है-स्पष्ट कीजिए ।

२. 'विपात्र' उपन्यास मनुष्य का अकेलापन, अजनबीपन तथा टूटते हुए जीवन मूल्यों का दस्तावेज है-पठित उपन्यास 'विपात्र' के आधार पर चर्चा कीजिए ।

३. 'विपात्र' उपन्यास में महानगरीय जीवन की व्यथा और वेदना का लेखा-जोखा है । उपन्यास के चरित्रों के आधार पर स्पष्ट कीजिए ।

४. 'विपात्र' उपन्यास लेखक या निवेदक द्वारा कहीं गई वर्तमान युग की त्रासदपूर्ण कहानी है - उपन्यास के आधार पर स्पष्ट कीजिए ।

५. 'विपात्र' उपन्यास एक अकेला व्यक्तित्व तथा सामाजिक परिवेश की अनंत समस्याएँ और कठिननाइयाँ इनमें छिड़ा हुआ साक्षात् युद्ध है " उपन्यास के आधार पर चर्चा कीजिए ।

६. 'विपात्र' उपन्यास, अपने आप में अनूठा और परंपरा से हटकर लिखा गया उपन्यास है - स्पष्ट कीजिए ।

७. 'विपात्र' उपन्यास की समस्याओं को स्पष्ट करके लेखक के मनुष्य के अकेलेपन के बारे में विचार स्पष्ट कीजिए।

८. 'विपात्र' उपन्यास में जीवन की विसंगतियों का खुला चित्रण है- स्पष्ट कीजिए।

९. 'विपात्र' उपन्यास आधुनिक मानव का दर्द तथा अधूरेपन की गाथा है- उपन्यास के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

१०. 'विपात्र' उपन्यास व्यक्तित्व तथा अस्तित्व की खोज है -स्पष्ट कीजिए।

११. उपन्यास कला तत्वों के आधार पर 'विपात्र, की समीक्षा कीजिए ।

लघुत्तरी प्रश्नः-

(1) 'विपात्र' उपन्यास के शीर्षक की सार्थकता को स्पष्ट कीजिए।

(2) मुक्तिबोध की उपन्यास कला के बारे में जानकारी दीजिए।

(3) राव साहब के व्यक्तित्व की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

(4) वेदना एवं वासना में लेखक ने कौन सा अंतर पाया है ?

(5) बॉस के प्रति भनावत के विचार क्या थे ?

(6) लेखक ने जगत् और राव साहब के व्यक्तित्व के बीच कौन सा अंतर देखा?

(7) लेखक तथा जगत के जीवन में क्या अंतर था?

(8) भनावत के चरित्र का उपन्यास में क्या महत्व है?

(9) जगत के मन में राव साहब के बारे में किस प्रकार की गुत्थी थीं?

(10) पढ़े लिखे लोगों के बारे में लेखक और जगत की क्या अपेक्षाएँ थीं?

(11) 'विपात्र' उपन्यास में वर्णित विद्या केन्द्र के बारे में जानकारी दीजिए ।

(12) 'विपात्र' उपन्यास में लेखक ने स्वतंत्रता के बारे में कौन से विचार प्रस्तुत किए हैं?

(13) लेखक अपने दूरस्थ मित्रों को क्या कहना चाहते हैं ?

(14) लेखक के समाज के निम्न वर्ग के प्रति विचार क्या हैं?

(15) बॉस के दरबार की विशेषताएँ बताइये।

(16) बॉस के दरबार के विषय में विद्या केन्द्र के सदस्यों के मन में कौन से भाव थे?

(17) इच्छा न होते हुए भी सदस्य बॉस के दरबार में क्यों जाते थे?

(18) बॉस दरबार क्यों लगाया करते थे?

(19) बॉस का अपने सहयोगियों के साथ बर्ताव कैसा था?

(20) भनावत किस प्रकार का व्यक्ति है?

(21) भनावत के चरित्र की कौन सी बातें लेखक को अच्छी लगती नहीं?

(22) 'विपात्र' उपन्यास में प्रकृति चित्रण को कहाँ तक स्थान है?

(23) उच्च शिक्षित होने के बावजूद भी जगत जीवन में असफल क्यों रहा?

(24) 'विपात्र' की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

(25) मुक्तिबोध के काव्यात्मकता के दर्शन उपन्यास में किस तरह से हो जाते हैं?

टिप्पणी लिखिए ।

1. 'विपात्र' का शीर्षक
2. 'विपात्र' की कथा वस्तु
3. 'विपात्र' की पात्र योजना
4. 'विपात्र' उपन्यास की भाषा शैली
5. 'विपात्र' उपन्यास में प्रकृति-चित्रण
6. लेखक निवेदक के रूप में
7. जगत सिंह
8. भनावत
9. 'विपात्र' में बॉस का दरबार
10. 'विपात्र' में व्यक्तित्व एवं स्वतंत्रता के बारे में लेखक के विचार
11. 'विपात्र' उपन्यास में लेखक के समाज के निम्नवर्ग के प्रति विचार

12. 'विपात्र' उपन्यास का उद्देश्य

13. 'विपात्र' उपन्यास में दिखाई देने वाली लेखक की चिंतन धारा ।

ससंदर्भ व्याख्या कीजिए।

(1) जाने क्यों मुझे लगा कि वे फूल उनके हाथों में शोभा नहीं देते क्योंकि वे हाथ उन फूलों के योग्य नहीं।

(2) नाग को छोड़ देते हो, और कुत्तों को मार डालते हो?

(3) कुत्ते जनता है, नाग तो देवता है, अधिकारी हैं।

(4) ज्ञान उनके लेखे अगर मोक्ष का साधन नहीं है, मुक्ति का शोषण नहीं है, तो निस्संदेह वह किसी मौलिक लक्ष्य की पूर्ति कहीं एक साधन होना चाहिए।

(5) राव साहब इस वक्त जिस सीढ़ी पर है उसकी अगली सीढ़ी का नक्शा बराबर ध्यान में रखते थे।

(6) मानसिक रूप से वह कॅलिफोर्निया या हॉर्वर्ड युनिवर्सिटियों के इलाकें में घूमता। अमरिकी साहित्य में वह सचमुच रम चुका था, उसी तरह जैसे शक्कर में गुलाब की पंखुरियाँ, जिनसे गुलकंद बनता है।

(7) सिर्फ सचाई आदमी को कुछ नहीं दे पाती, सचाई को सामने लाने के लिए भी जोर और ताकत की जरूरत होती है।

(8) ऐसी सचाई जो आदमी में जोर पैदा नहीं कर पाती, वह सिर्फ जानकारी बनकर रह जाती है।

(9) ऐसे वे लोग, अपने इस अवहेलना के भाव को हजार यत्न करने पर भी नहीं छिपा सकते, उसके प्रति जिसके माथे पर असफलता की धूल लगी हुई है।

(10) व्यक्तियों की टकराहट बहुत बुरी होती है। जहर पचने से फैलता है, कीचड उछालने से । उछालने वाले के और झेलने वाले के दोनों के चेहरे बदसूरत बन जाते हैं।

(11) मानव संबंध उलझ इसलिए जाते हैं कि हम गलत जगह झगड़ा कर लेते हैं और गलत जगह झुक जाते हैं।

(12) और हम ताज्जुब करने लगे कि आखिर ये ऊँची डिग्रियों वाले लोग जिन्होंने बड़ी उपाधियाँ प्राप्त की हैं इतने जड़ और मूर्ख क्यों हैं?

(13) वह दो साल के शिशु की उठरी थी जिसके सारे बदन पर सलवटें पड़ी हुई थी और उसके सलवट भरे बालमुख पर वेदना की चीख निःशब्द होकर जड़ हो उठी थी। वह बड़ी ठठरी अपने हडियल हाथों से शिशु ठठरी को खिला रही थी ।

(14) यह किस्सा है। मनुष्य का चरित्र उसकी संगत से पहचाना जाता है। संभव है हमारे बॉस की भी इसी तरह की प्रेमिकाएँ रही हो।

(15) वे प्रेम करते थे। और प्रेम की तानाशाही भी उनमें थी जो शासक वर्ग तानाशाही मनोवृत्ति से घुल-मिलकर इतनी एक प्राण हो गयी थी कि यह कहना कठिन था कि वह शासक वर्ग की तानाशाही है, या प्रेम का अधिनायकत्व।

(16) दूसरी तरफ उस दरबार का एक सदस्य दूसरे सदस्य से सिर्फ ऊपरी तौर पर मिलता था, क्योंकि हम सब लोग बेढंगे, बेज़ोड़, और बेमेल आदमी थे। जिदंगी कैसी जी जाए, सब लोगों के अलग-अलग ख्याल थे।

(17) कहा जाता है कि हम में 'व्यक्ति स्वातंत्र्य' है। लेकिन यह मान्यता झूठ है। हमें खरीदने और बेचने को, खरीदे जाने की और बेचे जाने की आज़ादी है। हमने अपना व्यक्ति स्वातंत्र्य बेच दिया है" एक हद तक तो -------

(18) वास्तविक यह है कि अलग-अलग लोग, अलग-अलग ढंग से पूँछ हिलाते हैं। मेरा भी पूँछ हिलाने का अपना तरीका है। मैं पहले अपने पंजे मालिक की गोद में रख दूँगा और फिर दाँत निकाल कर मालिक के मुँह की तरफ देखते हुए पूँछ हिलाऊँगा ।

(19) एकांत मेरा रक्षक है। वह मुझे त्राण देता है और बहते हुए खून को अपने फावे से पोंछ देता है।

(20) और मैंने एकाएक अपनी दिल की घड़कन सुनी कि निर्बल होकर संत और ------ बनने के बजाय सबल होकर सृजन शक्ति को तेज़ और तेज़ करूँगा भले ही लोग मुझे बदनाम करें।

(21) तार टूटता है, हाथों में टुकड़े रह जाते हैं। दो टुकड़ों के बीच अंतराल हो जाता है, दूरी होती है, सूना होता है। सूनापन अजीब होता है। बदनसीब होता है।

(22) तुम जितना ऊपर चढ़ते हो, अपने सगों से दूर क्यों हटते जाते हो? हर अगली सीढ़ी की ऊँचाई पर खड़े होकर तुम नीचली सीढ़ी को हीन क्यों समझने लगते हो?

(23) सवाल जिंदगी में होने वाली गलतियों का नहीं है--- सवाल उन फासलों का है-- जिन्हें बीचों-बीच रखकर गलती नहीं सुधारी जा सकती।

(24) एक भाव है- जिसका नाम है नपुसंक क्रोध। इस भाव का अनुभव हर उस आदमी को होता है जिसने अपने जीवन की रक्षा के लिए अपनी स्वतंत्रता बेच खायी है।

(25) सम्पूर्णतः आत्मनिर्भर व्यक्ति सम्पूर्ण शून्य होता है। अध्यात्मिक साधना का ध्येय भले ही सम्पूर्ण शून्य की प्राप्ति हो कला का ध्येय तो यह नहीं है।

२ आधुनिक हिंदी कहानी

दीर्घोत्तरी प्रश्न

(1) 'रसप्रिया' कहानी के कथानक को संक्षेप में स्पष्ट करते हुए उसकी भाषिक विशेषता पर प्रकाश डालिए।

(2) पंचकौडी के पूर्व जीवन की कथा क्या है? उसका आज का जीवन कैसा है?

(3) मोहना और पंचकौड़ी का परस्पर संबंध कैसा था? मोहना के बारे में पंचकौड़ी के मन में कौन सी भावनाएँ थीं ?

(4) मोहना की माँ मोहना को पंचकौडी मिरदंगिया के बारे में क्या बताती है?

(5) पंचकौड़ी की ऊँगली टेढी क्यों हो गई थी? रमपतिया के इस संदर्भ में क्या विचार थे?

(6) छोटे महाराज का जीवन किस प्रकार बीता था?

(7) छोटे महाराज ने अपने जीवन में उदर निर्वाह करने के लिए किस प्रकार संघर्ष किया?

(8) छोटे महाराज को तोता किस प्रकार प्राप्त हुआ था? वे तोते को क्या पढ़ा रहे थे, क्यों?

(9) तोते के साथ छोटे महाराज की भावनाएँ क्या थीं? वे इसकी देखभाल किस प्रकार करते थे?

(10) छोटे महाराज ने अपने तोते को शिवराज के हाथों क्यों सौंपा? वे उसे वापस घर क्यों लेकर आए?

(11) अपने तोते की दुर्दशा को देखकर छोटे महाराज की क्या स्थिति हुई?

(12) 'एक शुरूवात' कहानी में चित्रित सागर यात्रा का वर्णन कीजिए।

(13) समुद्र यात्रा में डेक पर मिले हुए व्यक्ति के बारे में लेखक ने क्या जानकारी दी है?

(14) डेक पर मिले अजनबी यात्री ने भारत, अपना देश एवं यात्रियों के संदर्भ में कौन से विचार व्यक्त किए?

(15) लेखक ने समुद्र पर चलने वाले जहाज एवं अपने आस-पास के वातावरण का वर्णन कैसे किया है?

(16) लेखक ने अपनी यात्रा एवं अनुभव के संदर्भ में कौन-से विचार स्पष्ट किए हैं?

(17) लेखक यूरोप के बारे में क्या सोचते हैं? बियना के संदर्भ में लेखक का भूख के बारे में क्या अनुभव है?

(18) 'दायरा' कहानी के हरि का चरित्र चित्रण कीजिए।

(19) 'दायरा' कहानी की समस्या क्या है? सविस्तार लिखिए।

(20) 'दायरा' कहानी में लेखक मध्यवर्गीय परिवार का वर्णन करके क्या बताना चाहते हैं?

(21) हरि और उसका परिवार दिन भर लोगों की मेहमाननवाजी किस प्रकार करता रहा?

(22) 'दायरा' कहानी के द्वारा लेखक ने मध्यवर्गीय परिवार की मानसिकता एवं आर्थिक दशा पर किस प्रकार प्रकाश डाला है?

(23) 'नन्हों' का चरित्र चित्रण कीजिए।

(24) नन्हों का विवाह किस प्रकार हुआ था? नन्हों अपने विवाह से खुश क्यों नहीं थी ?

(25) 'नन्हों' कहानी में चित्रित मिसरीलाल के संदर्भ में जानकारी दीजिए।

(26) रामसुभग अपने आप को अपराधी क्यों मान रहा था? उसके नन्हों के संदर्भ में क्या विचार थे?

(27) पति की मृत्यु के उपरांत नन्हों का जीवन किस प्रकार बीतने लगा?

(28) रामसुभग से नन्हों क्यों क्रोधित हुई? उसका परिणाम क्या हुआ?

(29) रामसुभग पाँच साल के बाद लौट आया तो नन्हों के साथ उसका व्यवहार कैसा था? वह मन में क्या विचार करता था?

(30) 'नन्हों' कहानी के अंत पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

(31) 'नन्हों' कहानी का वातावरण, भाषा एवं प्रतीक विधान को स्पष्ट कीजिए।

(32) 'अकेली' कहानी की कथावस्तु संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

(33) सोमा बुआ का चरित्र चित्रण कीजिए।

(34) सोमा बुआ के जीवन की करूण कथा को स्पष्ट कीजिए।

(35) समधि के घर के ब्याह के संदर्भ में सोमा बुआ पर क्या प्रतिक्रिया हुई।

(36) सोमा बुआ अंत में निराश क्यों हो गई।

(37) सोमा बुआ के पति के चरित्र की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।

(38) सोमा बुआ अपने पति के कारण किस प्रकार दु:खी थी?

(39) अपने आँगन के अमरूद के पेड़ के संदर्भ में लेखक की भावनाएँ कौनसी हैं?

(40) लेखक ने अपने आँगन के अमरूद के पेड़ के संदर्भ में कौन से विचार व्यक्त किए हैं?

(41) अमरूद का पेड़ लेखक को किन-किन बातों का प्रतीक लगता है?

(42) लेखक के आँगन का अमरूद का पेड़ क्यों काटा गया? उस पर लेखक की क्या प्रतिक्रिया थी?

(43) 'पेपर वेट' कहानी में राजनीति का भ्रष्ट चित्रण किस प्रकार दिखाई देता है?

(44) मृणाल बाबू की स्थिति शिवनाथ बाबू के सामने क्या थी?

(45) शिवनाथ बाबु के व्यवहार से उनका राजनीतिक चरित्र किस प्रकार खुलता गया?

(46) 'पेपर वेट' शीर्षक की उचितता को स्पष्ट कीजिए ।

(47) मृणाल बाबु किस तरह राजनीतिक षड्यंत्र के शिकार हुए?

(48) मृणाल बाबु के चरित्र की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

(49) 'पेपर वेट' कहानी के अंत पर अपने विचार स्पष्ट कीजिए।

(50) 'सुख' कहानी की कथावस्तु को अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।

(51) 'सुख' कहानी की रचना के पीछे कहानीकार का क्या उद्देश्य है?

(52) भोला बाबू जोर-जोर से एवं दु:ख से क्यों रोने लगे थे?

(53) भोला बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(54) 'सुख' कहानी की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

(55) 'भेड़िए' कहानी की कथावस्तु क्या है?

(56) 'भेड़िए' कहानी में चित्रित आदिवासी जनजीवन की स्थिति पर प्रकाश डालिए।

(57) 'भेड़िए' कहानी के भेडिए कौन हैं?

(58) 'भेड़िए' कहानी में चित्रित अकाल एवं उसके परिणामों को भोगने वाले परिवारों का वर्णन कीजिए।

(59) 'भेड़िए' कहानी में चित्रित त्रासदी को स्पष्ट कीजिए ।

टिप्पणियाँ लिखिए -

(1) 'रस प्रिया' कहानी की आँचलिक विशेषताएँ।

(2) 'रस प्रिया' कहानी का शीर्षक।

(3) 'रस प्रिया' कहानी की भाषा ।

(4) 'रस प्रिया' कहानी का मोहना ।

(5) 'रस प्रिया' कहानी की रमपतिया।

(6) 'कस्बे का आदमी' का शीर्षक।

(7) छोटे महाराज का जीवन।

(8) छोटे महाराज एवं उनका तोता ।

(9) 'एक शुरूवात' का शीर्षक।

(10) 'एक शुरूवात' कहानी में जल यात्रा ।

(11) 'एक शुरूवात' कहानी लेखक के स्वयं के बारे में विचार।

(12) 'दायरा' शीर्षक की सार्थकता ।

(13) 'दायरा' कहानी में चित्रित परिवार।

(14) 'दायरा' कहानी की विशेषताएँ ।

(15) 'नन्हों' कहानी की भाषा शैली।

(16) 'नन्हों' के चरित्र की विशेषताएँ।

(17) 'नन्हों' कहानी का मिसरीलाल।

(18) 'नन्हों' कहानी का अंत।

(19) 'अकेली' कहानी की सोमाबुआ।

(20) 'अकेली ' कहानी का कथ्य ।

(21) 'अमरूद का पेड़'- कहानी की विशेषता।

(22) आस्था का प्रतीक- अमरूद का पेड़।

(23) अमरूद का पेड़ एवं लेखक की माँ।

(24) 'पेपर वेट' शीर्षक की सार्थकता।

(25) 'पेपर वेट' कहानी में रजनीति का स्वरूप।

(26) मृणाल बाबू का चरित्र।

(27) 'सुख' शीर्षक की सार्थकता।

(28) सुख कहानी के भोलाबाबू।

(29) 'भेड़िए' की प्रतीकात्मकता।

(30) 'भेड़िए' कहानी की सुकरी ।

(31) 'भेड़िए' कहानी का वातावरण।

(32) 'भेड़िए' कहानी में चित्रित परिवार ।

संसदर्भ व्याख्या कीजिए।

१. घूल में पडे कीमती पत्थर को देखकर जौहरी की आँखों में एक नई झलक झिलमिला गई अपरूप रूप ।

२. तुमसे मैं भीख माँगता हूँ, मिरदंग बजाकर पदावली गाकर लोगों को रिझाकर पेट पालता हूँ ।

३. ये एक कपडा है सिलक का, कही शादी में मिला था। मेरे तो भला क्या काम आएगा, तुम अपने काम में लाना ।

४. कोई भी उसे नहीं देखता। हर साल हजारों टूरिस्ट आते हैं, आर्ट गॅलरीज, म्युजियम्स, पुराने चर्च और कॅथड्रल, वह सब कुछ जो बीत गया है, उन्हें आकर्षित करता है।

५. भैया, मैं साफ बात कहने का आदी हूँ । मैं जिस संकट से गुजर रहा हूँ, भगवान ही जानता है। मैंने किसी तरह आपके लिए पाँच सौ का इंतजाम कर लिया है।

६. अरे, मैं तो कहूँ कि घरवालों को कैसा बुलावा ? ये लोग तो मुझे अपनी माँ से कम नहीं समझते।

७ न आकाश से पानी बरसता है, न जमीन से बीज फूटता है। बीज नहीं उगेगा तो अन्न कहाँ से पैदा होगा? खाएगा क्या ?

८. मृणाल बाबू, आपको मैं राजनीतिज्ञ मान बैठा था, लेकिन आप तो भावुक बालक निकले, मिठाई पाकर हँस देते हैं, जरा सी चोट पर रो देते हैं।

९. माँ से विराट मातृत्व है और वह भविष्य के लिए प्रतीक्षा कर सकती है, उसी तरह जैसे हर माँ अपनी संतान के लिए दीर्घ प्रतीक्षा किया करती है और फिर भी उसको अपना स्वप्न अधूरा लगाता है।

१०. मुझे क्या बावली समझ रखा है, जो बिना बुलाये चली जाऊँगी?

४ निंबंध -प्रिया नीलकंठी

दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. कुबेरनाथ राय का 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह- ललित निबंध की अवधारणा को परिपुष्ट करने वाला निबंध संग्रह है- स्पष्ट कीजिए।

२. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि कुबेरनाथ राय का निबंध लेखन लालित्य की पहचान है।

३. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह के आधार पर कुबेरनाथ राय के निबंधों की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

४. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में परम्परा एवं आधुनिकता का समवाय दिखाई देता है- पठित निबंधों के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

५. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह के हर निबंध के अंत में मानवतावादी चिंतन ही परिलक्षित होता है" उक्त कथन को पठित निबंधों के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

६. ललित निबंधों की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए ।

३. नाटक- ध्रुव स्वामिनी- लेखक जयशंकर प्रसाद

१ हिंदी नाटक के विकास को स्पष्ट करते हुए नाटक के तत्वों के संदर्भ में विवेचन कीजिए।

२. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक के आधार पर प्रसाद जी के नाटकों की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।

३. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक की कथावस्तु संक्षेप में स्पष्ट करते हुए, उसमें इतिहास एवं कल्पना के योग को स्पष्ट कीजिए।

४. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक में चित्रित समस्याओं पर प्रकाश डालिए।

५. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक की पात्र योजना पर सविस्तार लिखिए।

६. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक में नारी चरित्रों का मार्मिक अंकन मिलता है। " नाटक के आधार पर उक्त विधान की चर्चा कीजिए।

७. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक का नायक कौन? रामगुप्त या चंद्रगुप्त ? चर्चा कीजिए।

८. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक की मूल समस्या पर सविस्तार प्रकाश डालिए।

९. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक के नारी चरित्रों की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

टिप्पणियाँ लिखिए ।

१. "ध्रुव स्वामिनी"शीर्षक।

२. "ध्रुव स्वामिनी" नाटक की भाषाशैली।

३. "ध्रुव स्वामिनी" का उद्देश्य

४. "ध्रुव स्वामिनी" इतिहास एवं कल्पना का मिलाप।

५. "ध्रुव स्वामिनी" में गीत योजना।

६. चंद्रगुप्त का चरित्र चित्रण

७. रामगुप्त का चरित्र चित्रण

८. "ध्रुव स्वामिनी" में चरित्र योजना।

९. "ध्रुव स्वामिनी" का चरित्र चित्रण ।

१०. शिखर स्वामी के चरित्र की योजना ।

११. "ध्रुव स्वामिनी" में राजनीतिक दशा का चित्रण

संसदर्भ व्याख्या कीजिए।

१. सौभाग्य और दुर्भाग्य मनुष्य की दुर्बलता के नाम हैं। मैं तो पुरुषार्थ को ही सब का नियामक समझता हूँ। पुरुषार्थ ही सौभाग्य को खींच लाता है।

२. राजनीति ? राजनीति ही मनुष्यों के लिए सब कुछ नहीं है। राजनीति के पीछे नीति से ही हाथ न धो बैठो, जिसका विश्व मानव के साथ व्यापक संबंध हैं।

३. मैं तो दर्प से युक्त तुम्हारी महत्वमयी पुरुष मूर्ति की पुजारिन थी, जिसमें पृथ्वी पर अपने पैरों से खड़े रहने की दृढ़ता थी। इस स्वार्थ मलिन कलुष से भरी मूर्ति से मेरा परिचय नहीं ।

४. तीखे वचनों से मर्माहत करके भी आज कोई मुझे इस मृत्युपथ से विमुख नहीं कर सकता। मैं केवल अपना कर्तव्य करूँ इसी में मुझे सुख है।

५. रोगजर्जर शरीर पर अलंकारों का सजावट मलीनता और कलुष की ढेरी पर बाहरी कुंकुम केसर का लेप गौरव नहीं बढ़ाता ।

६. तुम सब पाखंडी हो। विद्रोही हो। मैं अपने न्यायपूर्ण अधिकार को तुम्हारे जैसे कुत्तों के भौंकने पर न छोड़ दूँगा ।

७. भला में क्या कर सकूँगी ? मैं तो अपने ही प्राणों का मुल्य नहीं समझ पाती। मुझ पर राजा का कितना अनुग्रह है, यह भी मैं आज तक न जान सकी।

८. क्षमा हो महाराज। दूत तो अवध्य होता है, इसलिए उसका संदेश सुनाना ही पड़ा ।

९. आह, कितनी कठोरता है ! मनुष्य के ह्रदय में देवता को हटाकर राक्षस कहाँ से घुस आता है?

१०. भयानक समस्या है। मुर्खों ने स्वार्थ के लिए साम्राज्य के गौरव का सर्वनाश करने का निश्चय कर लिया है। सच है, वीरता जब भागती है, तब उसके पैरों से राजनीतिक छलछंद की धूल उड़ती है।

११. कुछ नहीं मैं केवल यहीं कहना चाहती हूँ कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपनी पशुसंपत्ति समझकर उन पर अत्याचार करने का अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता।

१२. मेरी रक्षा करो, मेरे और गौरव की रक्षा करो। राजा आज मैं शरण की प्रार्थिनी हूँ ।

१३. मैं उपहार में देने की वस्तु शीतल मणि नहीं हूँ । मुझ में रक्त की तरल लालिमा है। मेरा ह्रदय उष्ण है और उसमें आत्मसम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मैं ही करूँगी ।

१४. यह नहीं हो सकता महादेवी ! जिस मर्यादा के लिए जिस महत्व को स्थिर रखने के लिए, मैने राजदंड ग्रहण न करके अपना मिला हुआ अधिकार छोड दिया, उसका यह अपमान।

१५. अनार्य, निष्ठुर। मुझे कलंक कालिमा के कारागार में बंद कर, मर्म वाक्य के धुएँ से दम घोंटकर मार डालने की आशा न करो । आज मेरी असहायता मुझे अमृत पिलाकर मेरा निर्लज्ज जीवन बढ़ाने के लिए तत्पर है।

टिप्पणियाँ लिखिए।

१. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में लोकतत्व ।

२. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह का भाषिक सौंदर्य ।

३. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में भारतीयता ।

४. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में लोक संस्कृति।

५. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रहों के निबंधों का शिल्प विधान ।

६. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में जीवन दर्शन ।

७. 'प्रिया नीलकंठी' निबंध संग्रह में लालित्य एवं संवेदनाएँ।

८. 'गूलर का फूल' निबंध की विशेषता ।

संसदर्भ व्याख्या कीजिए

१. चराचर रिझाने से क्या लाभ ? जिन्हें वास्तव में रिझाना है वे तो अंतर्मन के सौंदर्य को देखते हैं। औरों से क्या लाभ ?

२. पत्तियों का झरना धरती के सौंदर्य की करूणतम अवस्था है। करूणा में एक उदास सौंदर्य की उपलब्धि एक सर्व साधारण अनुभव है।

३. परंतु त्रेता हमारे अंदर मरा नहीं है, जीवित है, यह कम संतोष की बात नहीं। हमारे अंदर का 'त्रेता भाव' शक्ति का अतुल भंडार है।

४. परंतु मनुष्य की आदत ही नहीं कि यह किसी भी तरह का, चाहे वह भाव जगत हो, अर्थ जगत् हो या राजनीति हो- सह अस्तित्व बर्दाशत करें। यही तथ्य है।

५. मनुष्य ने भाव विकास की लंबी प्रक्रिया में संस्कार एवं पूर्वग्रहों की रेखाओं द्वारा जितने निर्गुण नक्शे तैयार किये हैं उन सब का विषय या तो निसर्ग है, नहीं, तो मनुष्य ।

६. जब-जब मैं शमी के बारे में सोचता हूँ तो लगता है कि यह आत्मतेज धारण करने वाली हमारी जातीय संस्कृति का प्रतीक है। यह संयोग की बात नहीं कि कालिदास ने शकुंतला की तुलना अग्निगर्भ शमी से की है।

७. परंतु जो लोग चुनाव करने की क्षमता नहीं रखते, वे इन संस्कारों को गर्भ नाल संयुक्त रूप में ज्यों का त्यों व्यक्त करने के पक्षपाती हैं। यह तिरछा रास्ता 'शॉर्टकट' है।

८. यह सही है कि रवींद्रनाथ के गीत भात की हाँडी में कोई स्वाद जोड़ नहीं पाते और इस हिसाब से वे उपयोगी नहीं। पर क्या इसी से वे हल्के और मूल्यहीन हो जाते हैं?

९.

१०. हम भी जब इन बेड़ियों को तोड़ फेकेंगे तो सिर्फ इसलिए कि हमें नयी-नयी बेडियाँ चाहिए। यह और बात है वे नयी होंगी इसीलिए खूबसूरत लगेगी और हमारे पैरों में नये स्वरों से झनझनायेंगी ।

११. नहीं, यह अनादि चेहरा है- मेरा चेहरा है। मेरी भाषा है। यह भय की भाषा नहीं है।

५. रेखाचित्र संस्मरण अतीत के चलचित्र

दीर्घोत्तरी प्रश्न

१. रेखाचित्र एवं संस्मरण विधा का सामान्य परिचय दीजिए।

२. महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

३. 'अतीत के चलचित्र' में चित्रित पात्रों की विशेषताओं को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

४. "'अतीत के चलचित्र' में चित्रित चरित्र करूणा एवं वेदना का समुच्चय है" स्पष्ट कीजिए।

५. हिंदी रेखाचित्रों के विकास क्रम को स्पष्ट कीजिए।

६. हिंदी रेखाचित्र के विकास में महादेवी वर्मा का स्थान स्पष्ट कीजिए।

टिप्पणियाँ लिखिए।

१. 'अतीत के चलचित्र' की भाषा ।

२. 'अतती के चलचित्र' में चित्रित नारी -पात्र ।

३. 'रामा' का चरित्र चित्रण।

४. 'घीसा' पाठ की समीक्षा ।

५. 'सबिया' का चरित्र -चित्रण।

६. 'अंधा अलोपी' पाठ की समीक्षा।

७. बदलू का चरित्र चित्रण ।

८. बिंदा का चरित्र चित्रण ।

संसदर्भ व्याख्या अतीत के चलचित्र से

१) शैशव की स्मृतियों में एक विचित्रता है। जब हमारी भावप्रवणता गंभीर और प्रशांत होती है, तब अतीत की रेखाएँ कुहरे में से स्पष्ट होती हुई वस्तुओं के समान अनायासही स्पष्ट से स्पष्ट तर होने लगती है। (रामा)

२) वास्तव में जीवन सौंदर्य की आत्मा है, पर वह सामंजस्य की रेखाओं में जितनी मूर्तिमत्ता पाता है, उतनी विषमता में नहीं। जैसे जैसे हम बाह्य रूपों की विविधता में उलझते जाते हैं, वैसे वैसे उनके मूलगत जीवन को भूलते जाते हैं। (रामा)

३) घर के जब उजले मैले सहज कठिन कामों के कारण, मलिन रेखा जाल से गुंथी और अपनी शेष लाली को कहीं छिपा रखने का प्रयत्न–सा करती हुई कहीं कोमल कहीं कठोर हथेलियाँ, काली रेखाओं में ज़ड़े कांतिहीन नखों से कुछ भारी जान पडनेवाली पतली उँगलियाँ हाथों का बोझ सँभालने में भी असमर्थ सी। (विधवा भाभी)

४) जिसकी सुशीलता का उदाहरण देकर मेरे नटखटपन को रोका जाता था, वही बिंदा घर में चुपके–चुपके कौनसा नटखटपन करती रहती है, इसे बहुत प्रयत्न करके भी मैं न समझ पाती थी। (बिंदा)

५) दो पैंसों से आनेवाली खंजड़ी के ऊपर चढ़ी हुई झिल्ली के समान पतले चर्म से मढ़े और भीतर की हरी–हरी नसों की झलक देनेवाले उसके दुबले हाथ, पैर न जाने किसी अज्ञात भय से अवसन्न रहते थे।

६) वास्तव में सविया की जुगनू जैसी आँखोपर फैलती हुई, अंधेरी जैसी गंभीरता देखकर उस पर हँस उठना निष्ठुर जान पड़ता था और मौन रहना सहानुभूति हीन। (सबिया)

७) माँ के दुबले शरीर में सूखी लकड़ी की कठिनता न होकर हरी टहनी का लचीलापन रहता था, जो दुर्बलतासे अधिक जीवन का परिचय देता है। और बालिका के शरीर में नये पत्ते की चंचलता न होकर पाले से खिल न सकनेवाले बंधे किशतय कोरक का अवश हिलता – डुलता था। (सबिया)

८) समाज ने स्त्री मर्यादा का जो मूल्य निश्चित कर दिया है, केवल वही उसकी गुरुता का मानदंड नहीं। स्त्री की आत्मा में उसकी मर्यादा की जो सीमा अंकित रहती है, वह समाज के मूल्य में बहुत अधिक गुरू और निश्चित है, इसी से संसार भर का समर्थन पाकर जीवन का सौदा करनेवाली नारी के हृदय में भी सतीत्व जीवित रह सकता है और समाज भर के निषेध से घिरकर धर्म का व्यवसाय करनेवाली सती की सांसें भी तिल–तिल करके असती के निर्माण में लगी रह सकती है।

९) सामाजिक विकृति का बौद्धिक निरूपण मैंने अनेक बार किया है, पर जीवन की इस विभीषिका से यह मेरा यही पहला साक्षात् थात मेरे सुधार संबंधी दृष्टिकोण को लक्ष्य करके परिवार में प्राय: सभी ने कुछ निराश भाव से सिर हिलाकर मुझे यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया कि मेरी सात्विक कला इस लू का झोका न सह सकेगी।

१०) और तब अपने स्नेह में प्रगल्भ उस बालक के सिर पर हाथ रखकर मैं भावातिरेक से ही निश्चल ही रही।

११) इस वर्ग का जीवन खुली पुस्तक जैसा रहता है, अत: महान् ही नहीं तुच्छम् आवश्यकता के अवसर पर भी उसकी कथा आदि से अंत तक सुना देना सहज हो जाता है।